आर्य्यपथिक लेखराम

"परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते ।
सजातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम् ॥"

भर्तृहरिः ।

लेखक
स्वामी श्रद्धानन्द

॥ ओ३म् ॥

आर्य्यपथिक लेखराम



"परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते ।
स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम् ॥"

भर्तृहरि

लेखक

स्वामी श्रद्धानन्द

प्रकाशक

गोविन्दराम हासानन्द

वैदिक पुस्तकालय

१४९ काटन स्ट्रीट कलकत्ता

द्वितीयावृत्ति २०००

श्रीमद्दयानन्दाब्द १०१

विक्रमाब्द १९८२

मूल्य १।)

प्रकाशक—

गोविन्दराम हासानन्द

१४९, काटन स्ट्रीट,

कलकत्ता ।

मुद्रक—

पं० अंबिकाप्रसाद वाजपेयी

इण्डियन नेशनल प्रेस,

"स्वतन्त्र आफिस"

१५९ बी० मछुआबाजार स्ट्रीट,

कलकत्ता ।



श्री स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज ।

द्वितीय संस्करणकी भूमिका



आर्य-पथिक लेखरामको धर्म पर बलिदान हुए २० वर्ष व्यतीत हो गये। उनका जीवन वृत्तान्त छपे भी १० वर्ष हो लिये। इस बीचमें कितने ही आर्य-पथिक बने और काल चक्रमें पड़ कर चल बसे, परन्तु जो निराभिमान लेखरामके लेखोंमें था, जिस प्रकार धर्म सेवामें वह मग्न रहते थे और जो प्रभाव वह अपने कट्टर शत्रुओं तक पर डालनेमें कृतकार्य होते थे, उसका दूसरा एक दृष्टान्त नहीं दिखाई दिया।

यह सच है कि जिन ऐतिहासिक रत्नोंको, साहित्यके समुद्रमें गहरा गोता लगा कर पण्डित लेखरामने निकाला था वह आज कल आर्य्यसमाजके सभासदोंको साधारण दिखाई देते हैं, परन्तु जिस समय उनको लेखरामने प्रकाशित किया वह समय विचित्र था। एक लम्बे पुरुषके कन्धेपर चढ़कर एक बौनेके लिये यह कहना आसान है कि मैं उसकी दृष्टिसे भी आगे देख सकता हूं। यदि देव पिछे नर मूर्खको कन्धेसे उतार दे तो फिर उसकी नजर कहां तक दौड़ सकती है।

मुझे आशा थी कि जिन पुस्तकोंका सांचा आर्यपथिक बना गये थे उनकी पूर्त्तिके लिये कुछ अरबी फारसीके विद्वान आगे निकलेंगे परन्तु शोक है कि अबतक आर्य्यपथिकके ग्रन्थोंका पूरा हिन्दी अनुवाद भी छप कर प्रकाशित नहीं हुआ। परन्तु अब फिर आशा बंधती है कि जो लेखका काम लेखरामने आरम्भ किया था उसकी पूर्त्तिके लिये कुछ विद्वान अवश्य मैदानमें आयेंगे।

दिल्ली
५ मार्गशीर्ष सम्वत् १९८१ वि
(१० नवम्बर १९२४ ई०)

श्रद्धानन्द सन्यासी।

* ओ३म् *

प्रथम संस्करणकी प्रस्तावना



इस ग्रन्थका नाम मैं आख्यायिका रख नहीं सकता और न अपनेमें ग्रन्थ-कर्त्ता बननेकी योग्यता समझता हूं। आगेके पृष्ठोंमें पाठकोंके लिये भाषाके लालित्य तथा विचारोंके पांडित्यको खोजना एक निष्फल परिश्रम होगा। मैं शुष्क-ऐतिहासिक होनेका भी अभिमान नहीं कर सकता क्योंकि इस जीवनके साथ मेरा ज्वलन्त सम्बन्ध रह चुका है और जो घटनायें स्मरण करने पर, अब भी जागृत अवस्थामें मेरे सामने ज्योंकी त्यों खड़ी हो जाती हैं उनका वर्णन करते हुए तीव्रसे तीव्र तर्क भी परास्त हो जाता है।

इस लिए इस पुस्तकको एक पवित्र जीवनके चरणोंमें कृतज्ञता की भेंट-मात्र समझिये।

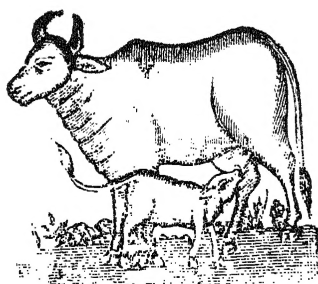
उपर्युक्त कृतज्ञताका ऋण चुकानेमें इतना विलम्ब हो गया था कि मुझे इस पुस्तकको बहुत ही अल्प समयमें समाप्त करना पड़ा। इस कारण न केवल यही कि बहुतसे प्रूफ स्वयं नहीं देख सका (जिससे छापेकी अशुद्धियां रह गईं) प्रत्युत बहुत सी एक ही प्रकारकी घटनाओंमेंसे यह निश्चय करनेका कार्य भी कठिन हो गया कि किनको स्थान दिया जाय और किनको किसी आनेवाले

समयके लिये रख छोड़ा जाय। मैं इन विविध त्रुटियोंके लिये केवल यही आशा कर सकता हूं कि धर्मवीर लेखरामके जीवनसे जो शिक्षा मिलती है, उसका उज्वल प्रकाश इन त्रुटियोंकी ओर कोई दृष्टि ही न जाने देगा। यदि इस ग्रन्थकी द्वितीयावृत्तिकी आवश्यकता हुई तो इन तथा अन्य त्रुटियोंको दूर करनेका प्रयत्न करूंगा।

अन्तमें मैं आर्य्य-पथिकके चचा श्री गंडारामजी, उनके पुराने उस्ताद मुंशी तुलसीदासजो, आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जावके अधिकारी गण तथा अन्यान्य आर्य्य-भाइयोंको धन्यवाद देता हूं जिन्होंने पण्डित लेखरामके जीवन सम्बन्धी पत्र व्यवहार तथा अन्य लेख मेरे हवाले करनेमें तनिक भी सङ्कोच नहीं किया।

गुरुकुल विश्वविद्यालय, कांगड़ी,
५ मार्गशीर्ष, १९७१ वि०

मुन्शीराम जिज्ञासु।



ओ३म्

प्रकाशकके दो शब्द

धर्मवीर पण्डित लेखरामजीका जीवन आर्य्य जातिके लिये गौरवस्वरूप है, धर्म्मवीरोंके लिये पथ प्रदर्शक है। पंडित लेखराम जहां वैदिकधर्मके प्रचारके लिये रात दिन परिश्रम करते थे, वहां हिन्दू जातिपर ईसाई मुसलमानादि विधर्मियोंके आक्रमण और आक्षेप नहीं सह सकते थे। वे बराबर हिन्दू देवी देवता और ऋषि मुनियों पर मुसलमानोंके आक्षेपोंका मुंह तोड़ उत्तर देते थे, उनकी अकाट्य युक्तियोंसे मुसलमान बराबर घबराया करते थे, "तहज़ीबुल हिन्द" के उत्तरमें पंडितजीने "तहज़ीबुल इस्लाम" लिखकर मुसलमानी धर्मकी जड़ खोखली कर दी उसको पढ़कर मुसलमानोंने पंडितजी पर अदालतमें नालिश भी की।

जब ऐसे भी काम न बना तो धोखेसे एक कसाई घातकने पंडितजी पर दावा लगाया और चालाकीसे हिन्दू होनेका स्वांग बनाकर मौका पाकर छुरी मारकर भाग गया और संसारको मुसलमानोंके आसुरीपनका परिचय दे गया।

मैं पूज्य श्रीस्वामी श्रद्धानन्दजी महाराजका कृतज्ञ हूं जिन्होंने इस पुस्तकके प्रकाशनकी आज्ञा प्रदान की।

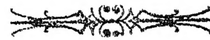
उपस्थित जीवनीके पश्चात् पंडित श्री लेखरामजीकी "तहज़ीबुल इस्लाम" का सुन्दर हिन्दी अनुवाद बहुत शीघ्र प्रकाशित कर जनताके सामने उपस्थित करनेका प्रयत्न करूंगा जिससे पंडितजीके कार्य्यका हिन्दूजगत्को पता लगेगा एवं मुसलमानोंके आक्षेपोंका मुंह तोड़ जवाब देना भी आ जायगा।

निवेदक,

गोविन्दराम हासानन्द

आर्यपथिक लेखराम

विषय सूची







धर्म्मवीर पण्डित लेखराम ।

* ओ३म् *

आर्य्यपथिक लेखराम

का

जीवन-वृत्तान्त

पहला अध्याय

वंश



आर्य्यसमाजके परिमित चक्रमें तो कोई ही ऐसा बेपरवा आलसी होगा जो आर्य्यपथिकके नाम तथा कामसे परिचित न हो, किन्तु आर्य्यसमाजसे बाहिर भी करोड़ों मनुष्योंने लेखरामका नाम सुना है। वीर लेखरामके जीवनकी अन्तिम घटना यदि ऐसी क्षुब्ध न होती तो सम्भव था कि उनकी अर्थीके साथ ३० सहस्रके स्थानमें तीन सहस्र जन संख्या भी न होती, ऐसी अवस्थामें सम्भव है कि आर्य्यसमाजकी परिधिसे बाहर उसको जानने वाले भी कम होते; किन्तु फिर भी उसके जीवनमें ऐसी विचित्र घटनाओंका प्रादुर्भाव हुआ है जिनसे

उसका जीवन वृत्तान्त सर्वसाधारणके लाभार्थ प्रकाशित करने-
की आवश्यकता होती है।

जन्मभूमिको जननी कहना कुछ अनुचित नहीं क्योंकि जिस
प्रकार गर्भमें स्थित सन्तानपर माताके गुण, कर्म तथा स्व-
भावके संस्कार पड़ते हैं वैसे ही जन्मभूमिके जल, वायु तथा
प्राकृतिक दृश्योंका भी आश्चर्य्य जनक प्रभाव मनुष्यके जीवन
पर पड़ता है। लेखरामका जन्म एक ऐसे स्थानपर हुआ जहांका
जल वायु पुष्टिकारक तथा जहांके बाह्य दृश्य मनको उत्साहित
करनेवाले थे। पञ्जाबमें जेहलमका जिला जानदार घोड़ियां
उत्पन्न करने वाले धन्नी प्रान्तकी वरली हद्दपर स्थित है, उसमें
चकवालकी तहसील प्रसिद्ध है। खास चकवाल उपनगरसे
आठ कोस पूर्वकी ओर ऊंची सतहपर सैदपुर (सय्यदपुर)
नामी एक ग्राम है। इस ग्रामके तीनों ओर कस अर्थात् बर-
साती नदियां बहती हैं। ग्रामकी पूर्वी सीमा वाली नदीका
नाम काशी है। इस नदीका स्रोत रामहलावां नामी पहाड़ीसे
आरम्भ होता है, जिसके विषयमें प्रसिद्ध लोकोक्ति है कि
बनवासके समय पाण्डव कुछ काल तक इस स्थानमें खेती करके
दिन बिताते रहे। रामहलावां पहाड़ी हिन्दुओंके प्रसिद्ध तीर्थ
कटासराजके पास ही हैं इसी कारण नदीका नाम काशी पड़ा
होगा। दूसरी नदीका नाम सुर है जिसे पण्डित लेखरामजी
'सरस्वती' का अपभ्रंश बतलाया करते थे। इस नदीका स्रोत
"करङ्गली" नामी पहाड़ीसे निकलता है और सय्यदपुरके दो

ओर होता हुआ काशीसे जा मिलता है। दक्षिण और पूरबके कोनेकी ओर बराबर एक हरी भरी गिरिमाला जाती है। जिसका नाम "दरगेश" और "दल जव्वा" है। इस ग्रामकी आबादी ३०० घरोंसे अधिक न थी, किन्तु ग्रामनिवासी प्रायः खाते पीते खुशहाल थे। सिक्खोंके राज्यमें इस ग्रामकी ऊंचाई पर एक पहाड़ी गढ़ भी था, जिसे सर्दार उत्तमसिंह अहलूवालियाने बनवाया था। उस गढ़के एक दो बुर्जोंके अब चिन्ह ही मात्र शेष रह गये हैं, बाकी सब कुछ बरसाती नदियोंकी भेंट हो चुका है।

यद्यपि पण्डित लेखरामका जन्म सय्यदपुरमें हुआ तथापि उनका वंश पहिले पोठोवारका निवासी था। रावलपिण्डीका ज़िला पोठोवारका गढ़ है, उसके कहूटा नामी ग्राममें लेखरामके पुरुषा निवास करते थे। कहूटा भी प्राकृतिक दृश्योंसे शून्य स्थान नहीं है किन्तु उसका वर्णन इस समय करनेकी आवश्यकता नहीं। यहां इतना लिखना ही पर्य्याप्त है कि लेखरामके दादा महता नारायणसिंहके पिता पहिले पहिल पोठोवारसे अपने ससुरालके ग्राम सैय्यदपुरमें आ बसे थे। उनके दो पुत्र थे जिनमें एक नारायणसिंह थे। नारायणसिंहके दो पुत्र उत्पन्न हुए; बड़ेका नाम महता तारासिंह और छोटेका नाम महता गण्डाराम, जो पेशावर पुलिसमें डेपुटी इन्सपेक्टर थे और अब पेन्शन लेकर रावलपिण्डीमें निवास करते हैं। बड़े, महता तारासिंहके घर एक पुत्री तथा तीन पुत्र उत्पन्न हुए। सबसे

बड़े का नाम लेखराम, दूसरेका तोताराम और तीसरेका बालक-राम रखा गया। पुत्री सबसे छोटी थी जिसका नाम मायावन्ती रखा गया। लेखराम वर्तमान जाति भेदके विचारसे ब्राह्मण थे इतना लिखना ही काफी है; इससे अधिक आन्दोलनकी इस समय, जब कि वैदिक वर्णव्यवस्थाके पुनर्जीवित करनेका विचार हो रहा है कुछ भी आवश्यकता नहीं, फिर भी इस विषयका विशेष वृत्त मनोरञ्जक होगा।

लेखरामके प्रपितामहका नाम "प्रधान" था। यह शाण्डिल्य गोत्रज सारस्वत ब्राह्मण कुलमें से एक साधारण पुरुष थे। इनके विषयमें कुछ विशेष हाल मालूम नहीं हुए परन्तु आर्य्य-पथिकके दादा नारायण सिंहके जीवनपर एक दृष्टि अवश्य डालनेकी आवश्यकता है, क्योंकि लेखरामके जीवनमें बहुतसी घटनाएं ऐसी उपस्थित हुई हैं जिनका गुह्य रहस्य पैत्रिक संस्कारोंके ज्ञान बिना प्रकाशित नहीं किया जा सकता। नारा-यणके साथ सिंहका योग ही सिद्ध करता है कि परशुरामकी तरह यह भी हर समय कहनेको तय्यार रहते थे कि—"केवल द्विज कर जानेस मोहीं। मैं जस विप्र सुनावहुं तोहीं।" हम ऊपर लिख चुके हैं कि सय्यदपुरमें सरदार उत्तमसिंहने सबसे पहले गढ़ बनाया था। उनके पश्चात् यहांके हाकिम सरदार कान्हसिंह मजीठिया हुए, जिनके यहां नारायणसिंहने घुड़चढ़ों (सवारों) में नौकरी कर ली। नारायणसिंह बड़े दृढ़ पुरुष थे। उनका शरीर बलिष्ठ तथा हाथ पैर खुले थे। उनकी बहा-

दुरीके कारण सर्दार कान्हसिंह इन्हें बहुत माननीय समझते थे और भोजन प्रायः अपने साथ ही कराया करते थे। पेशावरमें एक बार सर्दार कान्हसिंहके साथ पठानोंके सामने युद्धमें खड़े हुए थे, वहां इनको बड़ा प्रबल घाव लगा। बन्दूककी गोली मुंहमें लगकर दहने कानके पाससे होती हुई गर्दनमेंसे बाहर निकल गई, किन्तु बहादुर नारायणसिंहने मुखपर मलिनता तक न आने दी। जब निरोग हुए तो सर्दार साहेबने सोनेके कड़ोंकी जोड़ा देकर उनका मान किया। इसके पश्चात् भी कई लड़ाइयोंमें हाथ दिखाकर इन्होंने सिक्खोंकी नौकरी छोड़ दी। इनके जीवनकी एक और विचित्र घटना यहां वर्णन-के योग्य है कि जब बृटिश राज्यशासनके स्थापन होनेपर प्रजासे हथियार ले लिये गये तो नारायणसिंहने अपने हाथसे हथियार रखनेको अपमान समझा और "पुंच्छ" के राज्यमें जाकर अपने हथियारोंको स्वयं बेंच दिया। हम आगे चलकर लेख-रामके जीवनमें अपने पितामहके दृढ़ संकल्पोंका प्रभाव देखेंगे। अपने बड़े पुत्र तारासिंहके विवाहके पश्चात्, जो संवत् १९१२ में हुआ, नारायणसिंह कश्मीरके सर्दार हाड़ासिंह जी के यहां कोठारी नियत होकर चले गये और वहांसे लौटकर उनका देहान्त संवत् १९२५ में सय्यदपुर ग्रामके अन्दर हुआ।

नारायणसिंहके छोटे भाई श्याम सिंह थे। यह बाल ब्रह्म-चारी ही रहे और सिक्खोंके राज्यकी समाप्ति पर साधु होकर विचरते रहे। इनका देहान्त संवत् १९२८ विक्रमीमें हुआ।

तब लेखराम कुमारावस्थासे आगे पग धरने लगे थे और यदि हम यह अनुमान करें, कि लेखरामके आगामी धार्मिक जीवन-पर इनके दृष्टान्तका कुछ प्रभाव पड़ा तो कुछ अनुचित न होगा।



दूसरा अध्याय

जन्म तथा बाल्यावस्था



लेखरामका जन्म ८ चैत्र सं० १९१५ वि० को शुक्रके दिन सय्यदपुर ग्राममें हुआ। छः वर्षकी आयुमें ही इसको देहाती मदरसेमें उर्दू फारसी पढ़नेके लिये भेजा गया। पंजाबमें चिर-कालसे फ़ारसीका राज्य हो चुका था। ख़ालसा पन्थके राज-शासनसे पहिले लाहौर मुसलमान राजप्रतिनिधियोंका गढ़ था। कई समयोंमें दिल्लीके बादशाह स्वयं लाहौरमें निवास किया करते थे। न्यायालयोंका सब काम हिन्दू राजकर्म्मचारी भी फ़ारसीमें ही किया करते थे। देवनागरी अक्षरोंका किञ्चि-न्मात्र भी प्रचार न था, और होता कैसे जब सरकारी नौकरीसे बढ़ कर कोई मानका स्थान ही न समझा जाता था और सरकारी नौकरीमें उन्नति प्राप्त करनेके लिये आवश्यक था कि फारसी भाषामें उत्तम योग्यता सम्पादन की जावे। उन दिनों ५) मासिक पानेवाला घाटका मुहर्रिर भी अपने आपको "अहले कलम" कह कर उपजकी लेता था और लाखोंपति साहूकारों तथा सैकड़ोंकी मालगुज़ारी भुगतानेवाले जमींदारोंको अपनी प्रजा समझता था। ऐसे समयमें एक ब्राह्मण-कुलोत्पन्न बालकके

लिये भी देवनागरी लिपि सिखाने और संस्कृत भाषा पढ़ानेका विचार किसके दिलमें उत्पन्न हो सकता था? किन्तु फिर भी मालूम होता है कि लेखरामके हृदयमें अपने धर्म्मके दृढ़ संस्कार छुटपनसे ही स्थिर हो चुके थे। अपने धर्म्मकी कथाएं उन्होंने कहांसे सुनीं और उनपर दृढ़ता कैसे हुई, इसका कुछ पता नहीं चलता; किन्तु यह स्पष्ट है कि लेखरामके चित्तपर धार्म्मिक घटनाओंका प्रभाव बहुत शीघ्र पड़ा करता था।

अभी अक्षराभ्यास ही हुआ था कि शिक्षाविभागका चीफ मुहर्रिर परीक्षा लेनेको आया और लेखरामकी हाज़िर जवाबीसे ऐसा प्रसन्न हुआ कि उसे विशेष पारितोषिकका पात्र समझा। सं० १९२९ में, जब लेखरामकी आयु ११ वर्षकी थी, उसके चचा गण्डाराम पेशावर पुलिसमें एक स्थिर स्थानपर नियत हो गये और उन्होंने लेखरामको अपने पास बुला लिया। इस स्थानमें लेखरामको कई अध्यापकोंके पास पढ़नेके लिये जाना पड़ा। अध्यापक यतः मुसलमान होते थे इसलिये मुसलमानी मतके संस्कार लड़केके दिल पर बैठानेका प्रयत्न करते थे, परन्तु लेखरामकी शङ्काओंसे इतने तङ्ग आजाते थे कि पढ़ानेसे जवाब देकर चल देते। फिर लेखरामके चचा पेशावरसे बाहिरके थानोंमें बदल गये; लेखराम भी उनके साथ गया। इस समय की एक घटना लेखरामके भविष्यत् जीवनका परिचय देती है। अपनी चाचीको एकादशीका व्रत बड़ी श्रद्धासे रखते देखकर आपने भी उपवास करनेका दृढ़ संकल्प कर लिया। चाचीने

यह कह कर समझाया कि बच्चे भूखको सहन नहीं कर सकते, हठको छोड़ देना चाहिये। दृढ़-संकल्प लेखरामने एक न मानी और नियम पूर्वक एकादशीके दिन उपवास करना आरम्भ कर दिया। जिनके पैतृक संस्कार ऐसे दृढ़ हों, उनको उत्तम शिक्षा किस उच्च अवस्था पर पहुंचा सकती है इसके सिद्ध करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।

इस समय जब मनुष्य-शिक्षा सम्बन्धी आन्दोलनमें दिनों दिन उन्नति हो रही है और जब कि शताब्दियोंके पक्षपात छिन्न-भिन्न करके यूरोपियन शिक्षक आर्य्योंकी प्राचीन विद्यासे उप-देश ग्रहण करनेमें भी अपनी कुछ हतक नहीं समझते, यह कल्पना करना कठिन है कि आजसे ३४ वर्ष पहिले पंजाब देशमें सारी शिक्षाकी समाप्ति कुछ फ़ारसीके लिखे हुए पत्रोंके साथ ही हो जाती थी। लेखरामको शारीरिक शिक्षा, वर्त्तमान सर-कारी शिक्षा विभागके कृत्रिम नियमानुसार, कुछ मिली या नहीं इसका पता लगाना कठिन है; किन्तु उनका चौड़ा माथा, उनका खुला विशाल सीना, उनकी सिंह ठवन इस बातका प्रत्यक्ष प्रमाण थी कि ईश्वरीय नियमोंकी गोदमें पले हुए बच्चोंकी शारीरिक अवस्था वैसी ही स्वाभाविक होती है जैसे कि ईश्वरके ज्ञान, बल और क्रिया स्वाभाविक हैं। लेखरामको मानसिक शिक्षा क्या मिली? इस प्रश्नके उत्तरके लिए बड़े आन्दोलनकी आवश्यकता नहीं। अपने चाचा महाशय गण्डारामजीके पास यह चौदह वर्षकी आयु तक रहे, उसके पश्चात् सय्यदपुर चले

गये और वहांके देहाती मदर्सेमें शिक्षा लाभ करने लगे। इस देहाती मदर्सेके मुख्याध्यापक मुंशी तुलसीदास थे। लेखरामने जो कुछ भी किताबी तालीम हासिल की वह इन्हींकी बदौलत थी। मुंशी तुलसीदास पुराने ढर्रेके स्वतन्त्र विचारवाले आदमी थे। इनका स्वभाव मस्त फकीरोंका सा था, किन्तु साथ ही हृदय बड़ा ही पसीजनेवाला और दूसरोंके दुःखको अनुभव करनेवाला था। मुंशी तुलसीदास आदमीको पहिचाननेकी शक्ति रखते थे। कविने सच कहा है :—

"आदमी आदमी अन्तर, कोई हीरा कोई कङ्कर"—किन्तु यह पता लगाना, कि हीरा कौन है और कङ्कर कौन, साधारण पुरुषोंका काम नहीं।

किसी पुरुष विशेषकी मानसिक उन्नतिका पता लगानेके लिये उसकी लड़कपनकी अवस्थाके निरीक्षण करनेवालोंकी सम्मति बहुत सहायता देती है। जहां लेखरामके प्रथम चौदह वर्षके जीवनका ठीक वृत्तान्त उनके चचा महाशय गण्डारामके लेखोंसे मिलता है, वहां उसके पश्चात् उनके शिक्षण सम्बन्धी जीवन तथा उनके मानसिक विकासका पता चकवाल निव उमरा खत्री वंशीय मुंशी तुलसीदासके लेखोंसे लगता है। मुंशी तुलसीदासका महाशय गण्डारामके साथ बराबर पत्र व्यवहार था। उनके पत्रोंसे लेखरामके विस्तृत होते हुए गुण, कर्म्म, स्वभावका ठीक पता लगता है। किन्तु उन पत्रोंमेंसे लेखरामके जीवन सम्बन्धी लेखोंको उद्धृत करनेसे पहिले मैं मुंशी तुलसी

रामका उस समयका लेख इस स्थानमें नकल करता हूं जो लेखरामके महान आत्म-समर्पणका समाचार सुन कर उन्होंने मुद्रणार्थ भेजा था। वह लिखते हैं :—

"स्वर्गवासी पण्डितजी अपने दोनों छोटे भाइयों (तोताराम और बालकराम) सहित मेरे पास तालीम पाते रहे। धर्म्मपर शहीद होनेवाले पण्डितजीका कद दर्मियाना, सांवला रङ्ग, कुशादा (खुली) पेशानी, सियाह चश्म (पीछे एक आंखमें कुछ विकार सा बैठ गया था) हंसमुख थे। उस समय उनकी आयु १४ वा १५ वर्षकी होगी। बड़े सरल हृदय थे। कुरतेकी घुराडी खुली है तो वैसी ही रही, पगड़ीका लड़ गलेमें है तो कुछ परवा नहीं; किन्तु स्वभाव ऐसा तीक्ष्ण और स्मरण शक्ति ऐसी पहुंचनेवाली कि कठिनसे कठिन फ़ारसीके पाठको दोबारा उन्होंने कभी नहीं कहा था। जो पूछो नोक-जबान होता था। हिसाबमें यकता, कसस-ए-हिन्द (भारतका इतिहास) उपस्थित इत्यादि। केवल गुलिस्तां पूरे आठ बाब और बोस्तान पूरे दस बाब नियमपूर्वक पण्डित साहिबने मुझसे बातर्कीब पढ़े। फिर बहारदानिश आधीसे अधिक कुछ सिकन्दरनामा और मुन्तख़बात-ए-फ़ारसी, जिसमें अनवार सुहेली, सिकन्दरनामा, शाहनामाका कुछ इन्तख़ाब था। मगर इन किताबोंकी शिक्षामें यह हाल था कि दो दो पत्रे उलटने पर शायद ही कभी कोई शब्द मुझसे पूछा हो, खुद ही उनकी सैरमें किश्ती बर आबकी तरह तैरते जाते थे" मुंशी तुलसीदास-

जीके पत्र व्यवहारसे कुछ लेख तिथिवार उद्धृत करना इस स्थानमें बड़ा उपयोगी होगा—"चिरञ्जीव लेखराम रातके दस बजे तक मेरी कुटियामें रहता है। बहार दानिशमें नज़र सानी (पुनरावृत्ति) करता है। इस मदर्सेमें अपना सानी (बराबरीका) नहीं रखता। बखु रदार है" १६ फरवरी सं० १८७३ ई०—"लेखराम मानीटर हो गया।"

१० अगस्त सं० १८७३ ई० "मुन्शी लेखराम मानीटर साहेब कामका तो नाम भी नहीं लेते, पढ़ाईका क्या जिक्र। अपनी जहूलतके शगल (कवितासे मतलब है) से फुरसत नहीं पाते। खैर अब पहिलेकी निसबत कुछ सुधारपर आ गये हैं।"

८ सितम्बर १८७३ ई०। "मुन्शी साहेब लेखराम अबतक अपनी जिहालत पर कमर बस्ता हैं। और तो सब कुछ रखते हैं मगर अकल (बुद्धि)। हाय अफसोस! अगर यह भी होता तो अन्दर बाहर आदमी होते।"

लेखरामके सम्बन्धी फकीरचन्द भी मुन्शी तुलसीदासके पास ही पढ़ते थे। उनकी योग्यताकी प्रशंसा करते हुए १८ फरवरी सन १८७४ को उक्त मुन्शीजीने लिखा था—"लेखराम साहेब भी लेख तथा वक्तृत्वशक्तिमें उनसे कम नहीं किन्तु तनिक बुद्धिकी कसर है।" यह बार बार बुद्धिकी कसरका जिक्र क्यों आता है और इससे अध्यापकका क्या मतलब है? आगे चलकर कुछ स्पष्ट हो जाता है।

२४ अगस्त सन् १८७४—"लेखरामकी प्रकृतिके बदलनेकी ओर ध्यान दीजियेगा। विद्यासे विनय उत्तम है और अकल शकलसे........" लेखरामकी प्रकृतिमें दास भाव पहलेसे ही न था, स्वतन्त्रता कूट कूट कर बाल बालमें भरी हुई थी। यही कारण था कि कई बार छात्रवृत्ति तथा पारितोषिक पानेपर भी वह कभी कभी सरकारी शिक्षा विभागके बड़े कर्म्मचारियोंको भी अप्रसन्न कर लिया करते थे।

इस समयसे पहले ही लेखरामको कुछ तुकबन्दीका भी शौक हो चला था और फारसी तथा उर्दूके अतिरिक्त आप पञ्जाबीमें भी तबीयत लड़ाया करते थे। यद्यपि एक महाशयके लेखसे ज्ञात होता है कि रिवाजी शृंगाररस की कविता की ओर भी लेखरामके दिलका झुकाव था परन्तु मुझे उनकी उस समयकी लिखी हुई एक ही कविता मिली है, जिसका सदाचारके साथ सम्बन्ध है। आपने पञ्जाबी बैतुलबाजी हुक्के के विरुद्ध की है जो कविके बल तथा निर्बलता दोनोंका प्रकाश करती है।

"वे बाझ हुक्क नहीं चीज भैड़ी
लख बदियांदा इबतदा हुक्का।
खङ्ग गर्मी ते सौदासाह
चारों रोग करे बरपा हुक्का।
जूट्ठा चक्खना चंगयां मन्दयां दा
कोई फायदा चादसाला हुक्का।

शूम बूम वाङ्गण चिलमकश जित्थे
बैठ करें ताजा जिस जा हुक्का।
गहरा वाङ्ग स्याही स्याह करे
स्याही यही मुंहदे उत्ते मला हुक्का।
बू बदतर हैं बाङ्ग बोल थी भी
बोल बोलछड्डे सीना खा हुक्का।
नेकमाश नू हुक्का बदनाम करदा
वाब नेकदे बुरा कमा हुक्का।
एह ऐब मैंने दिते गिन सारे
कोई फायदा नहीं बस बसाय हुक्का।
लेखराम बस बैठके नाम जपलो
नड़ी मन्नके देओ उड़ाय हुक्का।"



तीसरा अध्याय

नौकरी



लेखरामके परिवारमें चिरकालसे उच्च शिक्षा प्राप्त करनेकी प्रणाली प्रचलित न थी। इनके दादा तो सर्वथा अशिक्षित ही थे, हां इनके चचा गण्डारामजीने कुछ फारसी उर्दू में अभ्यास किया था जिसके अनुकरणमें उन्होंने भी इन्हीं भाषाओंका अच्छा अभ्यास कर लिया। किन्तु समयके प्रचलित विचारों-के अनुसार सत्रह (१७) वर्षकी आयुवाले युवकका कर्त्तव्य था कि वह कमाई करके माता पिताको आर्थिक सहायता देवे, इसलिये इस आयुसे पहले ही इनको सरकारी नौकरी दिलाने-की फ़िक्र हो रही थी। उस समय "निकृष्ट चाकरी" को ही अत्युत्तम तथा मान स्थानी समझा जाता था "उत्तम खेती" को गिरा हुआ किसानीका काम कहा जाता था, तभी तो महाशय गण्डारामजी, उस समय जब कि लेखरामकी आयु पूरे १६ वर्षों की भी न हुई थी, अपने भतीजे के गुरुको प्रेरित करते हैं कि वह इन्सपेक्टर मदारिसके पास लेखरामकी नौकरीके लिये सिफारिश करे जिसके उत्तरमें मुन्शी तुलसीदास लिखते हैं "अगर साहिब इन्सपेक्टर बहादुर तशरीफ़ लाए और इमति-

हान भी अच्छा हुआ, तो मैं जरूर लेखरामकी निसबत जब ।
अर्ज करूंगा। आइन्दा उसकी किस्मतके तअल्लुक है ”
सत्रहवां वर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ था कि लेखरामको चा
ने पेशावर पुलिसमें भरती करा दिया। उस समय कृस्टी
साहब वहांकी जिला पुलिसके सुपरिण्टेण्डेण्ट थे। कैसी विचित्र
घटना है कि जिन कृस्टी साहबने लेखरामको पुलिसमें भरती
किया था, लेखरामके मारे जानेपर उन्हींसे मुझे घातकका
पता लगानेके लिये विशेष प्रार्थना करनी पड़ी। कृस्टा
साहबने मुझे बतलाया था कि जहां उन्हें मालूम था कि लेख-
राम अपनी निर्भयता तथा स्पष्ट वक्तृत्वके कारण कभी न
कभी मारा जायगा, वहां उसकी दृढ़ताके लिये उनके हृदयमें
सदा मानका भाव रहा करता था।

संवत् १९३२ के पौष मासमें २१ दिसम्बर सं० १८७५
ई० के दिन, लेखराम पेशावर पुलिसमें भरती किये गये।
पुलिसकी नौकरीका वृत्तान्त न तो मनोरञ्जक और न
शिक्षादायक ही हो सकता है। अढ़ाई साल पीछे १) मासिकको
उन्नति और फिर प्रत्येक वर्षके पीछे सारजन्टीके एक एक
दर्जेकी उपलब्धिका विस्तारपूर्वक वृत्तान्त भी हमारे पल्ले
कुछ नहीं डाल सकता। संवत् १९३७ तक बराबर वेतनो-
न्नति होती रही, किन्तु उस संवत्‌की समाप्तिके लगभग लेख-
रामके आत्मामें कुछ विचित्र परिवर्तन होने लगा। पुलिसमें
नौकर होनेसे पहिले ही, जब लेखराम अपने चचाके पास

"मुआबी" में थे, एक धार्मिक सिक्ख सिपाहीके सत्सङ्गसे उन्हें परमात्माकी उपासनाका अभ्यास हो गया था। प्रातः काल ब्राह्ममुहूर्तमें ही स्नान करके समाधि लगा बैठ जाते और दिनको गुरुमुखी अक्षरोंमें लिखी हुई गीताका पाठ करते। महाशय गडारामजी लिखते हैं कि एक रात्रिको खटियापर समाधि लगाये बैठे थे कि सबके देखते देखते खटियासे नीचे आ रहे। शिर नीचे और पांव खटियाके ऊपर हो गये, किन्तु इस अवस्थामें भी वह अपने ध्यानमें मस्त थे।

लेखरामके इस आरम्भिक ईश्वर-प्रेमकी अवस्थापर पुलिसकी नौकरी भी अपना कुछ असर न डाल सकी। संवत् १९२७ में फिरसे वैराग्यकी लहर उठी जिसने पुलिस की हुकूमत और सांसारिक ऐश्वर्य्यका नशा हिरन कर दिया। इस समय लेखरामके विचार सर्वथा नवीन वेदान्तियोंके साथ मिलते थे। अद्वैतमें निश्चय रखते हुए भी इन्होंने उपासना-को जवाब नहीं दिया था और इसी लिये आजकलके वेदान्तियों की तरह वह अद्वैत मतको सांसारिक विषयोंके भोगका साधन बनानेका प्रयत्न नहीं करते थे। गीता पढ़नेका परिणाम यह हुआ कि कृष्ण-भक्तिमें अधिक श्रद्धा हो गई और रास-लीला देखनेकी ओर रुचि बढ़ी, टीके लगा कर "कृष्ण कृष्ण" का जप करते रहते। कृष्ण भक्तिमें प्रेम इतना बढ़ा कि नौकरी छोड़कर वृन्दावन निवासके लिये जानेको तैय्यार हो गये। इस समय लेखरामकी आयु २१ वर्षकी थी माताने विवाह-

की तय्यारी कर दी परन्तु उस वैराग्यसे प्रेरित हरिभक्तने विवाहसे सर्वथा इनकार कर दिया। महाशय गण्डारामजी इस विषय पर लिखते हैं कि जब पत्रद्वारा मना करनेसे कुछ न बना तो वह स्वयं लेखरामको समझानेके लिये गये। उस समय उत्तरमें लेखरामने जो दृष्टान्त दिया उसे महाशय गण्डारामजी इस प्रकार वर्णन करते हैं—"एक मिसाल सुनाई वह यह है—एक राजाके सामने नट तमाशा करने वाले आये। उनको राजाने ५००) रु० इनाम देनेकी प्रतिज्ञा करके कहा कि योगीकी नकल उतारो। एक नटने इनामकेलालचसे योगीकी ठीक ज्योंकी त्यों नकल उतारी किन्तु समाधि छोड़ते ही हाथ इनाम पानेके लिये पसार दिया। मतलब इस मिसालसे यह था कि गृहस्थमें रहकर दो काम नहीं हो सकते हैं। तब हम सब निराश हो गये और जिस देवीका नाता लेखरामके साथ हुआ था उसका विवाह उनके छोटे भाई तोतारामके साथ कर दिया।"

इन्हीं दिनों पण्डित लेखरामके पुराने उस्ताद तुलसीदासजी उन्हें मिलनेके लिये पेशावर गये तो उनसे भी नौकरी छोड़कर संस्कृत पढ़नेके लिये देशान्तर जानेकी इच्छा प्रकट की थी।

चौथा अध्याय

आर्यसमाजमें प्रवेश

और

ऋषि दयानन्दका सत्संग



ऊपर लिखा जा चुका है कि पहिले पहिल वैराग्यका लहर दृढ़संकल्प लेखरामके हृदयमें एक नवान वेदान्ती सिक्ख सिपाहीके सत्सङ्गसे उठी थी। उसी लहरने मन रूपा समुद्रके जल तरङ्गको विविध रूपोंमें बदल कर लेखरामको कहीं रास-लीलाके भँवरमें घुमाया और कहीं गृहस्थाश्रमके कर्त्तव्योंसे घृणा दिलाई। किन्तु लेखरामकी बुद्धि एक जागृत शक्ति थी; उसकी दृष्टिमें यह भ्रम ठहर नहीं सकता था कि जीवात्मा ही ब्रह्म है और इसलिये वह कभी भी अपने उस समयके धार्मिक विचारोंसे सन्तुष्ट नहीं हो सकता था। इस समयका दो कल्पनायें लेखरामके उस स्वभावको, जो उसे पैतिक [illegible] में मिला था, बहुत स्पष्ट करती हैं; इसलिये उनका बयान लाभदायक होगा।

पेशावरमें नौकरीके दिनों अकेले होनेके कारण आटा लेकर रोटी बनवाने तन्दूर वालेकी दुकान पर जाया करते थे। एक

दिन शहरमें किसी आदमीको एक बैल या गायने सींगोंसे घायल किया जिसकी चर्चा सारे बाज़ारमें फैल गयी। तन्दूर वालेकी दूकान पर भी यही चर्चा थी। पण्डित लेखराम तत्काल ही बोल उठे—"क्यों न गायके सींग पकड़ लिये? और नहीं तो लाठी मारकर हटा देना चाहिये था।" लोगोंने कहा—"महाराज गौमाता पर कैसे हाथ उठाता?" इस पर अक्खड़ लेखरामके होंठ फड़कने लगे, आंखें लाल हो गईं और अधिक अटक अटककर बोले—"अगर मेरे सामने गाय या बैल आवे और मुझे मारने लगे और जानका खतरा हो तो मैं तलवारसे उसका सिर उड़ा दूं।" इतना कहना था कि लोगोंने "दुष्ट! हत्यारा! इत्यादि" दुर्वचनोंका तूफान मचा दिया और तन्दूरवालेने लोगोंके जोशसे डरकर आटा ज्योंका त्यों लौटा दिया।

एक ओर तो रुकावट सामने आनेपर इतना अक्खड़पन और दूसरी ओर एक और घटना सुनाता हूं जिससे पता लगता है कि धर्म्मकी जिज्ञासाने उस तङ्ग ज़मानेमें भी लेखराम-को उदार सार्वभौम हृदयका स्वामी बना दिया था। पेशावरसे एक महाशय लिखते हैं कि पण्डित लेखरामके मित्र महता कृपारामजीने उन्हें महम्मदी मतकी पुस्तकोंको अधिकतः पाठ करते देखकर एक दिन पूछा कि आप मुसलमानी मजहबकी पुस्तकोंको इतना क्यों पढ़ते हैं, क्या यदि महम्मदी मत आपको सच्चा लगे तो आप मुसलमान हो जायंगे।" वहां उत्तरके

लिये कुछ सोचनेकी आवश्यकता न था ; उत्तर मिला—बेशक ! अगर दस घड़े रक्खे हों और यह मालूम न हो कि ठन्डा पानी किसमें है तो जबतक थोड़ा थोड़ा पानी सबमेंसे न पिया जाय तबतक कैसे पता लग सक्ता है कि किस घड़ेका पानी ठण्डा और मीठा है। इसी तरह सब मतोंकी पुस्तकोंकी पड़-ताल करके पता लगाना चाहिये कि सच्चा धर्म्म कौनसा है।"

इन दो उक्तियोंसे ही पण्डित लेखरामके स्वभावके उतराव चढ़ावका कुछ पता लग जाता है।

इन्हीं दिनों जब गीताकी सटीक पुस्तक काशीसे मंगाकर उसे व्याख्या सहित पढ़ रहे थे पण्डित लेखरामको मुंशी कन्हैया लाल अलखधारीकी पुस्तकोंके देखनेकी उत्कण्ठा हुई। तत्काल ही धर्मके प्यासेने अलखधारीके सब प्रसिद्ध ग्रन्थ मंगा लिये जो पेशावरमें आर्य्यसमाज स्थापन करते ही अपने अन्य ग्रन्थों सहित, उसकी भेंट कर दिये। पेशावर आर्य्यसमाजके पुस्तका-लयकी सूची भी पण्डित लेखरामकी ही लिखी हुई है, जिसमें ऋषि दयानन्दसे मिली हुई अष्टाध्यायीके साथ साथ "तोह-फतुल इसलाम" और "[illegible]" इत्यादिके नाम भी दर्ज हैं।

पंजाबमें मुंशी कन्हैयालाल अलखधारीके लेखोंने वैदिक-धर्म्मके पुनर्जीवित करनेमें वही काम दिया जो ईसाई मतकी स्थापनासे पहिले "यहुन्ना" [John the Baptist] के व्याख्यानोंने किया था। यदि क्रिश्चियन चर्चको ईसाका

उपदेश समझानेके लिए महुनाके व्याख्यानोंकी आवश्यकता थी तो आर्यसमाजको भी ऋषि दयानन्दका उद्देश्य समझानेके लिये अलखधारीकी प्रचण्ड चोटोंकी जरूरत अवश्य थी। उस समयके नवशिक्षित पंजाबी, और कुछ कुछ संयुक्तप्रान्ती भी, अलखधारीको अपना "पैगम्बर" और "राहबर" मानते थे। अलखधारीके खुले स्पष्ट शब्द कुरीतियोंसे पीड़ित आर्यसन्तानको उत्साहित करने और उन्हें अन्धपरम्पराकी कड़ी सांकलोंको तोड़नेका बल प्रदान करनेमें बिजुलीका काम देते थे; किन्तु फिर भी पुराने ढर्रेके पौराणिकों पर उनका कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता था। पौराणिक गढ़को तोड़नेके लिये वेदशास्त्र रूपी प्रबल शस्त्रोंकी आवश्यकता थी, जिनके चलानेमें निपुण एक ही कोपीनधारी संन्यासी शताब्दियोंके पश्चात् दिखाई दिया था। अलखधारीने उसी अखण्ड शस्त्रधारी बाल ब्रह्मचारीकी शरण ली, और अपने लेखोंकी पुष्टिमें स्वामी दयानन्द सरस्वतीके व्याख्यानों और लेखोंका प्रमाण दिया। यही कारण था कि मुंशी कन्हैयालाल अलखधारीके सब चेले अन्तको ऋषि दयानन्दकी पवित्र शरणमें आये और आर्यसमाजके उत्साही सभासद बने। इसी प्रकारके सुशिक्षित युवक वीरोंमेंसे लेखराम एक था।

अलखधारीकी पुस्तकोंको पढ़नेसे ही लेखरामको ऋषि दयानन्दके नाम और कामका पता लगा। तब इन्होंने अपने माने हुए अद्वैत मतकी पड़ताल की और जबतक पूरी छान बीन

करके अपने आपको परमात्माके सेवक, पुत्र, भक्त न समझ लिया तब तक दम न लिया। इन्हीं दिनों समाचार पत्रोंमें ऋषि दयानन्दके धर्म्म प्रचारके कामकी धूम मची हुई थी। लेखरामने पत्र व्यवहार आरम्भ करके ऋषि-प्रणीत ग्रन्थोंको मंगाया और संवत् १९३७ के अन्तिम भागमें ही पेशावरमें आर्य्य समाज स्थापित कर दिया।

आर्य्यसमाजकी स्थापना तो हुई किन्तु उसकी सीमा लेखरामसे बाहर न थी। जिनको मृत्युके समय धर्म्मकी मूर्ति माना गया और जिनके नामके साथ लगकर पण्डित शब्द अपने आपको स्वयं सम्मानित समझता था, उन्हें उस समय "लेखू" कह कर पुकारा जाता था। लोकोक्ति प्रसिद्ध है—"माया तेरे तीन नाम। परसू, परसा, परसराम।" इसी प्रकार कहा जा सकता है कि आत्मसमर्पण करनेवाले लेखराम भी लेखूसे लेखराम और फिर "धर्म्म वीर पण्डित लेखराम" बन गये। लेखू महाशय उस समय पेशावर नगरमें "माई रज्जीकी धर्म्म-शाला"के अन्दर रहते थे। इसी स्थानमें आर्य्यसमाजके साप्ताहिक नहीं प्रत्युत दैनिक अधिवेशन होने लगे। न कोई नोटिस लगाया जाता और न ढिंढोरा पिटवाया जाता; वैदिक धर्म्मका सिपाही लेखू अपने तीन चार मित्रोंको समझाने बैठता। पांचमें चार मित्रोंको तो समझा लिया और वे "खुद खुदा" कहलानेसे लज्जित होकर परमपिताकी शरणमें आ गये किन्तु पांचवां कट्टर नवीन वेदान्ती था जिसने लेखूको भी

अद्वैतका पहला पाठ पढ़ाया था। जब वह किसी प्रकार भी काबू न आया तो लेखूसे "लेखराम" बने हुए मित्रने कहा—"कमबख्त! तेरी समझमें कुछ नहीं आता तब भी हमारी खातिरसे ही आर्य्य बन जा। मित्रमण्डल तो न टूटेगा।" यह युक्ति प्रबल थी, काट कर गई। पांचोंने मिल कर काम करना आरम्भ किया। कहते हैं कि "एक और एक ग्यारह" होते हैं। यहां तो—"पांच पंच मिल कीजे काज। हारे जीते न आवे लाज" वाला मामला हो गया।

धर्म्म जिज्ञासु लेखरामने आर्य्यसमाज तो स्थापन कर लिया और नियमपूर्वक नित्यकर्मों का पालन भी आरम्भ कर दिया किन्तु दूसरोंको समझानेमें कभी कभी स्वयं डांवाडोल हो जाते। अन्य मतों सिद्धान्तोंका तो बड़ी प्रबल युक्तियोंसे मण्डन करते किन्तु जब अपने नवीन वेदान्ती मित्रोंसे बातचीत होती तो कभी कभी निरुत्तर हो जाते। फिर थे भी तो अभी-तक सुन्नी आर्य! एक लोकोक्ति है कि मुसलमानी मत सब रास्ते साफ करता और तलवारके जोरसे लोगोंको मुहम्मदी बनाता २ जब अटक नदीके किनारे पहुंचा तब गुरु नानकने कहा—"अब तो अटक।" गुरु महाराजके इस आदेशानुसार असली मुसलमानी मत अटकके उस पार ही रह गया; तब मुल्लाओंने अपनी बाङ्ग देनी शुरु की जिसको सुनकर अटकके इस पारवाले हिन्दू भी मुसलमान होने लगे। इसी लिए हिन्दु-स्तानके मुसलमान सुन्नी कहलाते हैं।

उपरोक्त लोकोक्तिके अनुसार लेखराम भी अबतक सुन्नी आर्य ही थे। उन्होंने मनमें ठान लिया कि आर्यसमाजके प्रवर्त्तक ऋषि दयानन्दसे संशय निवृत्ति करने, और उनसे आशीर्वाद लेनेके लिए उनकी सेवामें अवश्य जाना चाहिये। ऐसा निश्चय दृढ़ करते ही साढ़े चार वर्षों की नौकरीके पश्चात् एक मासकी पहली छुट्टी (५ मई सं० १८८० ई० से) लेकर ११ मई को ऋषि दयानन्दके दर्शनार्थ अजमेर नगरकी ओर चल दिये। लाहौर, अमृतसर, मेरठ आदि नगरोंके प्रसिद्ध आर्यसमाजोंमें ठहरते हुए १६ मईकी रातको अजमेर जा पहुंचे और १७ मईको सेठ फतेहमलजीकी वाटिकामें पहुंच कर ऋषि दयानन्दके प्रथम और अन्तिम बार दर्शन किये। इस समागमका हाल आर्य पथिकने अपने शब्दोंमें इस प्रकार दिया है—

"स्वामी दयानन्दके दर्शनसे यात्राके सब कष्ट विस्मृत हो गये और उनके सत्यउपदेशोंसे सब संशय निवृत्त हो गये। जयपुर में मुझसे एक बङ्गालीने प्रश्न किया था कि आकाश भी व्यापक है और ब्रह्म भी व्यापक है; दो व्यापक किस प्रकार एक स्थानमें इकट्ठे रह सकते हैं। मुझसे इसका कुछ उत्तर बन न आया। मैंने यही प्रश्न स्वामीजीसे पूछा। उन्होंने एक पत्थर उठाकर कहा "इसमें अग्नि व्यापक है वा नहीं?" मैंने कहा कि व्यापक है। फिर पूछा—"मट्टी?" मैंने कहा कि व्यापक है। फिर पूछा—"परमात्मा?" मैंने कहा कि वह

भी व्यापक है। तब कहा—"देखा! कितने पदार्थ हैं, परन्तु सब इसमें व्यापक हैं। असल बात यह है कि जो (वस्तु) जिससे सूक्ष्म होती है वही उसमें व्यापक हो सकती है। ब्रह्म यतः सबसे अति सूक्ष्म है अतः सर्व व्यापक है।" इससे मेरी शान्ति हो गई।

मुझे उन्होंने आज्ञा दी कि जो संशय मुझे हों उनको निवारण करलूं। मैंने बहुत सोच समझ कर दश प्रश्न लिखे जिनमेंसे तीन मुझे याद हैं, शेष सब भूल गये—

प्रश्न—जीव ब्रह्मकी भिन्नतामें कोई वेदका प्रमाण बतलाइये।

उत्तर—यजुर्वेदका चालीसवां अध्याय सारा जीव ब्रह्मका भेद बतलाता है।

प्रश्न—अन्य मतोंके मनुष्योंको शुद्ध करना चाहिये वा नहीं?

उत्तर—अवश्य शुद्ध करना चाहिये।

प्रश्न—बिजुली क्या वस्तु है और कैसे उत्पन्न होती है?

उत्तर—विद्युत सर्व स्थानोंमें है और रगड़से उत्पन्न होती है। बादलोंकी विद्युत भी बादलों और वायुकी रगड़से उत्पन्न होती है।

अन्तमें मुझे आदेश दिया कि २५ वर्ष (की आयु) से पहले विवाह न करना।

ऋषि दयानन्दजीके थोड़े ही सत्सङ्गने लेखरामके धार्मिक विचारोंको दृढ़ कर दिया और इसी लिए उसके पश्चात् हम वैदिक धर्म्म पर उनका विश्वास चट्टानकी तरह दृढ़ पाते हैं।

पांचवां अध्याय

दासत्वसे मुक्ति



अजमेरसे लौटते ही पण्डित लेखरामका पहला कारनामा उनके सारे शेष जीवनके पुरुषार्थका एक दृष्टान्त मात्र है। एक दिन आप अपने पुराने परिचित सन्त दामोदरदास वेदान्तीके पास गये। सन्तजीने कहा कि सब ब्रह्म ही ब्रह्म है। लेख-रामने पूछा "महाराज ! आप भी ब्रह्म हैं, मैं भी ब्रह्म हूं और यह पुस्तक भी ब्रह्म है ?" उत्तर हां में मिलते ही पण्डित लेखरामने पुस्तक [जिसमें उपनिषदोंका गुटका था] उठाली और वेदान्तीजीके मांगने पर फिर उनको न लौटाई। वह पुस्तक संवत् १९५२ तक पेशावर आर्यसमाजके पुस्तकालयमें ग्रन्थ-कर्ताने स्वयं देखी थी। ऋषि दयानन्दके प्रसन्न सत्सङ्गने हमारे चरित्रनायकके मन पर स्वतन्त्रता तथा धर्मभक्तिका रङ्ग अधिक गाढ़ा कर दिया था, इस लिए अजमेरसे लौटकर उन्हें दिन रात धर्म प्रचारकी ही धुन लगी रहती थी। पेशावर आर्य-समाजकी ओरसे उर्दू का मासिकपत्र "धर्मोपदेश" नामी जारी कराया जिसके सम्पादनका भार भी स्वयं ही उठाया। इसके साथ ही जनसाधारणमें निडर होकर मौखिक धर्मोपदेश आरम्भ

कर दिये। एक दिन विज्ञापन दिया कि मद्यपान निवारणार्थ व्याख्यान देंगे। व्याख्यान अंजुमनके हालमें था जिस कारण जिलेके डिपुटी कमिश्नर अन्य अंग्रेजों सहित पधारे। बहुतसे सेनाधिकारी भी उपस्थित थे। लेखरामका व्याख्यान युक्ति-युक्त तथा प्रभावशाली हुआ। एक फौजी कप्तानने उसका समर्थन किया और बतलाया कि उसने भी अपनी सेनामें मद्य-पानको बन्द करा दिया है।

इस समयके पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्टको जब पता लगा कि उनका मातहत सार्जेन्ट लेखराम बहस मुबाहसेमें बहुत लायक़ है तो प्रायः अपने डिपुटी रीडर बशीर अलीके साथ उनका मुबाहसा (शास्त्रार्थ) कराकर स्वयं आनन्द लूटा करते। मुझे बतलाया गया है कि यह साहेब बहादुर प्रायः लेखरामके कथनका ही समर्थन किया करते थे।

किन्तु "सब दिन जाते न एक समाना" अपनी धुनमें मस्त लेखरामको उस गहरी नींदसे जागना पड़ा क्योंकि नये पुलीस सुपरिन्टेन्डेन्टके आनेपर बहुत सी तब्दीलियां हुईं। इसी चक्रमें लेखरामको पेशावर शहरसे थाना "सुआबी" में बदला गया। बाहर जाकर भी अपने प्रिय मासिक पत्र 'धर्मोपदेश' के लिए यथा-शक्ति लेख भेजते रहे और समाजका मासिक चन्दा १) सैकड़ाके स्थानमें बराबर ५) सैकड़ा देते रहे। जानेको पेशावरसे बाहर चले तो गये किन्तु धर्म प्रचारकी इच्छा रूपी प्रचण्ड अग्नि कहीं थोड़ा ही मन्द पड़ गई थी? वहां पर भी मुहम्मदियोंसे बहस

मुबाहसा जारी रहा। एक दिन पुलिस इन्स्पेक्टरने, जो थानेका मुलाहिज़ा करने आया था, लेखरामको मुबाहिसेमें फंसा लिया। लेखराम भला धर्मके मामलेमें कब लिहाज करनेवाले थे? उत्तर मुंह तोड़ दिये। उस समय तो इन्सपेक्टर साहब अपना सा मुंह लेकर चुप हो गये किन्तु दूसरे दिन ही "अदूल हुकमी" (आज्ञा भङ्ग) के अपराधमें रिपोर्ट कर दी। तब १२ जून १८८३ को सदरसे हुकुम आया कि "छः मासके लिए लेख-रामका एक दर्जा तोड़ दिया जावे और वह थाना कालूखांमें बदला जावे।"

सुआवीके थानेमें रहते हुए जो उर्दू भारत-दण्ड-संग्रह की पुस्तक लेखरामके पास थी उसके पहले पृष्ठपर एक लष्टम पष्टमसा चिह्न खींच कर आपने उसके ऊपरले भागमें "ओ३म्" लिखा था और उससे ऊपर एक झण्डेकी शकल बनाई; अर्थात् उसी समयसे यह निश्चय दृढ़ कर लिया था कि 'ओ३म' का झण्डा किसी दिन सारे भूमण्डल पर फहरायगा और सर्व-मतोंका शिरोमणि बनेगा।

थाना सोआबीमें होते हुए ही लेखरामके साथ महम्मदियों-का द्वेष बहुत कुछ बढ़ चुका था; उसको अपने धर्मकार्य्योंके लिये समय भी कम मिलने लगा। "धर्मोपदेश" के जीवनका सारा निर्भर केवल अकेले लेखरामकी लेखनीपर ही न था प्रत्युत उसकी आर्थिक दशाको ठीक रखनेका बोझ उठाने वाला भी कोई और न था। जब पेशावर आर्य्यसमाजने अधिक

घाटा देखकर 'धर्मोपदेश'को बन्द करनेका ठान ली तो एक मासके घाटेके लिये ५) लेखरामने ही भेज दिये। इस पर भी जब मासिकपत्रकी इतिश्रीका ही निश्चय हुआ तो पंडित लेखरामने अपने चचाको लिखा—"जो निश्चय आपने तथा आर्यसमाज (पेशावर) के सर्व सभासदोंने 'धर्मोपदेश' को बंद करनेके विषयमें किया है, वह तो शिरोधार्य्य है परंतु यह वाक्य कि हमारी समाजकी उन्नति नजर नहीं आती, यह पांच छः रुपये मासिक समाजकी उन्नतिमें व्यय करना चाहिये, इत्यादि मुझे चिन्ता (में डालते हैं)............मज़मून रिसाला धर्मोपदेश, जो मैंने भेजा था, लौटा दीजिये, ताकि उसको आर्य-समाचार मेरठमें छपवाया जावे, (मेरे) मौजूदा पांच रुपयोंमेंसे ३) महम्मद मालिक मतवाअशर्फीको दे दें और २) अपने हिसाबमें जमा फरमावें।" ये शब्द स्वयं बोल रहे हैं, इनपर किसी टीका टिप्पणीकी आवश्यकता नहीं।

फिर सिवाय इसके और क्या हो सकता था कि रिसाला धर्मोपदेशको बंद कर दिया जाय। लेखरामके इसके पहले मानसिक बच्चेका अंत्येष्टि संस्कार मार्च सं० १८८३ ई० को हो गया। थाना कालूखां में पहुंचनेसे पहले ही लेखरामके कट्टर पनकी धूम महम्मदियोंमें मची हुई थी, किंतु इस दुष्कीर्तिके होते हुए भी वह अन्य मतावलम्बियोंको अपने धर्मके सिद्धांत समझानेके उद्देश्यसे ऐसा प्यार करते थे कि पक्षपातियोंसे न भड़काये हुए सर्वसाधारण मुसलमान उनके साथ प्रेम करनेके

लिये बाधित हो जाते। थाना कालूखांके विषयमें मुझे केवल पेशावरकी पुलिस-आज्ञा-पुस्तकसे दो आज्ञाओंकी नकल मिली है, जिनसे पता लगता है कि वहांके मुसलमान सब-इन्सपेक्टर और सारजराट लेखरामका एक दर्जा, किसी "हजरत—शाह चौकीदार" के मुकद्दमेमें गफ़लत (असावधानी) दिखानेके कारण तोड़ दिया गया था। ये दोनों आज्ञाएं ६ जून, सं० १८८४ ई० को निकलीं, किंतु इनके निकलनेसे पहले ही लेख-राम सार्जराटको दफ्तर पुलिसमें तबदील कर दिया था और वहांसे उसे साहब असिस्टेराट मजिस्ट्रेटकी पेशीमें लगाया गया। यह बात प्रसिद्ध थी कि अपराध तो थाना कालूखांके मुसलमान सब इन्स्पेक्टर अकेलेका था, किन्तु लेखराम अपनी निडर हाजिर जवाबीके कारण बिना अपराधके ही दराडनीय समझा गया, मुसलमान पुलिस अफसरोंने समझा कि पेशावर में बुलवाकर वे लेखरामका मुंह बन्द कर देंगे, किन्तु इस अत्याचारने दासत्वकी बेड़ियोंको काटने और लेखरामका मुंह स्वतन्त्रतासे खुलवानेमें प्रबल सहायता दी, और २४ जुलाई सं० १८८४ ई० को सदाके लिये स्मरणीय दिन लेखरामने पुलिसकी नौकरीसे त्यागपत्र दे दिया और लिख दिया कि दो महीनेकी कानूनी मियादके पीछे उसे रोकनेका किसीको भी अधिकार न होगा। दो मासके पश्चात् २४, सितम्बर, १८८४ ई० को यह त्यागपत्र फिर पेश हुआ। लेखरामको त्यागपत्र लौटानेके लिये अङ्गरेज़ हाकिमोंने बहुतेरा समझाया,

किन्तु वहां तो लगन और ही लग चुकी थी; हमारे वीर चरित्र-नायकने किसीकी न सुनी और ३० सितम्बर १८८४ ईसवीसे त्यागपत्रकी मंजूरीका हुकुम २४ सितम्बरको ही अपने हाथसे लिख और निकलसन साहबके उसपर हस्ताक्षर कराके मनुष्यों के दासत्वसे स्वयं सदाके लिये मुक्त हो गये। इस दासत्वकी सांकलके कटते ही लेखराम पुलिस सारजण्ट पण्डित लेखराम बन गये।

यह बात प्रसिद्ध है कि यवनोंके संसर्गसे पञ्जाब प्रान्तमें मांस भक्षणका प्रचार आर्य्य जातिमें भी बहुत था और सीमा प्रांतके जिलोंमेंसे पेशावर तो उस समय भी मांसाशियोंका गढ़ समझा जाता था। यही कारण था कि पञ्जाबके पहले आर्य्यसमाजियोंने अहिंसा धर्म्मके पालनकी ओर अधिक रुचि नहीं दिखाई थी। मूर्तिपूजा और मृतकश्राद्धके खण्डनमें जो बड़े अग्रणी थे वे सन्ध्या अग्निहोत्रके अभ्यास और मद्य मांसादिसे वैराग्यको आवश्यक नहीं समझते थे, कारण यह था कि पहले पहल बहुधा नकली और फसली आर्य्य बहुत थे। किन्तु पण्डित लेखराम असली आर्य्योंमें एक ऊंचा पद रखते थे। मद्य तो पहलेसे ही उनके लिये घृणित वस्तु थी किन्तु मांस-भक्षणको भी पापोंमेंसे एक समझते थे। सन्ध्यामें अनध्याय-को वह सबसे बढ़कर पाप मानने लगे थे। मुझे यह पता नहीं लगा कि उन्हीं दिनों नित्य हवनका प्रारम्भ किया था वा नहीं, किन्तु उनके अन्य चरित्रोंसे यही अनुमान होता है कि वैदिक

धर्म्मकी शरणमें आते हुए उन्होंने सच्चे धर्म्मकी प्राप्तिको जीवन और मृत्युका प्रश्न समझा था।

यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है—"होनहार विरवानके चिकने चिकने पात"। पण्डित लेखराम पर यह लोकोक्ति सर्वाङ्गमें चरितार्थ थी। जिस आर्य्यपथिकने धर्म्मप्रचारके लिये यात्रा करते हुए दिन रातको एक कर देना था, जिस लेखवीरने सत्य धर्म्मकी रक्षाके लिये अपूर्व ग्रन्थ लिखने थे और जिस शास्त्रार्थ के धनीने वैदिक धर्म्मके विरोधियोंको स्थान स्थानपर निरुत्तर करना था, उसको आर्य्यसमाजमें प्रवेश करते ही शास्त्रार्थ तथा लेखका अभ्यास हो चला था।

पेशावर आर्य्यसमाजके भाइयोंकी कृपासे मुझे लेखरामकी सभासदीके समयके सब रजिस्टर मिल गये हैं। एक ओर तो समाजका सारा आय व्ययका हिसाब लेखरामके हाथका लिखा हुआ है, और दूसरी ओर आये गये पत्रोंकी प्रति लिपि लगभग उन्हींके हाथकी है। आये हुए पत्रोंकी नकल तो किसी अन्यके हाथकी है,किन्तु जो पत्र भेजे गये उनका सारांश प्रायः पण्डित-जीका अपना लिखा हुआ है। ८ फरवरी १८८२ ई० को आपने पादरी एम० वेरी साहबसे इन्जीलके ईश्वरीय ज्ञान हो तथा मुक्तिके लिये ईसा पर ईमान लानेकी जरूरत पर शास्त्रार्थ का घोषणापत्र भेजा। इसका जो उत्तर पादरी साहबकी ओरसे आया वह बड़ा गोल-माल है। इस समय समाजके मन्त्री होते हुए भी पण्डित लेखराम अपने आपको "मैनेजर पेशावर आर्य्य

समाज" लिखा करते थे और थे भी तो सर्व प्रकारके प्रबन्ध-कर्त्ता थे ही।

पेशावर शहरसे जब पुलिसकी नौकरीमें बाहर बदल गये थे, तब भी मासिक चन्दा देते हुए आर्य्य समाज पेशावरके सभासद बराबर बने रहे। एक बार किसी कामके लिए पेशावर आये तो साप्ताहिक अधिवेशनमें, जो एक तहसीलदारकी धर्मशालामें हो रहा था, सम्मिलित हुए। साप्ताहिक अधिवेशनकी समाप्ति पर अन्तरङ्ग सभाके सभासद बैठे रहे और विचार यह यह होने लगा कि जिन तहसीलदार महाशयकी धर्मशाला अधिवेशनोंके लिये मिली है उनको ही समाजका प्रधान बनाया जाय। तहसीलदार साहब भी विराजमान थे। पण्डित लेखरामने बिना सङ्कोचके कहा—"यह मांस खाते और शराब पीते हैं; ऐसा आदमी प्रधान नहीं होना चाहिये।" अन्य सब सभासद तहसीलदार साहबको प्रधान बनानेपर तुल गये। तब पण्डित लेखराम अप्रसन्न होकर उठ गये, क्योंकि ऐसे विचारको सुनना भी वह पाप समझते थे।

सं० १८८२ ई० में जब पण्डित लेखराम अभी पेशावरमें ही थे ऋषि दयानन्दकी ओरसे उन्हें दो पत्र मिले। एकके साथ गोरक्षा-विषयक प्रार्थना पत्र प्रजाके हस्ताक्षरोंके लिये था और दूसरेमें पंजाबमें हिन्दीके प्रचारके लिये शिक्षा कमीशनको मेमोरियल भेजनेकी प्रेरणा थी। दोनों कार्य्य पण्डित लेखरामने बड़े उत्साहसे कराये।

अभी पण्डित लेखराम पेशावरसे बाहर थानोंमें ही घूम रहे थे कि उनके पास क़ादियाके "मिर्ज़ा गुलाम अहमद" की बनाई पुस्तक "बुराहीन अहमदिया" पहुंच गई, जिसमें मिर्ज़ाजीने पहले पहल पैग़म्बरीका दावा किया था, साथ ही यह पता लगा कि मिर्ज़ा गुलाम अहमदके बड़े चेले हकीम नूर-उद्दीनकी सङ्गतसे जम्मूमें एक ठाकुरदास नामी हिन्दू महम्मदी मत स्वीकार करनेको तय्यार है। पण्डित लेखराम तीन चार बार छुट्टी ले ले कर उसे समझानेके लिये जम्मू गये और इनका पुरुषार्थ इतना फलदायक हुआ कि ठाकुरदास क़ादियानीका गुलाम बननेसे बच गया।

इन्हीं दिनों पण्डित लेखरामने मिर्ज़ाकी "बुराहीन" के चारों हिस्से पढ़ डाले और जब चौथे भागमें आर्य्यसमाज और आर्य्यसिद्धान्तों पर विषमय आक्रमण देखे तो तत्काल ही उस पुस्तकका उत्तर लिखना आरम्भ कर दिया। आर्य्यपथिकको जिस बातकी धुन लगती उसके आरम्भ करनेमें एक पलकी देर करना भी उन्हें दूभर हो जाता था। वहां नया काग़ज़ मंगानेका समय कहां था, आर्य्यसमाज पेशावरके रजिस्टरपर ही उत्तर घसीटने लग गये।

जम्मूमें पण्डित लेखराम पण्डित नारायण कौलके यहां ठहरे जो प्रसिद्ध पण्डित मनफूलके भाई थे। यह महाशय अरबी तथा फ़ारसीके बड़े विद्वान् थे। इनसे पण्डित लेखरामको "बुराहीन अहमदिया" के खण्डनमें बड़ी सहायता मिली।

धर्मान्दोलन तथा धार्मिक विषयोंके विचारमें तो लगन पहले से ही लग चुकी थी, ऋषि दयानन्दकी, धर्म तथा देशके लिये, शोकजनक मृत्युने और भी अधीर कर दिया और सारे संसार-को वैदिक धर्मके झण्डेके नीचे लानेका कर्त्तव्य भी लेख-वीरने अपना ही समझ कर धर्म-वीरका पद प्राप्त करनेकी ओर पग उठाया। कोई आर्य्य जातिमेंसे ईसाई वा मुसलमानी मतोंकी का ओर झुके तो उसे बचानेका बीड़ा लेखराम उठाते थे; जन्मके ईसाई और मुसलमानको वैदिक धर्मकी शरणमें लानेका अपना कर्तव्य बतलाते थे; वैदिक धर्मपर कोई भी आक्षेप हो उसका उत्तर देना इनका कर्त्तव्य था और प्रत्येक प्रकारके नास्तिकत्वका खण्डन इनका ही धर्म था।

इन्हीं दिनों यह समाचार गरम था कि मुजफ्फ़र नगरके रईस, चौधरी घासीरामजी महम्मदी मतकी ओर झुके हुए हैं। ऐसा भी अनुमान होता है कि शायद उस अवसरपर छुट्टी न मिलनेके कारण ही पण्डित लेखरामने सरकारी नौकरीसे त्याग पत्र दे दिया हो। मेरे चचा उन दिनों मुजफ्फ़रपुरमें पुलिस इन्सपेक्टर थे। उनसे मुझे पता लगा कि आर्य्य उपदेशकोंने महम्मदी मौलवियोंको लाजवाब कर दिया था।

कुछ ही हो पण्डित लेखरामने अपना त्यागपत्र स्वीकार होने तक कादियानी मिर्जाके जवाबमें "तकजीब बुराहीन-अहमदियाका प्रथम भाग" तय्यार करके लिख लिया था।

छठा अध्याय

धर्म प्रचारमें अनुराग



दासत्वसे मुक्त होते ही सबसे पहले आर्यसमाज रावलपिन्डीके वार्षिकोत्सव पर पहुंचे। उन दिनों वे बड़े वक्ता न थे कि विना लिखे कोई विषय निभा सकें किन्तु फिर भी एक लेखबद्ध व्याख्यान उस उत्सवमें पढ़ा। उसका शीर्षक था— "आर्यसमाजके आलमगीर होनेके सबूत और उसके आइन्दा तरक्कीके निशान मज़बूत।" क़ाफ़िया मिलानेका पहलेसे ही शौक़ था। यह व्याख्यान लाला गङ्गाराम धवने मेरे पास रावलपिन्डी आर्यसमाजके कार्यालयसे निकाल कर भेजा था जो २१ तथा २८ आषाढ़, संवत् १९५४के सद्धर्म-प्रचारक में छप चुका है। इस व्याख्यानमें पण्डित लेखरामने यह बड़ा उदार भाव प्रकट किया था कि :—

"स्वामी दयानन्द और बाबा नानकजीके खयालात वाहिद थे। मेरे ख़्यालमें वह (बाबा नानकजी) वेदोक्त धर्मको तरक्की देनेवाले थे और हत्तलवसा (यथा शक्ति) उन्होंने आर्य्य धर्म फैलानेमें बहुत कोशिश की।" रावलपिन्डीसे गुरुदासपुर पहुंच कर एक ओर तो मिर्ज़ा साहबको शास्त्रार्थके लिये

चैलेञ्ज भेजा और दूसरी ओर १ अक्तूबर १८८४ को विज्ञापन देकर बड़ी जनताकी उपस्थितिमें उनके आक्षेपोंके उत्तर पढ़े गये। मिर्ज़ा गुलाम अहमदने तो आना ही क्या था; हां आर्यजगत्‌में जो खलबली मिर्ज़ाके ग्रन्थने मचाई थी वह दूर हो गई। पण्डित लेखरामकी यह पहली पुस्तक ऐसी ज़बरदस्त समझी गई कि बहुत लोगोंने इस की हस्तलिखित प्रतियां, बड़ा व्यय करके, प्राप्त कीं।

गुरुदासपुरमें व्याख्यान देनेके पश्चात् पण्डित लेखराम लाहौर लौट गये और वहां कुछ दिनों, उपदेशका कार्य भी जारी रखते हुए, संस्कृत व्याकरणका अभ्यास करते रहे। पण्डित लेखराम इस समय दृढ़तासे संस्कृत साहित्य, विशेषतः वैदिक साहित्यका स्वाध्याय नियम पूर्वक गुरुमुखसे करना चाहते थे, किन्तु यह काम प्रथम आश्रम की शान्त अवस्थामें ही हो सक्ता है। पण्डित लेखरामके अन्दर, संसारमें अविद्या का राज्य देख कर बड़ी भारी हल चल मच चुकी थी। ऋषि दयानन्दकी अकाल मृत्युने उनका उत्तरदातृत्व बहुत बढ़ा दिया था, इस लिए जब उस क़ादियानी मिर्ज़ाकी ओरसे, जिसके "झूठे दावोंका तरदीद" यह ग्रन्थ रूपमें कर चुके थे, एक विज्ञापन देखा, जिसमें उसने महम्मदी मतकी पुष्टि में चमत्कार (Miracle) दिखानेकी प्रतिज्ञा की थी, तो इन-से न रहा गया।

मिर्ज़ाजीने अपने इश्तिहारमें चौमुखी लड़ाईकी घोषणा दी थी। उन्होंने सर्व मतस्थ पुरुषोंको इस लाभकी दावत दी थी और अपने आपको "खुदाका पैग़ाम्बर" सिद्ध करने के लिए प्रतिज्ञा की थी कि यदि क़ादियांमें एक वर्ष तक रख कर वह कोई दैवी चमत्कार (आसमानी निशान) न दिखा सकें तो इस प्रकार एक वर्ष रहे हुए मनुष्यको २००) मासिक के हिसाबसे २४००) देंगे। पण्डित लेखरामने जब यह इश्तिहार पढ़ा उस समय वह अमृतसरमें थे। विज्ञापन पढ़ते ही उन्होंने ३ अप्रैल, १८८५ ई० को मिर्ज़ाजीके नाम पत्र लिखा जिसमें उनकी शर्तोंको स्वाकार करके प्रतिज्ञा की कि जिस समय वह २४००) सरकारी कोषमें दाखिल करनेकी सूचना देंगे उसी समय लेखरामजी स्वयं क़ादियांमें पहुंच जायंगे। इसके उत्तरमें मिर्ज़ाने एक नई अड़चन लगाई कि वह साधारण पुरुषोंसे वाद विवाद नहीं करना चाहता, उसके साथ कोई अपने सम्प्रदायका प्रामाणिक और प्रसिद्ध आदमी ही जुटे तो वह तय्यार होगा। यह पत्र पण्डित लेखरामके पास लाहौरमें ६ अप्रैल १८८५ को पहुंचा और उसी दिन उन्होंने इसका उत्तर दे दिया, जिसमें पहले मिर्ज़ाकी नया अड़चनका खण्डन किया और लिखा कि उन्हें धनका लालच इस असली मुबाहसे के लिये नहीं खींच रहा प्रत्युत सत्यासत्य के निर्णयके लिये वह तय्यार होकर मैदानमें आना चाहते हैं। इसके पश्चात् मिर्ज़ाजीने नया बाधा खड़ी की। उन्होंने पण्डित

लेखरामसे भी २४००) जमा करानेकी नयी याचना की। इसी प्रकार प्रत्येक नये पत्रमें मिर्जाजीने नये नये अड़ङ्गे लगाये, जिनके मुंहतोड़ परन्तु सभ्यतामय, उत्तर पण्डित लेखरामने दिये। यह पत्र व्यवहार ५ अगस्त १८८५ तक बराबर जारी रहा किन्तु परिणाम कुछ भी न निकला।

इसी अन्तरमें पण्डित लेखरामने अमृतसर और लाहौरमें प्रचार करनेके पश्चात् १८ अप्रैलको पेशावरको प्रस्थान किया। आर्य्यसमाज पेशावरके पहले भी प्रधान थे। २५, २६ अप्रैलको अपने प्रिय आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए और उस अवसरपर व्याख्यान देनेके अतिरिक्त २६ अप्रैल तक धर्म प्रचार किया। आगामी वर्षके चुनावमें पण्डित लेखराम ही प्रधान नियत हुए और फिर पञ्जाबकी ओर लौट आये। इस ओर भी बराबर धर्म-प्रचार करते हुए २० जुलाईसे ५ अगस्त तक अमृतसरमें निवास किया। इस स्थानमें उन्हें मिर्जा गुलाम अहमदके उत्तरोंकी प्रतीक्षा रही।

जब मिर्जाजीकी ओरसे कोई उत्तर न मिला और तीन मास व्यतीत हो गये (जिस अन्तरमें पण्डित लेखराम धर्म प्रचारका कार्य्य करते और साथ साथ पुस्तकें लिखनेका काम भी जारी रखते गये) तो आर्य्य मुसाफिरने मिर्जाजीको स्मरणार्थ एक पोस्टकार्ड भेजा जिसके उत्तरमें मिर्जाजीने लिखा—"क़ादियां कोई दूर तो नहीं है, आकरके मुलाक़ात कर जाओ। उम्मीद कि यहां पर बाहमी (परस्पर) मिलनेसे

शरायत तै हो जावेगी।" धर्मवीर आर्य्य मुसाफिरको तो केवल हाथ अटकानेको स्थान चाहिये था, वह उसी समय मिर्जाजीको परीक्षाके लिये तय्यार हो गये और जिस चालबाज़ बाघके पास जानेसे बड़े बड़े मतवादी डरते थे निःशङ्क उसके साथ उस-ही मकानमें "दस्त पञ्जा" लेनेके लिये जा पहुंचे।

पण्डित लेखरामजी पूरे दो मास क़ादियामें रहे। एक ओर तो उन्होंने मिर्जाजीके "इस्लामी कोठे" पर जा २ जाकर उनका नाकमें दम कर दिया। तीन बार कई भद्र पुरुषोंको साथ लेकर गये और तीनों बार मिर्जाजीको निरुत्तर करके लौटे। और दूसरी ओर खुले व्याख्यानोंमें न केवल मिर्जा-जीके "बुराहीन" की ही क़लई खोली, बल्कि उनको इल-हामी चालबाज़ियोंका भी भण्डा फोड़ दिया, जिससे मिर्जा-की आमदनीमें बड़ी बाधा पड़ गई। इन्हीं दिनों कादियांमें आर्य्यसमाज भी स्थापित हो गया जिसमें मिर्जाजीके फांसे हुए बहुतसे भोले हिन्दू भी सत्यासत्यका निर्णय करके सत्यकी शरणमें आये?

मिर्जा गुलाम अहमदका नाकमें दम कर और कादियां-में एक जबरदस्त आर्य्यसमाज स्थापन करके पण्डित लेखराम फिर अन्य स्थानोंमें वैदिक धर्मका प्रचार करने चले गये। बटाला आदि नगरोंमें धर्मोपदेश देकर तृषित आत्माओं को शीतल सद्धर्म रूपी जल पिलाते हुए आर्य्यपथिक अम्बाले पहुंच कर अपना कर्त्तव्य पालन कर रहे थे जब उन्होंने

सुना कि कादियांके "विष्णुदास" नामा हिन्दूको बुलाकर मिर्जाजीने कहा है कि वह एक सालके अन्दर मुसलमान न हो जायगा तो उनके "इलहामके मुताबिक" वह मर जायगा। २ दिसम्बर, १८८५ को विष्णुदासको मिर्जाजीने यह धमकी दी और तार पहुंचते ही ४ दिसम्बरको पण्डित लेखराम बिजलीकी तरह कादियांमें आ चमके। उसी दिन विष्णुदासको बुलाकर समझाया और खुले व्यख्यानमें मिर्जाजीकी फिरसे वह कलई खोली गई, कि भूला भटका भाई सचमुच व्यापक विष्णु भगवान्‌का दास बनकर आर्य्यसमाजका सभासद बन गया और उसी दिनसे मिर्जाजीकी कुटिल नीतियोंका खण्डन होने लगा।



सातवां अध्याय

क्रियात्मक आर्य्य मुसाफिर बनना



सं० १८८६ ई० के आरम्भमें पण्डित लेखरामकी योग्यताकी आर्य्यजगतमें धूम मच गई थी। "तकज़ीब बुराहीन अहमदिया" का प्रथम भाग ठीक प्रबन्ध न होनेसे अभी छप नहीं सका था परन्तु उसकी नकलें होकर दूर दूर पहुंच चुकी थी। महम्मदियोंके मुकाबिले पर आर्य्यसमाजियोंने उस पुस्तककी युक्तियोंसे काम लेना आरम्भ कर दिया था। जहां कहीं मुसलमानोंसे मुबाहिसेकी छेड़छाड़ होती वा उनका कुछ भी जोर होता वहींसे पण्डित लेखरामको निमन्त्रण पहुंच जाता।

इस ईसवी सन्‌के मार्च मासमें मिर्जा गुलाम अहमद होशियारपुरमें गये। वहां आर्य्यसमाजके प्रसिद्ध सभासद् मास्टर मुरलीधरजी गवर्नमेंट स्कूलमें ड्राइङ्ग मास्टर (आलेख्याध्यापक) थे। मास्टरजी उन आर्य्योंमें से थे जो वेद-विरुद्ध मतोंकी पोल खोलनेके लिये हर समय तय्यार रहते हैं। मिर्जाजीकी डींग़ोंको सुन कर मास्टरजीसे रहा न गया और ११ मार्च, १८८६ की रातको उन्होंने मिर्जाजीके डेरे पर पहुंच

कर महम्मद साहबके चांदके टुकड़े करने वाले चमत्कार (मोजज़) पर लेख बद्ध आक्षेप किये। अनुमान ५ वा ६ घण्टों तक प्रश्नोत्तर होते रहे। फिर १४ मार्च १८८६ के दिन मिर्जाजीने यह प्रतिज्ञा स्थापन की कि रूह (जीवात्मा) अनादि नहीं, पैदाकी हुई (हादिस) है। इस प्रश्नके सुनाने और बातें बनानेमें ही मिर्जाजीने दो अढ़ाई घण्टे समाप्त कर दिये और फिर पांच ६ घण्टों तक प्रश्नोत्तर होते रहे। मिर्जा जीको तो इस समय रुपये बटोरनेकी सूझ रही थी और गम्भीर विषयकी पुस्तकोंकी अपेक्षा बटेरबाजी वाली पुस्तकें अधिक बिकती हैं, इस लिये इस मुबाहिसेपर अपने ढङ्गका निमक मिरच मसाला चढ़ा कर उन्होंने एक २६० पृष्ठोंकी पुस्तक "सुरमा चश्म आरिया" (अर्थात् आर्य्योंकी आंखोंके खोलनेके लिये सुरमा) शीर्षक देकर छपवा दी।

पण्डित लेखरामके दिल पर चोट तो इस पुस्तकके छपनेसे बहुत लगी परन्तु अभी पहली तय्यार की हुई पुस्तक ही नहीं छपी थी; इस लिये उसकी छपाईमें लग कर इस बातकी भी प्रतीक्षा करते रहे कि मास्टर मुरलीधरजी ही दूसरी पुस्तक-का उत्तर छपवावें। किन्तु जब जुलाई सं० १८८७ को "तकज़ीब बुराहीन अहमदिया" का प्रथम भाग छप करके हाथों हाथ बिक गया और आर्य्यपथिकको पता लगा कि मास्टर मुरलीधरजीको सरकारी नौकरीके कारण उत्तर लिख कर छपवानेका अवकाश नहीं है तो उन्होंने स्वयं ही मिर्जाके

दूसरे आक्रमणका उत्तर भी तय्यार किया, और उसका नाम रक्खा "नुसखा-खब्त अहमदिया"। इस नाम-करणका हेतु स्वयं आर्य्यमुसाफिरने इस प्रकार दिया है—"असलमें यह मिर्जाके एतराज माकूलियतसे कोसों दूर हैं और साथ ही बेजा शेखी और लगवीयत (झूठ) से तमाम किताब भरपूर है जो रास्ती नहीं बल्कि इलहामो खब्त (पागलपन) मालूम होता है, पस, जरूर हुआ कि हम वैदिक हिकमतसे उनके खब्तका इलाज करें, ताकि खुदा सेहत दे; बिना बरां इस रिसालेका नाम "नुसखा खब्त अहमदिया रखा गया।"

सं० १८८६ के प्रथम भागमें विविध स्थानोंमें प्रचार करके पण्डित लेखराम फिर अप्रैलके अन्तिम सप्ताहमें पेशावर आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सव पर पहुंचे और अपने व्याख्यानोंसे अपने प्रथम स्थापन किये हुए आर्य्यसमाजको लाभ पहुंचाया। फिर स्थान स्थान पर व्याख्यान देनेके साथ साथ ही पादरी खड़कसिंहके छः व्याख्यानोंके उत्तर लिखकर भी छपवाये और बहुतसी छोटी २ पुस्तकें अवैदिक सिद्धान्तोंके खण्डनमें निकालीं।

पण्डित लेखरामके इस वर्षके कामके विषयमें १६ अक्टूबर, १८८६ की आर्य-पत्रिकामें एक महाशयने इस प्रकार लिखा था :—

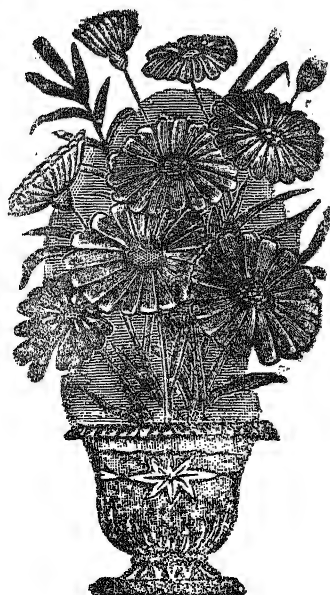
"लेखराम आर्यसमाज लाहोरका एक कट्टर सभासद है। इसने अपना जीवन समाजके लिये बलिदान कर दिया है। यह

अरबी और फ़ारसीका बड़ा विद्वान् तथा वेत्ता है। अमृतसर आर्यसमाजके गत वार्षिकोत्सवमें इसने विरोधी मतोंकी समीक्षा-पर एक उत्तम व्याख्यान दिया। इसके प्रयत्नसे कहूटाके लोगों-ने आर्यसमाज स्थापित कर दी है। इसने मियानी पिण्डदादन-खां, भेरा आदिमें अत्युत्तम व्याख्यान दिये ; मर्जीडामें लाला-गन्डामल असिस्टेन्ट इन्जिनियर को आर्य्यसमाज की सच्चाइयों पर विश्वास दिलाया और अब कश्मीर में धार्मिक शास्त्रार्थ के लिए जा रहा है।" ऊपर के उद्धृत लेख से एक तो यह पता लगता है कि अपने निवास स्थान कहूटेमें भी आर्यसमाजकी स्थापना के यही साधन बने थे, और दूसरे यह ज्ञात होता है कि इन के अर्थ-त्याग का सम्मान करना आर्य जाति ने आरम्भ कर दिया था। लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि—" घर के जोगी जोगिना, आन गांव के सिद्ध।" परन्तु ज्ञात होता है कि लेखराम उन थोड़े से आदमियों में से थे जिन का अपने ग्राम में भी मान होता है।

सं० १९८७ के आरम्भमें पण्डित लेखरामको 'आर्य्य-गज़ट फीरोजपुर' का सम्पादक बनाया गया। इस समय पञ्जाबके आर्य्यसमाजोंके हाथमें अंग्रेजीके "आर्यपत्रिका" के अतिरिक्त अपने विचार तत्काल सर्वसाधारण तक पहुंचाने का एक मात्र साधन "आर्य्य गज़ट" नामी उर्दू का साप्ताहिक ही था। पण्डित लेखरामके प्रबल हाथोंमें आ कर यह एक दम से चमक उठा। अनुमान दो वर्षों तक पण्डित लेखराम इस

समाचार पत्रका सम्पादन करते रहे। उन दिनोंके लेख पन्थाइयोंके दिलोंको हिला देने वाले निकला करते थे।

यद्यपि सम्पादकी बोझ उठाये हुए भी लेखरामजी आर्य्य-समाजोंके जलसों पर जाते रहे और धर्म प्रचार करते रहे किन्तु एक स्थानमें टिक जानेसे प्रमाणोंको ढूंढ कर हवाले देने और अपनी पुस्तकोंको छपवानेकी उनको बड़ी सुगमता मिल गई इन्हीं दिनों "तकजीब बुराहीन अहमदिया"का प्रथम भाग छपा और "नुसखा खब्त अहमदिया" भी तय्यार हो गया। इसी अन्तरमें दस बारह अन्य छोटी २ पुस्तकें तय्यार हुईं और कुछ छप भी गईं, और अन्य बहुत सी बड़ी पुस्तकों के लिये मसाला इकट्ठा होता रहा।



आठवां अध्याय

ऋषिजीवनका अन्वेषण



अब तक यद्यपि नाम "आर्य मुसाफ़िर" था परन्तु यात्रा की परिधि संकुचित सी ही थी। पञ्जाब से बाहर आर्य्य पथिक ने पांव नहीं रक्खा था। तब यात्रा की परिधिमें विस्तारके सामान पैदा होने लगे।

ऋषि दयानन्दका अन्त्येष्टि संस्कार हुए साढ़े चार वष व्यतीत हो चुके थे। आर्य्य विभिन्न जनता की ओरसे भी ऋषिके जीवन चरित्रकी मांग पर मांग आरही थी। टका सीधा करनेवालोंने साधारण लेख छाप कर ऋषिके जीवन को सन्दिग्ध बनाना भी आरम्भ कर दिया था। सांसारिक विभूतियों पर लात मारने वाले योगीको सिद्धियोंका साधक बनाना और मनुष्य पूजाकी जड़ पर कुल्हाड़ी रखनेवाले ईश्वर भक्तको पूज्य अवतार बतलाना आरम्भहो गया था, और आर्य्य समाजियोंके कानों पर जूं भी नहीं रेंगती थी। ऐसे समयमें मुलतान आर्य्य समाजने अपने १२ अप्रैल, सं० १८८८ के अधिवेशनमें सम्मति दी कि पण्डित लेखरामको स्वामी दयानन्दके जीवन-सम्बन्धी वृत्तान्त इकट्ठा करनेके लिए नियत

किया जाय। मुलतान आर्य्यसमाजका यह प्रस्ताव आर्य्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाबके १ जुलाई, सं० १८८८के अधिवेशन में पेश होकर स्वीकार हुआ। तब परिडत लेखरामजीसे इसके विषयमें पत्र व्यवहार शुरू हुआ और नवम्बर, १८८८ में "आर्य्य गज़ट" के सम्पादनको छोड़कर परिडत लेखराम सचमुच आर्य्य मुसाफ़िर बन गये।

इस समय तक यद्यपि परिडत लेखरामका नाम मैं सुन चुका था और अमृतसरके व्याख्यानका भी आनन्द ले चुका था, परन्तु अधिक परिचय मेरा आर्य्य पथिकके साथ नहीं हुआ था। नवम्बरके मध्यमें परिडत लेखराम ऋषि जीवन सम्बन्धी घटनाओंका वृत्तान्त जमा करने निकले और लाहौरसे कार्य्य आरम्भ किया। इस वर्षके लाहौर आर्य्य समाजके वार्षिकोत्सवमें परिडत लेखरामने २८ नवम्बरको, धर्म चर्चाके समय शङ्का समाधानमें बड़ा प्रसिद्ध भाग लिया, जिसके कारण उपदेशकोंमें उनका पद ऊंचा समझा जाने लगा। उसके पश्चात् १२ दिसम्बरकी शामको रेलसे परिडत लेखरामजी जालन्धर नगरमें पधारे। १३ को प्रातःकाल मेरे साथ परिडत जीका वार्त्तालाप होता रहा, जिससे हम दोनों एक दूसरे के अधिक समीप हुए। उसी सायंकाल परिडतजीका "वेद ईश्वरीय ज्ञान" विषय पर, आर्य्यमन्दिर जालन्धर शहर में, व्याख्यान हुआ। मेरी "दैनिक वृत्तान्त पञ्जिका" में लिखा है, फ़िर परिडत लेखरामका व्याख्यान सुनने गया। जन

संख्या ५०० थी जिसमें सुशिक्षित सभ्य अधिक सम्मिलित थे। पंडितजीकी स्मरण शक्ति आश्चर्य जनक है।

जालन्धर नगर से चल कर शायद मार्ग में एक दो स्थानों पर ठहरते हुए पंडित लेखराम सीधे मथुरा पहुंचे। वहां सारा दिसम्बर मास स्वामी विरजानन्द सरस्वतीजीके शिष्य-गण-पंडित युगलकिशोर, पंडित दामोदर चौबे, पंडित हरिकृष्णादि से ऋषि दयानन्द और उन के गुरु सम्बन्धी वृत्तान्त पूछते और लिखते रहे।

सं० १९८८के प्रथम भागमें पंडित लेखरामजी बराबर संयुक्त-प्रान्तमें ही काम करते रहे। जहां ऋषि जीवन सम्बन्धी अन्वेषणाके लिए पहुंचते वहां व्याख्यान भी अवश्य देते, और यह व्याख्यान वेदमत-मंडन तथा महम्मदी-मत-खण्डनमें ही होते। मथुरादिसे ऋषि जीवनका मसाला इकट्ठा करते हुए आर्य्य पथिक अजमेर पहुंचे। उस समय अजमेर नगर में बड़ा भारी आत्मिक भूचाल आया हुआ था। आर्य्य समाजकी दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति देखकर पौराणिकों, ईसाइयों, मुसलमानों और जीव-रक्षाका दम भरनेवाले जैनियों तकने विरोधका झन्डा खड़ा कर दिया था। इसका विशेष कारण यह भी था कि उन्हीं दिनों पंडित लेखरामकी "तकजीब" और "नुसखा खब्त" पढ़ कर अजमेर का एक अब्दुलरहमान नामी व्यक्ति महम्मदी मत को तिलाञ्जलि देकर वैदिक धर्म की शरण में आया था। आर्य्य समाज की ओरसे इसे सोमदत्तका

सौम्य नाम दिया गया था। इससे मुसलमान बहुत ही दुःखित थे और इन्होंने ही पौराणिक मण्डलको उत्तेजना देकर पहले उनका उत्सव रचवाया था। आर्य्य बेचारे छेड़ छाड़से किनारा किये बैठे थे कि पौराणिकोंके दूत उनके घरोंमें पहुंच पहुंच कर ललकारने लगे। इन्होंने तो इसकी कुछ परवा न की किन्तु १० वा १२ युवकोंसे न सहन हो सका और वे प्रश्नोत्तर के लिये पौराणिकोंके निमन्त्रणानुसार पहुंच ही गये। जब प्रश्नोत्तर का समय आया और एक आर्य्य युवकने पहला ही प्रश्न किया तो पौराणिक दल घबरा गया और कुछ बदमाशोंने शोर मचा कर, कि आर्य्योंने एक मूर्त्तिको खण्डित कर दिया है, आर्य्योंपर लात, घूंसा और लाठीसे आक्रमण कर दिया। इस समय सोमदत्तने बड़ी बहादुरी दिखाई और पटेके हाथसे भीड़ को हटाता हुआ आर्य्य युवकोंको बचा लाया।

जब इधर कुछ पेश न गई तो मुसलमानों की बारी आई। उन्होंने न केवल आर्य्य समाजके विरुद्ध खुले व्याख्यानोंमें ही आक्रमण शुरु किये बल्कि सहस्रोंने इकट्ठे होकर यह धमकी दी कि यदि कोई आर्य्य बोला तो जानसे मारा जायगा। "रहनुमा" नामी एक मासिक पत्र भी मुसलमानोंने उसी समय निकाला था।

यह समय था जब पण्डित लेखराम अजमेर नगरमें पधारे। पण्डित लेखरामके पहुंचने पर आर्य्य पुरुषोंको अपनी चिन्ता तो भूल गई, उल्टी इनकी रक्षाकी चिन्ता लग उठी। विचार

किया गया कि पण्डितजीकी रक्षाके लिये चार पहरेवाले उन के पास रहें। जब धर्मवीरने इस घुसफुस को सुना तो भिड़क कर कहा—"मुझे कोई जरूरत नहीं, तुम लोग बड़े डरपोक हो। कोई क्या कर सकता है।?" दूसरे दिन ही मुसलमानोंकी ओरसे आदमी आने लगे जिनसे पण्डित जी बराबर बात चीत करते रहे। व्याख्यानोंकी धूम मच गई। एक मौलवीने पण्डितजीसे हिन्दी पढ़नेकी इच्छा प्रकट की। आर्य्यसमाजियोंके गुप्त रीतिसे मना करनेपर उनको भिड़क दिया और मौलवीको पढ़ाने लग गये। अन्तको वहांके आर्य्योंसे एक नया मासिक "वैदिक विजय पत्र" निकलवा कर उसको सहायता अपने लेखोंसे करते रहे। जो "जिहाद" नामी प्रसिद्ध पुस्तक पण्डित लेखरामकी मिलती है वह पहले इसी वैदिक विजय पत्रमें क्रमशः निकली थी।

इन्हीं दिनों अजमेरसे बाहर भी राजपूतानेके कुछ स्थानों-में ऋषि जीवन सम्बन्धी अन्वेषण करते हुए नसीराबाद छावनी में पहुंचे। वहां महम्मदियोंसे शास्त्रार्थ छिड़ गया। शहर कोतवाल शराबी कायस्थ था जिसने शास्त्रार्थको मध्यमें ही बन्द कर दिया। उसी रात शराबी कोतवालको लकवा मार गया और दूसरे दिन वह मर गया। सर्वसाधारणमें प्रसिद्ध हो गया कि उस दुष्टको पंडितजीका शास्त्रार्थ बन्द करनेका फल मिला। अन्य उपदेशक शायद सर्व-साधारणके इस

मिथ्या विश्वाससे अनुचित लाभ उठाते किन्तु आर्य्यपथिकने लोगोंके इस भ्रमको दूर करनेका बहुत ही प्रयत्न किया।

इसके पश्चात् पता लगता है कि पंडितजी छुट्टी लेकर अपने गृह पर आये। थोड़े दिनों ही घर पर ठहर कर भादों के आरम्भमें फिर अपने कामपर चले गये। २४ अगस्त सं० १८८६ के सद्धर्म्म-प्रचारकमें छपा था—"पंडित लेखरामजीने सवानह उमरी (जीवन चरित्र) का काम फिर शुरू कर दिया है। चन्द रोज़ हुए वह मेरठकी तरफ रवाना हुए। अब पहले मुमालिक मग़रबी व शिमाली (पश्चिमोत्तर देश) में दौरा लगायेंगे।"

मालूम होता है कि मेरठमें आर्यपथिक बहुत दिनों तक ठहरे, क्योंकि "नियोग वेदगान" नामी पुस्तक मेरठके रामचन्द्र वैश्यसे छपवा कर माघ १९४६ के आरम्भमें ही सद्धर्म प्रचारक के कार्यालयमें पहुंच गई थी। उस लघु पुस्तककी समालोचना मेरी लिखी हुई ९ फरवरी, १८९० के सद्धर्म प्रचारकमें छपी है। इस पुस्तकमें शास्त्रीय प्रमाणोंसे भी विधवा विवाह का ही समर्थन किया गया था। इसी लिए मुझे पहले पहल उस समय यह सन्देह हुआ था कि आर्यपथिक नियोगको आपत्-कालका धर्म कदाचित् नहीं मानते हैं। समालोचना करते हुए मैंने लिखा था—"तर्जतहरीरसे वाजह होता है कि पण्डित साहेब नियोगको वेदानुकूल नहीं मानते, बल्कि पुनर्विवाह हर बेवाका जायज़ समझते हैं। हमारी रायमें बेहतर हो

अगर पण्डित साहेब इस बहसको छेड़ें ताकि इस अमर मुतनाज़ियाका कुछ फ़ैसला हो और आर्य्यसमाज एक खास नियमका पाबन्द हो जावे।" इस विषयको इसी स्थानमें समाप्त करनेके लिये इतना लिखनेकी आवश्यकता है कि संवत् १९५० वि० तक पण्डित लेखराम नियोगके विषयमें कुछ सन्दिग्ध सी सम्मति रखते थे और प्रायः प्रसिद्ध आर्य्य समाजियोंके साथ इस विषयमें बातचीत करते रहते थे। जब संवत् १९५१ में मेरे साथ अधिक परिचय हुआ और खुली बात चीत होने लगी उस समय मेरे साथ विचार करने पर हा उन्हों ने इस विषयमें अपनी सम्मति बदल ली थी और इसी लिए उन्होंने पादरी टी० विलियम्स और पंडित शिवनारायण अग्निहोत्री (वर्त्तमान देवसमाजी गुरु) की शङ्काओंका समाधान करनेके लिये, "मसला-नियोग" नामी ट्रेक्ट लिखा जो "कुलियात आर्य्य मुसाफिर" के २७९ पृष्ठसे आरम्भ होता है। मुझे भली प्रकार विदित है कि अपनी मृत्युसे एक वर्ष पहले वह द्विजोंके लिये नियोगका हो विधान ठीक समझते थे, परन्तु शूद्रोंके लिये पुनर्विवाहको ही शास्त्र सम्मत मानते थे। मेरठ से चल कर आर्य पथिक कौल (अलीगढ़) में पहुंचे। उपनगर बरौठा में उन्हीं दिनों आर्य समाज स्थापित हुआ था, वहां १९ जनवरी १८९० को व्याख्यान दिया जिसमें प्रायः राजपूत अधिक सम्मिलित हुए और आर्य्य समाजको २० नये सभासद

मिले। फिर २१ और २२ जनवरीको खास अलीगढ़में दो व्याख्यान देकर आगे चल दिये।

इसके पश्चात् आर्य्य पथिक संयुक्त प्रान्त और पंजाबके नगरोंमें सद्धर्मका प्रचार करते हुए ऋषि दयानन्दके जीवन सम्बन्धी घटनायें लिखते रहे, और भ्रमण करते हुए बीमार होकर अगस्त, सं० १८९० के मध्यभागमें जालन्धर पहुंचे। यहां पहुंच कर उनको ज्वर बड़े जोरसे चढ़ा। लाला देवराज के शान्ति सरोवर पर एकान्तमें उनका डेरा कराया गया।

एक दिन कचहरीसे ३ बजे ही लौट कर मैं पण्डित लेखरामजी को देखने चला गया। पण्डितजी चारपाई पर बैठे हांप रहे थे और आंखोंसे ज्वर १०५ दर्जसे बढ़ा हुआ मालूम होता था। मैंने नमस्ते की, उत्तर कुछ न मिला। मैंने पीठके पीछे हाथ डाल कर लेटाना चाहा; मेरी बांह जोरसे झटक दी और क्रोधमें भरे हुए बोले—"बस साहेब! मैं यहां नहीं ठहरूंगा। यह आर्य्य गृह नहीं है।" मैंने पूछा—"पंडितजी क्या हुआ?" क्रोधसे रुक रुक कर बोले—"पहले लाला देवराजको बुलाओ। मैं पीठ पीछे बात करना पाप समझता हूं"
लाला देवराजजीके लिये आदमी दौड़ाया गया। वह शीघ्र ही पहुंच गये। धर्मवीरके होंठ फड़कने लगे और बोले—"आप काहेके आर्य हो। इस तरह "ओ३म्" भगवान्‌की हतक कराते हो।" इतनेमें मैंने वहां नियत किये हुए भृत्यको अलग ले जा कर पूछा तो पता लगा कि मामला क्या है। पण्डित लेखराम

ज्वरसे पीड़ित होकर चारपाई पर पड़े "ओ३म्" "ओ३म्" बोल रहे थे कि एक जन्मके ब्राह्मणका लड़का वहां आ पहुंचा। चारपाईके सामने कुछ दूर गमले पड़े थे। तीन चार गमलोंके ऊपर "ओ३म्" शब्द लिखा हुआ था। ब्राह्मणके लड़केने जूता उतार कर कुछ गाली बक, गमले पर लिखे "ओ३म्" पर जूते लगाने शुरु किये, पण्डितजीसे सहन न हुआ, दुष्ट की ओर लपके। लड़का भागा, पीछे स्वयं भी भागे। भला नट खट लड़के को ज्वर से पीड़ित लेखराम कैसे पकड़ सकते। जब वह आंखोंसे ओझल हो गया, तो हांपते हुए लौटे और चार पाई पर बैठ गये।

मैंने लौट कर पण्डित जी को शान्त करना चाहा और कहा—"पण्डित जी, भला देवराज जीका क्या अपराध है। उस शैतानको क्या इन्होंने बुलाया था!" उत्तर मिला—"क्यों नहीं गमलेको ऊंची जगह पर रखा जहां लड़केका हाथ न पहुंच सकता। ईश्वर जानता है मैं यहां नहीं ठहरूंगा।"

देवराजजीके नम्र उत्तर पर और भी बिगड़ने लगे तब मैंने उनको भेजकर पण्डितजीको लेटा दिया और मुट्ठी चापी करके सुलाया। यह घटना जहां आर्य्यपथिककी निर्बलताको प्रकट करती है, वहां साथ ही यह भी जतलाती है कि अपने सिद्धान्तोंके लिये उनके हृदयमें कैसी भक्ति थी।

दो सप्ताह तक पण्डित लेखराम ज्वरसे पीड़ित रहे। ज्वर उतरते ही निर्बलताको सर्वथा भुलाकर उन्होंने २९ अगस्त

१८७० के दिन पहला व्याख्यान दिया। फिर ३१ अगस्त को दूसरा व्याख्यान सद्धर्म विषयपर स्थानीय आर्य्यसमाजके साप्ताहिक अधिवेशनमें दिया। उसी समय नकोदरसे समाचार आया कि वहांका गिरदावर कानूंगो, जो कुछ कालसे महम्मदी हो गया था, अपने संशय निवृत्त करना चाहता है। दूसरे दिन ही पण्डितजी निर्बलताकी परवाह न करते हुए, इक्केकी सवारीसे, बहुतसे आर्य्य भाइयोंके सहित नकोदर पहुंचे। चार दिन बराबर धूमधामसे व्याख्यान होते रहे। एक साधू और एक पौराणिक पण्डितके साथ मूर्तिपूजा विषयपर शास्त्रार्थ भी होता रहा, जिसमें दोनों निरुत्तर हो गये। अन्तिम दिवस २५ सभासद् बनाकर आर्य्यसमाज स्थापित किया।

जालन्धरसे लाहोर पहुंच कर आर्य्य प्रतिनिधि सभाके प्रधानको मिले और फिर सीधे सहारनपुर पहुंचे। वहांसे १२ सितम्बरको कानपुरमें ऋषि जीवन सम्बन्धी अन्वेषण करते रहे और वहां बड़ी जन-उपस्थितिमें कई व्याख्यान दिये। सृष्टि-उत्पत्ति विषय पर जो अन्तिम व्याख्यान था उसकी बहुत ही प्रशंसा हुई।

कानपुरसे पण्डित लेखराम सीधे प्रयाग पहुंचे। प्रयागमें ही उन दिनों श्री स्वामी दयानन्दजी महाराजका स्थापन किया हुआ वैदिक-यन्त्रालय भी था और पण्डित भीमसेन और पण्डित ज्वालादत्त भी उसमें काम करते थे। यहां पण्डित लेखराम एक मास तक पत्र व्यवहार देखते रहे। इसी समय कुछ प्रूफ

देखते हुए आर्य्यपथिकको पण्डितोंकी पोपलीलाका पता लगा ; वेद भाष्यका एक छपा हुआ अङ्क जलवा दिया और उसका संशोधन करा कर फिरसे छपवाया। अपने पाठकोंके समझाने-के लिये यह लिखना आवश्यक है कि वेदभाष्यका संस्कृत भाग ऋषि दयानन्दका अपना लिखवाया हुआ है, परन्तु भाषार्थ सब पण्डितोंका किया हुआ है। जिन पण्डितोंने मूल संस्कृत भाष्यमें भी हस्तक्षेप करनेसे सङ्कोच नहीं किया था वे भला भाषार्थमें कब चूकनेवाले थे, जहां सारा काम ही उनके हाथोंमें था। यह पण्डित लेखरामके हलचल डालनेका परिणाम था कि वेदभाष्यसे अङ्कोंके अवलोकनका भार कुछ प्रसिद्ध आर्य्य पुरुषों-पर डाला गया।

मिर्जापुर आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवका समाचार सुन कर पण्डित लेखराम २४ अक्टूबर, १८९० ई० को उधर चल दिये। पहले दिन हवनके पश्चात् उसी विषय पर पण्डित लेखरामका युक्ति युक्त, सारगर्भित व्याख्यान हुआ। मेरे संवाददाता लिखते हैं कि ऐसा जबर्दस्त व्याख्यान मिर्जापुर निवासियोंने पहले कभी नहीं सुना था। उसी दिन शामको धर्म विषय पर व्याख्यान हुआ। दूसरे दिन आर्य्यसमाजके दश नियमों पर अपना प्रसिद्ध व्याख्यान दिया जिसको सुनकर बालवृद्ध सभी आर्य्यसमाजके गुण गाने लगे।

आर्य्यसमाजके सभासद एक कलवार थे। पण्डितजीने उन्हें समझाया कि जब वैश्यका काम करते हो तो यज्ञोपवीतसे

क्यों वंचित हो। सभासद्‌ने उत्तर दिया—"महाराज! मेरा यज्ञोपवीत यहां कौन करायगा?" वहां उत्तरमें क्या देर थी "मैं कराऊंगा; देखूं कौन सा आर्य्यसमाजी परिडत है जो सम्मिलित न होगा।" बस फिर क्या था। यज्ञोपवीतका समय नियत किया गया। न केवल नगरके प्रसिद्ध लोग ही सम्मिलित हुए प्रत्युत परिडत घनश्याम और रामप्रकाशादि जन्मके ब्राह्मण परिडतोंने स्वयं संस्कार कराया और धर्मवीर लेखरामके धैर्य देने पर बिरादरी आदिकी धमकियोंकी कुछ भी परवाह न की।

मिर्जापुरके एक वकील बड़े कट्टर मौलवी थे और साथ ही शहरके गुराडोंके सरदार। मिर्जापुर अपने गुराडोंके लिये प्रसिद्ध है। काशी तो गुराडोंके लिये जगद विख्यात है, किन्तु मिर्जापुरका लोहा उसने भी माना हुआ है। काशीकी कजरीका एक पद है :—

"कासीजीमें सोंटा चलेगा मिरजापुर तलवार"।

मिर्जापुरके गुराडोंके सरदार मौलवी वकील एक दिन पं० लेखरामके साथ मज़हबी छेड़ छाड़के लिये पहुंचे। भला आर्य्य मुसाफिरके सामने ठहरना कुछ हंसी ठट्ठा था? थोड़ी देरमें ही निरुत्तर होकर चले गये। दूसरे दिन मुबाहसेकी तय्यारी करके आये आर्य्यसमाजके प्रधानादिने उनको नियत बद देख कर अस्वीकार किया, किन्तु धर्मवीरने निर्भय होकर शास्त्रार्थ करना स्वीकार कर लिया। शहरमें हुल्लड़ मच गया।

आर्य्य भाइयोंने पंडितजीको बाहर जानेसे मना किया किन्तु उन सबने सायंकालको आश्चर्यके साथ देखा कि धर्मवीर अकेले डण्डा हाथमें लिये, पगड़ीका शमला छोड़े, घूमने जा रहे हैं।

मिर्जापुरसे पण्डित लेखराम काशीको गये और मालूम होता है कि दो मास तक वहां ही आन्दोलन करते रहे। काशी के पण्डितोंके यहां आर्य्यपथिकने बड़े चक्कर लगाये और पौराणिक पंडितोंके विरोधका बराबर हाजिर जवाबीसे मुकाबिला किया।

सं० १८६१ ई० के जनवरी मासमें पण्डित लेखराम काशी-से चल दिये। दो दिन रास्तेमें डुमरांव राजमें निवास करके १७ जनवरी, १८६१ के दिन दानापुर पहुंचे।

१७ जनवरीसे १२ फरवरी तक दानापुर, बांकीपुर और पटनामें ही काम किया। इन स्थानोंमें व्याख्यान भी हुए किन्तु बड़ी मनोरञ्जक वह वृत्तान्त-पत्रिका है जो डाक्टर मुन्नीलाल शाह, पटना आर्य्यसमाजके सामयिक प्रधानने मेरे पास भेजी थी। यतः यह पत्रिका बहुत समाचार पत्रों तथा धर्मवीर आर्य्यपथिकके जीवन वृत्तान्तोंमें छप चुकी है और यतः मुझे भी आगे चलकर इसमें लिखित विषयों पर अधिक प्रकाश डालना है, अतएव उस वृत्तान्त-पत्रिकाको डाक्टर शाहके शब्दोंमें ही मुद्रित कर देता हूं। डाक्टर शाह लिखते हैं :—

"जिन दिनों श्रीमान् पण्डित लेखरामजी श्री १०८ श्री मद्दयानन्द सरस्वतीजी महाराजका जीवन-वृत्तान्त संग्रह करते

हुए दानापुरसे बांकीपुर पधारे थे और इस दीन पुरुषके निज गृह पर आ विराजे, उस समय यह पुरुष मेडिकल क्लासका विद्यार्थी और बांकीपुर आर्य्यसमाज (बादशाही गञ्ज) का मन्त्री था। श्रीमान् पंडितजी बांकीपुरमें लगभग ९ दिनके ठहरे, इस बीच उनके मकानसे एक तड़ित-समाचार समाजके नाम अनायास पहुंचा। तार द्वारा समाजसे जिज्ञासा की गई थी कि पंडितजी जीवित हैं वा नहीं? किसी दुर्जन यवनने खबर भेजी थी कि पंडित लेखराम मारे गये!!

"इस अपूर्व घटनाका कारण मैंने पण्डितजीसे पूछा। पण्डितजीने उत्तरमें यही कहा कि प्रायः यवन लोग ऐसा ही अमङ्गल समाचार भेजा करते हैं। अस्तु, तारका जवाब, श्रीमान् पंडितजीके जीवित रहनेका, उसी दम भेजा गया परन्तु मुझको उस दिनसे यवनोंके कुटिल बर्त्तावका अशुभ ख्याल खटकने लगा। दूसरे दिन, पण्डितजीने मुझको अधिक चिन्तित और उदासीन पाकर पूछा कि आप आज मलिन देख पड़ते हैं। उत्तरमें मैंने यही निवेदन किया कि महाराज! ऐसा न हो कि किसी समयमें आपके ऊपर यवनोंका आघात पहुंच जावे! आपको उचित है कि इस असभ्य मूर्ख कौमके लोगोंसे सोच विचारके बर्त्ताव रखना। पंडितजी हंस कर कहने लगे 'मन्त्रीजी! मृत्यु एक दिन अवश्य ही है किन्तु सच्चे धर्म्मके लिये शहीद होनेके बराबर कोई दूसरी मृत्यु नहीं—तवारीख पढ़ो और देखो कि इस जमानेके पर्दे पर

जिन २ लोगोंने अपने धर्मके लिये गला दिया है, उस कर्म्म-का कैसा प्रभावशाली उत्तम परिणाम निकला है—बस, इन यवनोंके विषयमें अधिक उद्विग्न होनेकी कोई आवश्यकता नहीं—ऐसे तो ये लोग मुझको गालियां देते, पत्थर फेंकते, हमारी तसनीफ़की हुई किताबें जलवाते, जगह-ब-जगह यवन मतके पोल, इन दो किताबों (तकजीब-बुरा-हीन अहमदिया वा नुसखे-खब्त-अहमदिया) के द्वारा खुल जानेसे अभियोग खड़ा करवाने और नाना प्रकारके कुटिल वर्त्ताव बराबर उत्पन्न करनेको कुचेष्टा किया करते हैं परन्तु मैं इन पर कुछ ध्यान नहीं देता। हम लोगोंको उचित है कि अपना कर्त्तव्य कर्म्म पालन करनेमें किसी प्रकारकी त्रुटि न दिखलावें।

मैंने पुनः पूछा पण्डितजी सत्यार्थ-प्रकाशका फ़ारसी अनुवाद क्यों नहीं करते ?

उत्तरमें पण्डितजीने यह कहा—सोच तो रहा हूं कि स्वामीजी महाराजका जीवन चरित्र समाप्त कर सत्यार्थ-प्रकाशका फारसी तर्जुमा कर यवन लोगोंके मुख्य प्रदेशोंकी ओर प्रस्थान करूं।

मैंने पुनः पूछा कि मुख्य प्रदेशोंसे आपका क्या अभिप्राय है ?

पंडितजीने जवाब दिया कि अफ़गानिस्तान, परशिया, अरेबिया, मिश्र, तुर्किस्तानादि देशोंमें भ्रमण कर वैदिक-धर्म्मका प्रचार करना ही हमारा मुख्य अभिप्राय है।

मैंने पूछा—"क्यों पण्डित जी! बिना प्रतिनिधिकी आज्ञाके आप कैसे जायंगे?"

"मन्त्री जी! मैं प्रतिनिधिके आधीन हो कर जानेकी इच्छा नहीं करता, वरन् स्वतन्त्रताके साथ उपदेश करना चाहता हुं?"

"पण्डित जी! इन यवन देशोंमें आप बिना प्रतिनिधिकी सहायताके अपनी आजीविका किस प्रकार निर्वाह करेंगे?

"मंत्री जी! मैं चिकित्सा द्वारा आपनी जीवन-वृत्ति धारण करूंगा।"

"पंडितजी! क्या आपने इसमें कुछ परिश्रम किया है?"

"मन्त्रीजी! कुछ तो किया है और शनैः शनैः कर रहा हूं। देखो हमारे पास बहुतसे मुफ़ीद नुसख जमा हैं। जब मैं एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाता हूं तो चिकित्सा शास्त्रके जाननेवालोंसे प्रायः मुलाकात किया करता हूं और जो जो मुफ़ीद नुसख उनके पास होते हैं चन्द उनमेंसे नोट कर लेता हूं।"

इसी अवसरमें पंडितजीने नोट बुक निकालकर मुझको भी (प्रार्थना करने पर) दो चार नुसखें धातु आदिके विषयमें लिखवा दिये।

"पंडितजी! कल दिन एक सनातनी पौराणिकके यहां जलसा है, इसमें अनेक पंडितगण दूर दूर देशसे आये हैं

उन्होंने मुझको सूचना भेजी आप भी अपने पंडितके सहित आइये सो इस विषयमें आपकी क्या सम्मति है? श्रीमान् पंडितजीने उत्तर दिया कि अवश्य चलना चाहिये—तदनुसार हम लोग दूसरे दिन पौराणिकोंके जलसेमें शरीक हुए पंडितजीका एक व्याख्यान अवतारादि कल्पित विषयके खंडन-पर ऐसा प्रभावशाली और उत्तमतासे हुआ कि पौराणिकोंको चकाचौंध लग गया, उनमेंसे कोई निरक्षर लंठ कषाय वस्त्रधारी स्वामी दयानन्दके विरुद्ध अगड़ बगड बकने लगा पर पंडितजी-ने थोड़े ही समयमें उसका मुंह बन्द कर दिया। तत्पश्चात् सन्ध्याको हम लोग अपने स्थान पर लौट आये।

"प्रतिदिन स्वर्गवासी पंडित लेखरामजीसे धर्म्म सम्बन्धी विषयोंके ऊपर बातचीत होते होते एक दिन उन्होंने पूछा कि मन्त्रीजी! ४० चालिस पारेका कुरान आपने देखा है वा नहीं? मैंने उत्तर दिया नहीं। पंडितजी कहने लगे कि मैं इस पुस्तककी खोजमें बहुत दिनोंसे हूं पर अद्यावधि प्राप्त नहीं हुई। मैंने उनसे निवेदन किया कि इस स्थानपर एक वृहत् कुतुबख़ाना (Library) मौलवी खुदाबक्शखां बहादुरका है। इस कुतुब-ख़ानेके बराबर कोई दूसरी इधर उधर नहीं है; प्रायः पुस्तकें उनके नबियोंके और अरब मुल्कके प्राचीन मौलानोंके तसनीफ़ किये हुए हैं; सो इसको आप चलके मुलाहिजा कीजिये, शायद वह किताब मिल जाय। पण्डितजी समाचार सुनते ही बड़ी प्रसन्नता और हर्ष पूर्वक उसी समय मुझको

लेकर कुतुबखानेको आये और किताबें देखना आरम्भ किया ; ईश्वरकी कृपासे वही ४० पारेका कुरान जिसकी खोजमें इतने दिनोंसे इच्छुक हो रहे थे, प्राप्त भया। पंडितजीने प्रायः यह मुख्य मुख्य विषयोंको पिछले १० पारोंमें से नोट कर लिया और भी बहुत सी बातें अपनी डेली डायरी (रोजनामचे) में दर्ज कीं। इस कार्य्यवाहीको देख कर चन्द यवन लोगोंने जो वहां बैठे थे पण्डितजीका नाम व तारीफ मुझसे पूछा पर मैंने किसी कारण वश नाम नहीं बतलाया। इसी क्षणमें कुतुबखानेके मालिक भी पहुंच गये। उन्होंने अपने मौलवियोंसे सुना कि अमुक पंडितने कुरान (४० पारे) से बहुतसे विषय नोट किये। मालिक कुतुबखाना उस ४० पारेके कुरानके विषयमें यों कहने लगे कि कि यह किताब बड़े कठिनतासे प्राप्त भया है, अर्थात् जब वह पेशावर गये थे तब एक प्रतिष्ठित मौलवीने कई सहस्र रुपये लेकर बेचा था। उस मौलवीने मालिक कुतुबखानेसे यों बयान किया था कि यह कुरान परशिया (ईरान) के बादशाहके दीवानने अफ़गानिस्तान (काबुल) में भेजा था, उस आदमीसे मुझको प्राप्त हुआ। अस्तु, पण्डितजीसे और भी बातें होने लगीं,पण्डितजी कार्य्य समाप्त होने पर अधिक न ठहरे और हम लोग अपने डेरे पर बातचीत करते हुए लौट आये।

"दूसरे दिन हम लोग खड़गविलास नामक यन्त्रालयमें पहुंचे। समाचार मिला था कि उस प्रेसमें "कवि-वचन-

सुधा" का, जिसको बाबू हरिश्चन्द्र काशीसे प्रकाशित करते थे, पूरा पूरा फाइल है? सुतरां पंडितजीने फाइलको मांगा और उन लोगोंने भी कृपया दे दिया। पण्डितजीको जो कुछ नोट करना था सो सब लिख लिये; इस पत्रमें स्वामीजीके विषयमें अनेक उत्तम २ विषय प्रकाशित हुए थे, हुगली शास्त्रार्थ इसी पत्रमें प्रथम प्रथम ज्योंका त्यों छपा था।

"स्वामीजीका भ्रमण वृत्तान्त जब पण्डितजी पटनेका संग्रह कर चुके, तब कलकत्ता प्रस्थान करनेकी तय्यारी की। जब तक पण्डितजी यहां ठहरे तक सभासदोंको पूर्णरूपसे उत्साह देते रहे। आपके कई व्याख्यान पबलिकमें हुए जिसका असर बहुत ही लाभकारी हुआ। पण्डितजी जब कोई बात ऐसी सुनते थे जो उनकी आत्माको प्रिय न होती थी तो उस पुरुषसे बहुत शीघ्र रंज हो जाते थे परन्तु साथ ही यह रंज बहुत क्षणिक रहता था। कलकत्तामें मैं बराबर पण्डितजीके साथ रहा और बहुतसी शिक्षा उनसे प्राप्त की—आपको तवारीखका बड़ा शौक था, अतएव बहुतसे विषयका विस्तृत ज्ञान आप हासिल किये हुए थे"।

१३ फरवरी सं० १८६१ के दिन आर्य्यपथिक बांकीपुरसे हावड़ा जाने वाली गाड़ीमें सवार हुए और १४ फरवरीको कलकत्ते पहुंच कर आर्य्यावर्त्त समाचार पत्रके कार्य्यालयमें डेरा किया।

इसी वर्ष १२ अप्रैलको हरद्वारके कुम्भका नहान और एक मास पहलेसे ही बड़ा भारी मेला लगने वाला था। ऋषि दयानन्दके परलोकगमनके पश्चात् यह पहला ही कुम्भ था, और मैंने इस अवसर पर प्रचारके लिये बड़ा बल दिया था। मेरे लेखोंको कलकत्तेमें पढ़कर आर्य्यपथिकको भी बहुत जोश आया। उन्होंने ७ मार्च, १८९१के आर्य्यावर्त्तमें मेरे लेखके साथ सर्वथा सहमत होकर मुझे आज्ञा दी कि उनके हिसाबमेंसे ५) आर्य्यसमाज जालन्धरके कोषाध्यक्षसे लेकर कुम्भ प्रचार फण्डमें दाखिल कर दूं। पण्डित लेखरामके लेख पर पञ्जाब और संयुक्त-प्रांतकी आर्य प्रतिनिधि सभाएं भी जाग उठीं और मुझे आज्ञा हुई कि प्रचारका प्रबन्ध करनेके लिये हरद्वार चला जाऊं। मेरे हरद्वार पहुंचनेके तीन दिनोंके पश्चात् ही पण्डित लेखरामजी भी कलकत्तेसे ५०) चन्दा करके साथ लिये हुए पहुंच गये थे और जब अकस्मात् मुझे प्रचारके बीचमें से ही जालन्धर लौटना पड़ा तो मेरे निवेदनपर पण्डितजीने राजकुमार जनमेजयको प्रबन्धके काममें बड़ी सहायता दी थी। पण्डितजी इससे पहले मुझे साधारण परिचित आदमियोंमें समझा करते थे, परन्तु कुम्भ प्रचारके लिये मेरी अपीलोंको पढ़ कर वह मुझसे अधिक प्रेम करने लग गये थे। वह ऋषि दयानन्दके बड़े भक्त थे और ऋषिके चरणोंमें मेरी भक्ति देख कर ही आर्य्यपथिक मेरे अधिकतः समीप हो गये।

कुम्भ प्रचार समिति पर पं० लेखराम मेरे पास जालन्धर आये और आर्य्य प्रतिनिधि सभाकी आज्ञानुसार कुम्भ प्रचारका हाल एक उर्दू ट्रैक्टकी शकलमें छपवाया।

लाहौरमें पहुंचते ही समाचार मिला कि सिन्ध हैदराबादमें आर्य्यजातिके कुछ भूषण महम्मदी तथा ईसाई मतोंकी ओर झुक रहे हैं। इस पर आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाबके प्रधानकी आज्ञा पाकर पं० लेखरामने उधरको प्रस्थान किया।

सक्खर आर्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये पण्डित लेखराम वैशाख १९४८ के अन्तमें चले गये। स्वामी (वर्त्तमान पंडित) पूर्णानन्दजी भी "द्राबा गुरुदास-पुर उपदेशक मंडली" की ओरसे उक्त उत्सवमें सम्मिलित थे। वहां विस्तृत समाचार मिला कि महम्मदी मतका (सिन्ध) हैदराबादमें जोर है, और साथ ही यह भी पता लगा कि एक आमिल रईस अपने दो लड़कों सहित महम्मदी मत स्वीकार करनेको तैय्यार हैं। इससे बढ़ कर यह प्रसिद्ध था कि कई युवक ईसाई मतकी ओर अधिक झुक रहे हैं।

आर्य्यपथिक यह समाचार सुनकर चुपकेसे कैसे लौट सकते थे? श्री पूर्णानन्दजी सिन्धी भाषा जानते थे, इसलिये उन्हें साथ लेकर पं० लेखरामने हैदराबादका रास्ता पकड़ा। ज्येष्ठ, १९४८ के आरम्भमें ही ईसाई और महम्मदी मतोंके खण्डनका हैदराबादमें धूम मच गई। ईसाई मतसे युवकोंको हिलानेके लिये आर्यपथिकने उसी स्थानमें एक लघु पुस्तक तय्यार

किया जिसका शीर्षक रक्खा—"क्या आदम और हव्वा हमारे वालदैन (माता पिता) थे? इस लेखमें युक्ति तथा प्रमाण द्वारा सिद्ध किया कि एक मांबापकी सन्तान सारी मनुष्य सृष्टि सिद्ध नहीं होती। इसी प्रबल लेखका सार अपने व्याख्यान में देकर पण्डित लेखरामने ८ वा १० आर्य्य जातिके युवकोंको ईसाई मतके गढ़े से गिरते गिरते खींच लिया।

सिन्धी रईस, जो महम्मदी मतकी ओर झुक रहे थे, दीवान सूर्यमलजी थे। आर्य्यपथिकके हैदराबाद पहुंचने पर वह स्वयं तो अपने इलाके अलीपुर की ओर चले गये, किंतु उनके दोनों पुत्रोंको पण्डित लेखरामने जा घेरा। मेरे पास उस समयका सारा पत्र व्यवहार मौजूद है जिससे पण्डितजीकी हिम्मत और उनके धर्मरक्षामें उत्साहका पता लगता है। हैदराबाद पहुंचते ही हमारे धर्मवीर दीवान सूर्यमलके पुत्रोंके पास गये। बड़ेका नाम दीवान मेवाराम था। ये युवक पंडित लेखरामको टालना चाहते थे; किन्तु लेखराम भला कोई टलने वाले आसामी थे? दूसरी, तीसरी, चौथी वार फिर गये और आग्रह किया कि जिस मौलवी पर उन्हें पूर्ण विश्वास हो उसके साथ मुबाहसा कराके सत्या-सत्यका निर्णय कर लें। फिर पत्रोंका भरमार कर दी। तब मजबूर होकर मौलवियोंको सामने आना पड़ा। मौलवी सय्यद महम्मद-अली-शाहके साथ सबसे पहला मुबाहसा हुआ। विवादास्पद विषय यह था कि महम्मद साहबके पास मोजज़े (करामात) थे वा नहीं। मौलवी

साहब तङ्ग आ गये और कुछ उत्तर न दे सके। तब दूसरे मौलवियोंने पत्र व्यवहार शुरू किया। मौलवी महम्मदसदीक, हाजी सय्यद-गुलाम-महम्मद, मुफ़्तीसय्यद फ़ाज़िलशाह, सय्यद हैदरअलीशाह—इन चार महाशयोंकी ओरसे उर्दू के पत्रोंके उत्तर उर्दू में और फ़ारसी पत्रोंके उत्तर फ़ारसी भाषामें दिये। इस पत्र व्यवहारके पढ़नेसे पंडित लेखरामकी योग्यता का बड़ा उत्तम प्रमाण मिलता है। इस बड़े प्रयत्नका परिणाम यह हुआ कि दीवान सूर्यमलके दोनों पुत्रोंको महम्मदी मतसे घृणा हो गई और एक कुलीन आर्य्य परिवारकी रक्षाका भार आर्य्यपथिकको प्राप्त हुआ। यह जानना इस स्थानमें मनोरञ्जक होगा, कि प्रसिद्ध ब्राह्मसमाजी वक्ता श्री प्रिन्सपल वासवानी एम० ए० उन दिनों हैदराबादमें विद्यार्थी थे और उनके दिलमें अपने धर्मशास्त्रोंका गौरव पंडित लेखरामसे बात-चीत करने और उनके व्याख्यान सुननेसे, बैठा था।

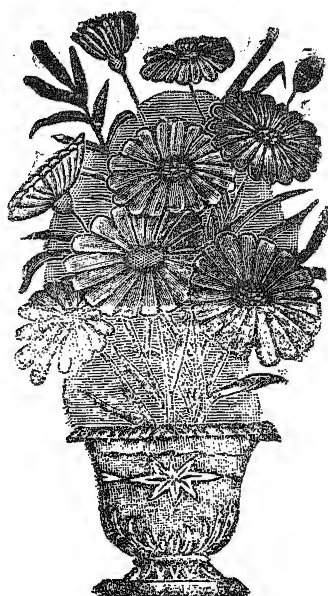
लाडकानाके कुछ बलात्कारसे मुसलमान किये हुओंका प्रार्थना पत्र पंडितजीके पास हैदराबादमें ही पहुंचा था। उन लोगोंने शुद्ध होकर आर्य्यसमाजमें प्रविष्ट होनेकी प्रार्थना की थी। बीमार हो जानेके कारण उस समय पंडित लेखराम उनकी प्रार्थनाको स्वीकार न कर सके। परन्तु लेखरामका शुभ सङ्कल्प फिर फलीभूत हुआ और अनेक कष्ट सहन करके उनमें सैकड़ों भाई वैदिक-धर्मकी शरणमें आकर परमार्थ रूपी

धनको सञ्चय कर रहे हैं। हैदराबाद (सिन्ध) में ही पंडित लेखरामने "क्रिश्चियन मत दर्पण" की तय्यारी शुरू कर दी थी और सृष्टि उत्पत्ति तथा उसके इतिहास पर जो गवेषणापूर्वक व्याख्यान उक्त पंडितजी दिया करते थे उस सबका विस्तार पूर्वक वर्णन "तारीख़-ए-दुनिया" नामी ट्रेक्टरूपसे उन्हीं दिनों तय्यार किया गया था। सितम्बर (१८९१ ई०) मासमें पिछला ट्रेक्ट छप चुका था, जिसकी समालोचना २९ भाद्रपद, सं० १९४८ के 'प्रचारक' में प्रकाशित हुई थी।

मालूम होता है कि सिन्ध हैदराबादसे लौट कर पंडित लेखराम अधिकतः पञ्जाबमें ही काम करते रहे। मान्ट-गुमरी आदि समाजोंमें व्याख्यान देकर लाहौर पहुंचे और वहां पौराणिक मतखन्डनके व्याख्यानोंकी झड़ी लगा दी। फिर ११ अक्टूबरको अमृतसर आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवके समय "आर्य्य-धर्म" पर ऐतिहासिक दृष्टिसे बड़ा सारगर्भित व्यख्यान दिया। इसी व्याख्यानका प्रशंसा सद्धर्म-प्रचारकमें करते हुए मैंने देशभाषाके शार्ट हैंडकी आवश्यकता जतलाई थी।

नवम्बरके अन्तिम सप्ताहमें पंडित लेखराम लाहौर आर्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित रहे जहां २९ नवम्बरको अन्तिम व्याख्यान उनका हुआ। उसमें उन्होंने सारे संसारके मतोंका मुकाबिला करके सिद्ध किया कि केवल वैदिक-धर्म ही मनुष्यको शांति दे सकता है।

दिसम्बरके दूसरे सप्ताहमें साधु केशवानन्द उदासीके शोर मचानेपर पंडित लेखरामजीको तार देकर आर्य प्रतिनिधि सभाके मन्त्रीजीने बुलाया और नाहन राजमें भेजा। साधु केशवानन्दके साथ महाराजा साहबके सामने बातचीत भी हुई और फिर आर्यपथिकके चार व्याख्यान हुए जिसके पश्चात नाहनमें आर्यसमाजकी स्थापना हुई।



नवां अध्याय

राजपूतानाके साथ विशेष सम्बन्ध



ऐसा मालूम होता है कि नाहनके शास्त्रार्थ और वहां आर्य समाज स्थापन करनेके पश्चात् पंडित लेखराम कुछ दिन और पंजाबमें काम करते रहे क्योंकि २१ मार्च, १८८२ को उन्होंने मियानी (जिला शाहपुर) में नवीन समाज स्थापित किया था, और फिर राजपूतानेकी ओर चले गये। पहली बार जो सम्बन्ध बाबू रामविलास शारदाजी तथा अजमेरके अन्य आर्य पुरुषोंसे हुआ था वह इस बार अधिक दृढ़ किया। विशेषतः स्वर्गवासी वजीरचन्द्रजीके वहां होनेसे आर्यपथिकको उस प्रान्तसे बड़ा प्रेम हो गया था। इस बार (जून १८९२ ई०) तब पंडित लेखराम बराबर राजपुतानेमें ही ऋषि जीवनकी घटनाओंका पता लगाते रहे। राजपूतानेके सर्व प्रसिद्ध रईसों, ठाकुरों और प्रतिष्ठित पुरुषोंसे मिलकर जो वृत्तान्त आर्यपथिकने लिखा था वह सब जीवन-चरित्रमें छप चुका है।

इन दिनोंकी दो घटना पंडितजीके स्वभावको दो अंशोंमें स्पष्टतासे प्रकट करती हैं। बूंदी राज्यमें जाकर ब्रह्मचारी नित्यानन्दजी तथा स्वामी विश्वेश्वरानन्दजीने शास्त्रार्थकी धूम

मचा दी थी। आर्य पुरुषोंको जब यह पता लगा तो उन्होंने दोनों सन्यासी महात्माओंकी सहायताके लिये आर्यपथिकको भेजा। कुछ लोगोंने डराया भी कि रियासतका मामला है, कहीं कष्ट न मिले; परन्तु धर्म-युद्धका नरसिंहा जब बज गया तो लेखरामको रोकने वाली कोई भी शक्ति नहीं थी। अकेले सिंहकी न्याईं सीधे बूंदीमें पहुंचे। वहां जाकर पता लगा कि महाराज साहेबके विशेष शास्त्रार्थसे इनकार कर देने पर दोनों सन्यासी महात्मा लौट गये हैं। पंडित लेखराम भी जहाजपुरमें लौट आये, जहां सायंकालको पहुंचते ही इन-के व्याख्यानका विज्ञापन जहाजपुरके हाकिमने (जो आर्य्य-सामाजिक थे) घुमा दिया। रातको व्याख्यानमें सर्वसाधा-रणके साथ फौजके सिपाही और अफसर भी आये; उनमेंसे पदलका सूबेदार मुसलमान था। आर्यपथिकने अन्य विषयों-के साथ महम्मदी मतका भी कुछ खड़ा खण्डन किया। इसपर मुसलमान सूबेदारने दिल्लगीमें कहा—"ऐसे ही तीस-मारखां थे तो बूंदीसे क्यों भाग आये।" हाज़िर जवाब लेखरामको सोचनेकी जरूरत न थी; उत्तर दिया—"विपत्ती शास्त्रार्थसे भाग गया और हम लौट आये; कुछ आं हज़रत (अर्थात महम्मद साहब) की तरह हिजरत करके (भाग कर) तो नहीं आये।" इस पर मुसलमान सूबदारको आंखें लाल हो गईं और उसने तलवारके कब्जेपर हाथ रक्खा। वीर लेखराम-ने गरजते हुए कहा—"मुझे तलवारकी धमकी दिखाता है;

अगर है पठानका तो तलवार निकाल कर मज़ा देख।" हाकिम-ने मुसलमान सूबेदारको अलग बैठा दिया और फिर किसीने चूं तक न की।

अजमेरके सम्बन्धमें यहां बाबू रामविलास शारदाजीके पत्रोंसे कुछ भाग उद्धृत करता हूं जिससे आर्यपथिकके स्वभाव और काम पर बड़ा प्रकाश पड़ता है:—

"स्वामी दयानन्द सरस्वतीको छोड़कर, जिनके विषयमें कुछ नहीं जानता क्योंकि मैं उन दिनों कालेजमें पढ़ता था और आर्यसमाजका सभासद नहीं था, मैंने जितने संन्यासी तथा उपदेशक देखे हैं ऐसा सच्चा दृढ़ मोहक्कि निर्लोभी, परि-श्रमी, जितेन्द्रिय अपने समयको व्यर्थ न खोने वाला एक भी मनुष्य नहीं देखा। व्याख्यान देने तथा लोगोंकी शङ्का समा-धान करनेके अलावा जो समय उनको मिलता था वह प्रायः पुस्तक देखने तथा वैदिक-धर्मके विरोधियोंको उत्तर देनेमें लगाया करते थे।

"आर्यसमाजोंकी अन्दरूनी हालत पर निहायत अफ़सोस किया करते थे और कहा करते थे कि तुम्हारे लोगोंमें पोप घुसे हुए हैं जो मौका पाकर समाजोंका सत्यानाश कर डालेंगे और वे पं० भीमसेनका नाम अकसर इस सिलसिलेमें लिया करते थे और उनकी हेरफेर वाली इबारत पर अकसर अत्यन्त क्रोधित होते थे। लोग इस विषयमें पंडितजीको कट्टर बतला कर टाल दिया करते थे परन्तु जो लोग उनसे भले प्रकार विज्ञ

थे वे जानते थे कि धर्मवीर आर्य्यपथिकका एक एक शब्द ठीक था। पंडितजीसे देश सुधार व वैदिक-धर्मके प्रचारके विषय पर जब जब बातें होतीं तो आप फरमाया करते थे कि आर्यावर्त्त का उद्धार उस समय तक नहीं होगा जबतक कि लोग वेदोंपर पूरा २ विश्वास नहीं करेंगे। नवीन वेदान्तियों व अन्य लोगोंकी दूर दर्शितासे यह ख्याल आम तौरसे फैल रहा है कि उपनिषद् वेदोंसे आला है। भोले लोग यह नहीं जानते कि यह वेदोंसे ही निकले हैं, कई तो उनके सूक्तके सूक्त ही हैं। मेरा विचार उपनिषदोंका तरजुमा करनेका है जिसकी भूमिका-में यह सब मसले हल करूंगा। और लोगोंके दिलोंमें वेदोंकी बुजुर्गी बिठलानेका यत्न करूंगा शोक यह है कि पण्डितजी-के दिलकी दिल हीमें रही।

"इस बातका विचार मुद्दतसे था कि आर्य्य पुरुषोंके पढ़ने योग्य पोपलीलासे रहित निर्भ्रान्त मनु-भाषा-टीका छपवाई जावे। मैंने इस विचार को पंडितजीके सामने पेश किया तो आपने इसका भाषान्तर करना मंजूर किया ; आप फरमाते थे कि मैंने २६ मनुस्मृतियें इकट्ठी की हैं और जो कश्मीरसे मनुस्मृति हाथ लगी है वह बहुत नायाब। आप पंडित गुरुदत्तजीके नोटोंके विषयमें भी कहते थे और फरमाते थे कि श्रीमान् शाहपुरा-धीशोंने भी, जिन्होंने तीन महिन तक मनुस्मृति का श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीजीसे पढ़ा था, बहुत कुछ बातें बतलाई हैं। छपाई आदिके विषयमें सब शर्त्तें निश्चित होने पर आपने कार्य

आरम्भ भी कर दिया था और एक अध्याय का भाषान्तर कर भी दिया था जो उनके कागजोंमें माजूद हैं और मेरे नामसे एक विज्ञापन भी लिख रक्खा था। इसके पश्चात् मैंने अपने शास्त्रोद्धार का स्कीम पेश किया जिसमें वेदों, उपनिषदों, छः शास्त्रों का उपनिषद् भाषान्तर और महाभारत और वाल्मीकि रामायण के सार व सू र्य सिद्धान्त, चरक, सुश्रुत आदिका छपवाना, बाद निकालन परिक्षिप्त श्लोकोंके, किया। आपने फरमाया कि मनुभाष्यके पश्चात् वे वाल्मीकीय रामायणको लेवेंगे जिसके लिये उन्होंने मसाला तैयार कर रक्खा था। आपका विचार एक प्राचीन इतिहास लिखनेका भी था और अंग्रेजी की Nineteenth Century के मुआफिक एक मासिक रिसाला निकालने का इरादा रखते थे जिसमें आर्यावर्त्तके सब विद्वान आर्य्य भ्राता मज़मून भेजा करें। अजमेरसे भी दो एक नाम आपने लिखे थे। आपने यहां स्वामीजीके जीवन चरित्रके मुत्तालिक बहुत दिनों तक काम किया था और यहांके मशहूर हकीम पीरजीसे थोड़ासा मुबाहसा भी हुआ था जो कि पीछे इनकी बड़ी तारीफ किया करते थे। आप पादरी ग्रे, मौलवी मुरादअली, पंडित शिवनरायणजी शास्त्री आदि बहुतसे लोगों से मिले थे जिसका पूरा पूरा हाल स्वामीजीके जीवन चरित्रके लेखोंसे मिल रहा है। आपके अजमेरमें कमसे कम १५ व्याख्यान हुए होंगे जिनमें बावजूद लस्सानिय (Oratory) न होनेके लोग बहुत संख्यामें जमा होते थे और बहुत ही

सन्तुष्ट होकर घरको जाते थे। इतिहास व प्राचीन तहकीकातसे भरे हुए ऐसे-व्याख्यान लोगोंन कभी नहीं सुने और अब तक तारीफ़ करते है।"

इन्ही दिनों पंडित लेखरामजीने "वैदिक विजय पत्र"से जिहाद विषयक लेखोंको इकट्ठा करके "रिसाला जिहाद" छपवाया था क्योंकि उसकी समालोचना १४ मई, १८९२के सद्धर्म-प्रचारकमें निकली थी।

ऐसा मालूम होता है कि पंडित लेखराम जूनके अन्तिम सप्ताह वा जुलाईके आरम्भमें फिर राजपूतानसे लौट आये थे क्योंकि उनके लिखे हुए "कस्तूरी की प्राप्ति" विषयक दो लेख १६ जुलाई और २७ अगस्तके प्रचारकमें दर्ज हुए हैं। पहला लेख भेजते समय पंडित लेखरामजी लाहौरमें थे और दूसरा लेख उन्होंने मुजफ्फरगढ़ आर्य्य समाजसे भेजा था। २३ जूलाई १८९२के प्रचारकमें बख्शी सोहनलाल (वर्त्तमान आनरेबल तथा रायबहादुर) के मांस भक्षण समर्थक लेखोंका उत्तर भी आर्य्य-पथिक का लाहौरसे भेजा हुआ ही छपा है। फिर ३ और १० सितम्बरके प्रचारकमें वृक्षोंमें जीव सम्बन्धी विचारपूर्ण दो लेख पंडित लेखरामके लहिय्या (जिला डेरा इस्माइलखां) से भेजे हुए छपे हैं। मालूम होता है कि डेराजातके जिलोंमें धर्मप्रचार करनेके पश्चात् पण्डित लेखराम सीबी (बिलोचिस्तान)में स्वामी नित्यानन्द सरस्वतीजी सहित पण्डित प्रीतम शर्मा पौराणिकके

साथ शास्त्रार्थ करनेके लिये गये थे क्योंकि उनका वहां २२ जुलाई १८९२ को पहुंचना प्रचारकमें छपा है।

प्रीतमदेवने तो शास्त्रार्थसे पीछा छुड़ाना चाहा किन्तु उसी ग्रामको उससे १०० गजकी दूरीपर पण्डित लेखरामका सिंहनाद सुनाई देने लग गया। पण्डित प्रीतम शर्माने तो स्वामी नित्यानन्दजीके सामने आकर शास्त्रार्थको क्वेटेके लिये मुलतवी किया और २४ जुलाईको चल दिया; परन्तु पण्डित लेखरामजी चार पांच दिनों तक स्वामी नित्यानन्दजीके साथ सीबीमें ही व्याख्यान देते रहे। फिर क्वेटेसे होते हुए ११ सितम्बरको कसूर (जि० लाहौर) आर्य्यसमाजमें जाकर एक व्याख्यान दिया। २८, २९ सितम्बरको हम पण्डित लेखरामको अमृतसर आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित पाते हैं। अक्टूबर मासके आरम्भमें पण्डित लेखरामजी जालन्धर पहुंचे। उन दिनों छावनीमें जाटोंका रिसाला नम्बर १४ था जिसका अधिक भाग आर्य्यसमाजी था। पण्डित लेखरामजीका एक व्याख्यान सदर बाजारमें हुआ, और फिर दो व्याख्यान चौदहवें रिसालेमें हुए। वह दृश्य भूलने योग्य नहीं, क्योंकि मैंने भी आर्य्यपथिकके साथ साथ वहीं व्याख्यान दिये थे। रिसालेका अपना बड़ा शामियाना लगाकर मण्डप खूब सजाया गया। छावनीके तीन चार-सौ श्रोताओंके मध्य चार पांच सौ सवार वर्दी पहन कर अपने सर्दारों सहित उपस्थित रहते थे। अङ्गरेज आफिसर भी दोनों दिन व्याख्यानोंमें आते रहे और व्याख्यान

सुनकर बड़े प्रसन्न होते रहे।

जालन्धरसे पण्डित लेखराम पोठोहार (पञ्जाब प्रान्त) में प्रचारके लिये गये। १६ अक्टूबरको उनका व्याख्यान आर्य्यसमाज भवन (जिला जेहलम) में होना, समाचारपत्रोंमें छपा है।

इसके पश्चात् पता लगता है कि ऋषि दयानन्दके जन्म-स्थानकी तलाशमें पण्डित लेखराम फिर राजपूतानेको ओर चल दिये। बहुतसे विश्वस्त पुरुषोंसे पता लगा कि स्वामीजी-का जन्म-स्थान मोरवीराजमें है, इसलिये अजमेरसे आर्य्यपथिक अहमदाबादको चल दिये। मैं बतला चुका हूं कि बाबू राम-विलास शारदाजी पर आर्य्यपथिकका बड़ा विश्वास था इसलिये काठियावाड़से उन्हींके नाम पत्र लिखते रहे। उस समयके लिखे हुए तीन पोस्टकार्ड मुझे मिले हैं, पहला ३० अक्टूबर, १८९२ को मोरवीसे भेजा हुआ है। उसमें बांकानीरके मार्गसे मोरवी पहुंचनेका हाल लिखकर अपनी डाक महाशय काशीराम दुबे, एम० ए०, हेडमास्टर मोरवी हाइस्कूल द्वारा मंगाई है और साथ ही याचना की है कि पण्ड्या मोहनलालादिसे, स्वामी दयानन्द महाराजके जन्म-स्थानके विषयमें पूछ कर जो कुछ पता लग सके जाननेवालोंसे लिखवा भेजें।

दूसरा पोस्टकार्ड १५ नवम्बरको मोरवीकी डाकमें डाला गया। इसका अनुवाद यह है—"एक पत्र आपका, एक बन-वारी लालजीका, एक श्रीस्वामी आत्मानन्दजी महाराजका,

एक मास्टर वजीरचन्दजीका, पहुंच कर समाचार ज्ञात हुए। टिनकारामें मैंने (ऋषि दयानन्दजीके जन्म-स्थानकी) बहुत ढूंढ़ की, पता न मिला। लोग मोरवी खासका बहुत ख्याल करते हैं। अब वहां अन्वेषण कर रहा हूं ? १४ वा १५ ग्रामोंमें ढूंढ़ चुका हूं।........मुझे १०, ११, १२ (नवम्बर, १८९२) को ज्वर हुआ, बड़े जोरसे; परन्तु अब सर्वथा निरोग हूं।......

"पंड्याजीका कोई पत्र नहीं आया। वेद-भाष्य-भूमिकाके विषयमें मैंने एक पत्र श्यामसुन्दरजीको लिखा था, फिर आप भी (उनको) स्मरण करातें। जबसे आया हूं कोई (अङ्क) सद्धर्मप्रचारक पत्र (का) नहीं आया। यदि हो सके तो चार (पिछले) अङ्क भेज दें......इस ओर छूतछातका बड़ा झगड़ा और ज्वरका जोर है; आर्य्यसमाजसे लोग सर्वथा अभिज्ञ हैं....................." तीसरा कार्ड ९ दिसम्बरको राजकोटसे चला। इसमें लिखा है—"मैं २ दिसम्बर, १८९२ से राजकोटमें आया था। यहां आठ दिन रहा। यहांका हाल मालूम किया, परन्तु कोई हाल स्वामीजीकी जन्म-भूमिके सम्बन्धमें न मिला। आज फिर बांकानेर जाता हूं और कई दिन वहां रहूंगा।.............बांकानेर प्रान्तके विषयमें ही लोगोंको सन्देह है कि शायद स्वामीजी उसी प्रान्तके हों। दूसरे मोरवी और बांकानेर (एक दूसरेसे) बहुत समीप हैं।.................यहां पहले आयसमाज था, परन्तु अब चिरकालसे दूर हुआ है; कोई भी

आर्य्यपुरुष यहां नहीं है। लोगोंसे बातचीत होती रहती है; उपदेशकोंकी बहुत ज़रूरत है।"

पिछले दो कार्डों में एक और परिवर्तन देखा जाता है। जहां पहले पत्र और लिफ़ाफ़ा दोनों फ़ारसी अक्षरोंमें होते थे, वहां इनमें लिफ़ाफ़ा देवनागरी-अक्षरोंमें लिखा हुआ है, और कुछ कालके पश्चात् देखा जाता है कि संस्कृत वा आर्य्य-भाषा जाननेवालोंका नाम आर्य्यपथिकके पत्र आर्य्य भाषामें ही जाने लग गये थे।

इसी वर्ष "क्रिश्चियन मतदर्पण" मेरठके विद्यादर्पण प्रेसमें छपकर तय्यार हुआ जिसकी समालोचना १२ नवम्बर, १८६२ के सद्धर्म प्रचारकमें छपी है।

सं० १८६३ ई० के आरम्भमें ही पण्डित लेखरामने स्वामी दयानन्दके जन्म-स्थानके अन्वेषणका काम समाप्त कर लिया था। यद्यपि इस समय टिनकाराके समीप ही जन्म-स्थानका नया निश्चय नये आन्दोलन कर तो रहे हैं, तथापि आर्य्य-पथिकने जो निश्चय करना था उसे दृढ़ कर लिया और अजमेरमें लौट कर अन्तिम व्याख्यान दे कुछ और आन्दोलन करते हुए आगरेमें पहुंचे। वहां २५ फरवरीसे एक मार्च सं० १८६३ ई० तक स्थानीय आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सव पर तथा मित्र सभामें उनके व्याख्यान होते रहे। आगरा आर्य्यसमाजके उत्सवमें धर्म्म-चर्चाके समय आर्य्यपथिकने ऐसे सन्तोषजनक उत्तर दिये कि प्रश्नकर्त्ताओंको भी मानना पड़ा कि उनकी तसल्ली हो गई है।

आगरासे मालूम होता है कि पण्डित लेखरामजी फिर राजपूतानेकी ओर अपने पुरुषार्थका फल प्राप्त करने अर्थात् ऋषि-जीवनके अन्वेषणका सारांश निश्चय करनेके लिये चले गये क्योंकि २५, २६ मार्च, १८६३ को उन्होंने जयपुर आर्य्य समाजके वार्षिकोत्सव पर दो बड़े ही जनप्रिय व्याख्यान दिये।

इस समय पंजाबमें घरू-युद्धकी अग्नि बड़े वेगसे भड़क उठी थी और जिस आर्य्य प्रतिनिधि सभा और आर्य्यसमाजों-की संस्थाके साथ पण्डित लेखराम आर्य्यपथिक आर्य्यसमाजों-में नाम लिखानेके दिनसे काम करते आये, उसकी अवस्था बड़ी डांवाडोल हो चली थी। यह निश्चय करना कि वास्त-विक अपराध किस दलका था, और इस बातकी मीमांसा करना कि द्वेषाग्निका पहला पलीता किसने छोड़ा, इस समय अना-वश्यक है। इस विषयके पाप-पुण्यका ठीक गलेमें मढ़ना उस समय होगा, जब किसी निष्पक्ष लेखनीसे आर्य्यसमाजका इति-हास लिखा जायगा, परन्तु यहां केवल इतना बतलाना है कि घरू-युद्धके कारण एक ओर तो सर्वसाधारण आर्य्य-जनता-का समूह और संस्थाका बल था और दूसरी ओर यद्यपि जन संख्या बहुत कम थी तथापि धन-बल, राज-बल तथा नीतिबल अधिक था। सम्मति भेदके सब कारणोंमेंसे उस समय भक्ष्या-भक्ष्यका प्रश्न बहुत कुछ आगे बढ़ा हुआ था। स्त्रियोंको उच्च शिक्षा देनेका भी यद्यपि विरोध होता था, वैदिक-साहित्यकी शिक्षाकी मात्रा पर भी यद्यपि मतभेद था तथापि

मांस भक्षण वेद विरुद्ध पाप है या नहीं, इस विषय पर बड़ा भारी युद्ध था।

ऐसी विपत्तिके समयमें पण्डित लेखरामकी पञ्जाबमें बड़ी भारी आवश्यकता प्रतीत हुई। प्रबल सांसारिक नीतिका मुकाबिला दिलमुस विश्वासी केवल शान्तिका पठ करनेवाले स्वार्थी कैसे कर सकते? जिस प्रकार राजर्षि-गोविन्दसिंह महाराज अपने विश्वास-पात्र खालसोंके विषयमें कह सकते थे कि—"सवा लाखसे एक लड़ाऊं" और जिस प्रकार अकेले नैपोलियन की रण-भूमिमें उपस्थिति एक लाख सेनाके तुल्य समझी जाती थी उसी प्रकार मानो ब्रह्मर्षि-दयानन्दका आत्मा अदृश्य वाणी द्वारा आर्य जनतासे कह रह था कि आर्य्य समाज की परिधिमें यदि सर्व प्रलोभनोंसे बच कर कोई धर्मकी सेवा कर सकता है तो वह लेखराम है। धन, मान, प्रतिष्ठा, प्रशंसाके वशीभूत हो कर कई प्रचारकों तथा प्रतिष्ठित पुरुषोंको गिरते देख आर्य्य प्रतिनिधि सभाके सामयिक प्रधानने आर्य्यपथिक पण्डित लेखरामको पंजाबमें बुला लिया।

आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाबके प्रधानका निवास-स्थान जालन्धर शहर था, इसलिये राजपूतानेसे पण्डित लेखराम सीधे जालन्धर नगरमें पधारे। १८ अप्रैल को स्थानीय आर्य-मन्दिरमें ऋषि दयानन्दके जीवन पर व्याख्यान दिया और इस व्याख्यानमें ही पहली वार बतलाया कि आर्य्य समाजके प्रवर्त्तक के गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वतीका जन्म-स्थान कर्त्तारपुर

(जिला जालन्धर) के समीप एक ग्राममें है। इसी समाचार को २१ अप्रैल, १८९३के प्रचारकमें जतला कर मैंने लिखा था "सच-मुच एक महात्मा का स्वदेशी होना एक गौरव की बात है परन्तु जालन्धरियोंको भली प्रकार याद रखना चाहिये कि यदि वे अपने आप को स्वामी विरजानन्दके स्वदेशी सिद्ध करना चाहते हैं तो उनको शम और दमकी दृढ़ शिक्षा लेनी होगी।"

उसी समय आर्य्यपथिक परिडत लेखरामने, प्रसिद्ध योग-राज गूगलके बनानेवाले राय मूलराज बहादुर उप-प्रधान परोप-कारिणी सभासे, सत्यार्थ-प्रकाशके उर्दू अनुवादकी आज्ञा मांगी थी, किन्तु मांस भक्षणके विरोधी परिडत लेखरामजीकी, इस विषयमें, अकृतकार्य्यता पर बड़ा शोक है, क्योंकि यदि उक्त परिडतजी सत्यार्थ-प्रकाशका अनुवाद उर्दूमें कर जाते तो जो अशुद्धियां अब आर्य्य समाजियोंको निरर्थक शास्त्रार्थमें फंसाती हैं उनसे वह अनुवाद विमुक्त होता।

२८ अप्रैल १८९३के प्रचारकसे "आर्य समाजकी जरूरत" पर एक लेख-माला आर्य्यपथिककी ओरसे आरम्भ हुई है। इस लेखमालामें ऐतिहासिक दृष्टिसे आर्य्यसमाजकी आवश्यकता बतलाई गई है।

जालन्धरसे लाहौर होते हुए परिडत लेखराम जेहलम आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए और शङ्कासमाधानमें भाग लेनेके अतिरिक्त उन्होंने वैदिक-धर्मकी श्रेष्ठतापर एक

सार-गर्भित व्याख्यान दिया। उससे पहले पण्डित लेखराम औरङ्गाबाद और मियानी कालामें व्याख्यान दे चुके थे।

जेहलमसे छुट्टी लेकर पण्डित लेखराम अपने निवासस्थान कहूटामें पहुंचे। वहां एक मास तक रहे परन्तु वहांसे भी लेख बराबर समाचार पत्रोंमें [विशेषतः प्रचारकमें] भेजते रहे। उसी स्थानमें उनके पास दीवान टेकचन्द्र [वर्त्तमान कमिश्नर] का पत्र इङ्गलैन्डसे आया था। उस पर जो नोट आर्य्य-मुसाफिरने कहूटेसे लिखकर भेजा था वह जतलाता है कि आर्योपदेशकका आदर्श वह क्या समझते थे। पण्डित लेखराम लिखते हैं—"विविध भाषाओंमें सच्चे धर्मकी पुस्तकोंका अभाव, विविध भाषाओं द्वारा आर्य्य-धर्मके उपदेश करनेवालोंकी कमी, देशान्तरोंमें आर्य्यसमाजका अस्तित्व अभावके बराबर, धर्म पर जान न्यौछावर करनेवालोंकी आवश्यकतामें प्रति सैंकड़ा एक सौकी कमी और उसपर घरकी फूट—त्राहि मां! त्राहि मां! प्यारे भाइयो! विचारो और समझो। (अंग्रेज) लोग सिविल-सर्विस पास करके जब देखते हैं कि धर्मके प्रचार की जरूरत है तो झट उससे अलग हो धर्मके उपदेशक बननेके लिये प्रार्थनायें करते हैं, फिर ईश्वर जाने स्वीकार हो वा न। इधर हमारे यहां की हालत वर्णन करने योग्य नहीं है......हमारे उपदेशकोंमें, थोड़े विद्वानोंके अतिरिक्त, कई ऐसे भी हैं जो भोजन भट्टोंकी सूचीमें जाने योग्य हैं। क्षमा कीजिये, मैं वा अन्य कोई समाजोंको भली प्रकार जाननेवाला उन्हें उपदेशक नहीं मानता,

क्योंकि वह तो खाकियोंमें खाकी, उदासियोंमें उदासी, निर्मलों में निर्मले और सन्यासियोंमें स्वामी ”

“आर्य्यसमाजकी जरूरत” का शीर्षक देकर जो लेखमाला परिडत लेखरामने इन दिनों सद्धर्मप्रचारकमें छपवाई थी, उसमें वह कहते हैं—“मई सन् १८८१में जब लेखक (पं० लेखराम) ऋषि दयानन्दकी सेवामें अजमेर उपस्थित हुआ तब उन्हों [ऋषि दयानन्द] ने कहा था कि आर्य्यसमाजोंकी ओरसे एक अंग्रेजी मासिक वा समाचार पत्र निकलना चाहिए, जिसमें वेदोंके मन्त्रोंका अनुवाद देनेके अतिरिक्त सार्वजनिक लाभ की बातें भी दर्ज हों।”

गृहस्थाश्रममें प्रवेश

वैशाख संवत् १९५० विक्रमाके आरम्भमें परिडत लेखराम पूरे ३५ वर्षके हो चुके थे उसी वर्षके जेष्ठ मासमें छुट्टी लेकर अपने निवास-स्थान ग्राम कहूटामें गये और अपनी आयुके २९वें वर्षके आरम्भमें मरी पर्वतान्तर्गत भन्न ग्राम निवासिनी कुमारी लक्ष्मी देवीके साथ उनका विवाह संस्कार हुआ। ऋषि-आज्ञाको शिरोधार्य समझते हुए परिडत लेखरामने विवाह तो किया परन्तु जहांतक उनसे होसका वसु* ब्रह्मचारी पदसे ऊपर उठनेका प्रयत्न करते रहे।

ऐसा ज्ञात होता है कि पौराणिक पूजादि तो कहां साधारण जातीय रिवाजों की जञ्जीरोंको भी परिडत लेखरामने इस

विवाह पर तोड़ डाला था। हमारे चरित्र-नायकके चचा श्री गण्डारामजी लिखते हैं कि पण्डित लेखरामने अपने विवाह पर पंजाबके रिवाजानुसार तम्बोल इत्यादि नहीं लिया था।

मुझे पंडित लेखराम बतलाया करते थे कि विवाह होते ही उन्होंने अपनी धर्मपत्नीको पढ़ाना आरम्भ कर दिया था। देवी लक्ष्मीकी अपने पतिमें अनन्यभक्ति थी और इसलिये वह उन्हें प्रसन्न करने का सदा प्रयत्न किया करतीं।

विवाहके पश्चात् पंडित लेखराम कुछ दिनों और अपने ग्राममें रह कर अपनी धर्मपत्नीको धार्मिक-शिक्षा देना चाहते थे परन्तु जब उस समयके धर्म-युद्धमें सहायता की आवश्यकता होने पर मैंने उन्हें बुलाया तो गृहस्थके सर्व विचारोंको शिथिल करके वह तत्काल ही मेरे पास आ पहुंचे।

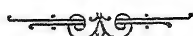


दसवां अध्याय

जोधपुरमें मांस का झगड़ा

और

आर्य्यपथिक का आक्रमण।



लाहौरमें जो मांस-भक्षण विषयक झगड़ा चला था उसको बहुत पुष्टि जोधपुरसे मिली थी। जोधपुर राजके मुख्य प्रबन्ध-तीन पीढ़ियोंसे अब तक महाराज मेजर जनरल सर प्रतापसिंह चले आते हैं। (इस समय उनका देहान्त हो चुका है) महाराज प्रतापसिंह थे तो ऋषि दयानन्द और वैदिकधर्मके दृढ़ भक्त, परन्तु उनके मनमें यह बात बैठ गई थी कि मांस-भक्षणके बिना राजपूत जाति की वीरता स्थिर नहीं रह सकती। लाहौरमें आर्य्यसमाजके दो दल हो जानेके पश्चात् स्वामी प्रकाशानन्द मांस-दल की ओरसे जोधपुर पहुंचे। वहां उन्होंने यह लीला रची कि समाचार पत्रोंके सम्पादकों तथा धर्मोपदेशकोंसे मांस-भक्षणके समर्थनमें व्यवस्था दिलायी जावे। इसी लीलाकी पुष्टिमें आर्य्य गजट, तथा भारत सुधार नामी मांस-भक्षण का समर्थन करनेवाले समाचार पत्रोंके सम्पादकोंको पारितोषिक

मिले। एक दो प्रसिद्ध आर्य्यपुरुषोंने भी महाराजा प्रतापसिंह की हांमें हां मिलाकर "रूप्योऽसौ भगवान् स्वयम्" के साक्षात् दर्शन किये। कुछ आर्य्यसमाजी पण्डितोंको भी भुर्सी दक्षिणा बांटी गई। तब सोचा गया कि कोई बड़ी चोट लगानी चाहिये। उस समय पण्डित भीमसेन ऋषि दयानन्द के निज शिष्य समझे जाते थे, और मेरठके पण्डित गङ्गाप्रसाद एम० ए० स्वर्गवासी पण्डित गुरुदत्तके पीछे उनके सदृश विद्वान् माने गये थे। इन दोनों महानुभावोंको महाराजा साहब-की ओरसे निमन्त्रण गया। पण्डित भीमसेन फिसलनेवाले प्रसिद्ध थे इसीलिये उनको ठीक अवस्थामें रखनेके लिये वीर पथिकको भेजा गया।

पण्डित भीमसेन और पण्डित गङ्गाप्रसाद एम० ए० दोनों २ अगस्त, १८९३ ई० के प्रातः जोधपुर पहुंचे। पण्डित गङ्गाप्रसादको बहुतसे लालच दिये गये परन्तु उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि धन व प्रतिष्ठाका लालच उन्हें धर्मसे च्युत नहीं कर सकता। ४ अगस्तको पण्डित भीमसेनजीकी पहली भेंट महाराजा प्रतापसिंहसे हुई। पण्डित भीमसेनने यह तो कहा कि वेदमें मांस-भक्षणका अत्यन्त खण्डन है परन्तु यह मानकर कि हिंसक पशुओंका बध पाप नहीं, उन्होंने दबे दांतों ऐसे पशुओंके मांसके भक्षणका विधान कर दिया।

५ अगस्तको प्रातःकाल ही पण्डित लेखरामजी जोधपुरमें पहुंचे और सारा हाल सुना। वीर आर्य्यपथिकने पण्डित

भीमसेनकी खूब खबर ली, क्योंकि स्वामी प्रकाशानन्दने झूठा समाचार फैलाया था कि पण्डित भीमसेन मांसभक्षण-का समर्थन कर आये हैं। बेचारा भीमसेन बहुत गिड़गिड़ाया परन्तु धर्मवीर विना ठीक प्रतिज्ञा कराये कब छोड़ते थे। "ईश्वर जानता है अगर तूने महाराजाके पास स्पष्ट जाकर न कहा कि वेदमें मांस-भक्षणका सर्वथा निषेध है तो तुझे किसी धार्मिक संस्थामें पैर रखनेके काबिल नहीं छोड़ूंगा।" पंडित भीमसेन दूसरे दिन ही विदा होने गये और विना पूछे ही महाराजा प्रतापसिंहसे स्पष्ट शब्दोंमें कह दिया—"मांस-भक्षण पाप है। और वेदोंमें हानिकारक पशुओंको दण्ड देने और अर्थिक हानि पहुंचायें तो मार डालनेकी भी आज्ञा है, परन्तु मांस उनका भी अभक्ष्य ही है। और मैंने जो कहा था कि उनके मांस खानेमें अधिक दोष नहीं है, (सो) उसका यह आशय नहीं लिया जा सकता कि हानिकारक पशुओंका मांस खाना चाहिये, वा उससे कोई दोष नहीं है। मेरा तात्पर्य यह था कि ऐसे पशुओंके मारनेमें संसारकी कुछ हानि नहीं है और उपकारी पशुओंके मांस खानेकी अपेक्षा कम दोष है, परन्तु दोष अवश्य है। इसलिये हानि-कारक पशुओंका मांस भी नहीं खाना चाहिये, वह भी सर्वथा अभक्ष्य है" आर्य्यपथिककी धमकीने इतना असर किया कि पण्डित भीमसेनके लिये जो १०००) भेंट स्वीकार हुआ था वह आधा ही रह गया और पण्डित भीमसेनकी आर्य्यपथिक पर इतनी श्रद्धा बढ़ गई कि

उन्होंने जोधपुरसे लौटते ही पण्डित लेखरामकी "तारीख़-ए-दुनिया" का आर्य्य भाषामें अनुवाद करके "ऐतिहासिक निरीक्षण" नामसे मुद्रित कर दिया और शायद इस प्रकार जोधपुरके ५००) की कमी पूरी की।

जोधपुरमें मांस प्रचारकोंका भण्डा फोड़ कर कुछ दिनों ऋषि-जीवन सम्बन्धी मसाला वहीं एकत्र करते रहे, परन्तु विरोधी उनके आक्रमणसे ऐसे तङ्ग आ गये थे कि उन्हें अधिक दिनों तक जोधपुर ठहरनेमें अपनी बड़ी हानि समझते थे। जहां कहीं आर्य्यपथिक आन्दोलन करने जाते महाराजा प्रतापसिंहका गुप्तचर साथ जाता। पहले हल्लेमें जो कुछ घटनायें लिखी गईं वह तो ठीक रहीं परन्तु उसके पश्चात् लोगोंने डरके मारे ऋषि जीवन सम्बन्धी घटनायें ही बतलानी बन्द कर दीं। तब पण्डित लेखरामजी फिर पञ्जाबकी ओर लौट आये।

जो पत्र जोधपुरसे पण्डित लेखरामजीने लिखे थे उनसे ज्ञात होता है कि प्रकाशानन्दादिके घोर विरोध पर भी आर्य्य पथिक अपने काम पर डटे रहे और अन्तमें सारा आन्दोलन करके ही लौटे।

इन्हीं दिनों अमेरिकाके चिकागो नगरकी प्रदर्शिनीकी तय्यारियां हो रही थीं और आर्य्यसमाजोंकी ओरसे कोई विशेष प्रतिनिधि भेजनेका विचार छिड़ रहा था। जोधपुरमें ही राव राजा तेजसिंहसे आर्य्यपथिकको पता लगा कि भास्करानन्द

(जो महाराजा प्रतापसिंहका भेजा हुआ उन दिनों अमेरिका में था) चाहता है कि आर्य्यसमाज उसे अपना प्रतिनिधि चुन ले। पण्डित लेखराम जानते थे कि वह धूर्त्त है अतएव उन्होंने आर्य्यजनताको सचेत कर दिया। दूसरी ओर साधु शुगनचन्द भी आशागतोंमें थे और अपनी वक्तृताके नमूने आर्य्य पबलिकको दिखाते फिरते थे। पण्डित लेखरामने स्वयं तय्यार करके एक अपील बाबू रामविलास शारदाजीको दी जो उन्होंने आर्य्य पब्लिकमें मुद्रित कर दी। इस अपीलमें २०००) तो प्रचारकके मार्ग व्ययादिके लिए मांगा गया था और एक सुयोग्य अङ्गरेजीके विद्वान्‌की सेवा मांगी थी। यह दूसरी बात है कि कोई भी आर्य्य पुरुष जानेको तय्यार न हुआ परन्तु आर्य्यपथिकके धर्मानुरागमें इससे कोई क्षति नहीं हुई। यदि स्वयं अङ्गरेजी पढ़े होते तो अवश्य स्टीमरमें बैठकर चिकागो चल देते।

जोधपुरसे लौटकर पञ्जाबमें स्थान स्थानसे पण्डित लेखरामकी मांग आने लगी। जहां कहीं भी विरोधियोंकी ओरसे आर्य्यसमाज पर आक्रमण होता, रक्षाके लिये आर्यपथिकको ही कष्ट देना पड़ता।

पञ्जाबमें लौटते ही पहला धावा पण्डित लेखरामका श्री गोविन्दपुर (जि० गुरुदासपुर) पर हुआ। २३, २४ सितम्बर सं० १८९३ को बराबर वार्षिकोत्सव मनाया जाता रहा जिसमें पण्डित लेखरामका सर्वोत्तम व्याख्यान हुआ। परन्तु आर्य

पथिकके उच्च स्वभावका इससे पता लगता है कि उत्सवका हाल प्रचारकमें भेजते हुए जहां अन्य सब उपदेशकोंके व्याख्यानोंकी बड़ी प्रशंसा की है वहां अपने व्याख्यानका साधारण वृत्तान्त कालमकी अढ़ाई पंक्तियोंमें समाप्त कर दिया है। मुझे आर्य्यपथिकके पत्र व्यवहारसे भी प्रमाण मिले हैं और मैं स्वयं भी जानता हूं कि अन्य बहुतसे उपदेशकोंकी शैलीके विरुद्ध पण्डित लेखरामका सदैव यह प्रयत्न हुआ करता था कि आर्य्यसमाजकी वेदीसे जो भी उपदेशक व्याख्यान देने खड़ा हो वह सर्वसाधारणमें कृत-कार्य्य होकर ही बैठे।

श्री गोविन्दपुरसे लौट कर ऋषि-जीवनका वृत्तान्त एकत्र करते हुए पण्डित लेखराम मेरे पास जालन्धर पहुंचे और मुझे पेशावर आर्य्यसमाजके उत्सवपर ले जानेके लिये आग्रह किया। मुझे इनकार कब हो सकता था।

पेशावरकी इस बारकी यात्रा मुझे केवल इसीलिए स्मरणीय नहीं है कि मैं पहले पहल अटकसे पार चला था प्रत्युत इसलिये भी कि पण्डित लेखरामके कई पक्के विचार मुझे इसी यात्रामें मालूम हुए। पण्डित लेखराम पलाण्डु (पिआज) के बड़े पक्षपाती थे और समझते थे कि इसके सेवनसे आर्य्य गृहस्थोंको वञ्चित रखना अपनी जातिकी शारीरिक अवस्थाके साथ शत्रुता करना है। मुझसे पहले इस विषयपर बातचीत हुई। मेरे मनुका प्रमाण देने पर आपने कहा—"प्रथम तो

पलाण्डुके अर्थ प्याज़ हैं ही नहीं; और यदि मान भी लो तो यह श्लोक ही प्रक्षिप्त है।"

इस विषय पर आर्यपथिकने नोट-बुकमें "रिसाला अंजुमन ज़िराअत बिजनौर" से नीचेका उदाहरण दिया है—"पियाज़-की तासीर इसके खानेसे मोटा होता है, रक्तमें प्रवाह आता है, तरकारियां इससे मज़ेदार होती हैं, लहसुनके बराबर गुण है मगर बलगम बढ़ाता है। ज़ुकामके लिये गुणकारी है। श्वेत प्याज घरमें रखनेसे सांप वहां पर नहीं आता।"

फिर ब्रह्मावर्तकी सीमा पर बातचीत छिड़ी। पण्डित लेख-रामजीने पौराणिकोंकी मानी हुई सरस्वतीका खण्डन करके बतलाया कि सरस्वतीका तात्पर्य "ब्रह्मपुत्रा" नदीका है जो भारतकी पूर्वीय सीमा पर होती हुई समुद्रमें जा मिलती है। आपने कहा—"सरस्वती ब्रह्माकी पुत्री कही जाती है, पुत्रका स्त्रीलिङ्ग हुआ पुत्रा, पस "ब्रह्मपुत्रा" और सरस्वती पर्याय-वाची शब्द हैं। सरस्वती कोई ऐसी नदी न थी जो मध्यभारतमें कहीं छिप गई हो।" इसके पश्चात् आपने दृषद्-वतीसे 'अटक' महानदीका तात्पर्य लिया। यहां यह याद रखना चाहिये कि यदि सरस्वती पौराणिक कल्पनाके अनुसार मानी जावे और "दृषद्वती" से ब्रह्मपुत्रा नदी समझें तो पण्डितजीका निवास-स्थान कहूटा ब्रह्मावर्तमें सिद्ध नहीं होता। अब दूसरी प्रभातकी घटना समझमें आ जायगी।

बातचीत करते करते हम दोनों सो गये। प्रातः उठकर मैं अपने विचारमें निमग्न था कि रेल अटकके पुलके पास पहुंची और पण्डित लेखरामने मेरी बांह पकड़ कर कहा—"लाला-जी! उठिये, उठिये! देखिये क्या इससे बढ़ कर कोई पत्थरों-वाली नदी हो सकती है?" दृश्य बड़ा गम्भीर तथा उच्च था। मैं इस अपूर्व चित्तोत्कर्षक दृश्यकी ओर टिकटकी लगाये खड़ा था कि आर्य्यपथिकके शब्दोंने झटका देकर जगा दिया—"लालाजी देखिये—यह पत्थरों वाली दृषद्वती नदी है, सरस्वती ब्रह्मपुत्रा है और इन दोनों देवनदोंके मध्यका स्थान ब्रह्मावर्त है।" मैंने उत्तरमें कहा—"पण्डितजी! मैंने आज मान लिया कि "कहूटा" ग्राम ब्रह्मावर्तका ही एक भाग है।" पण्डितजीके मुखपर विशाल मुसकिराहटके चिन्ह दिखाई देने लगे और हंसत हुए बोले—"ईश्वर जानता है, आप मज़ाक-में बात उड़ा देते हैं। मेरा मतलब तो इल्मी तहक़ीक़ातसे था।"

व्याख्यानादि तो वार्षिकोत्सवमें हुए ही परन्तु धर्म-चर्चाके समय बड़ा आनन्द आया। यह बात प्रसिद्ध थी कि पण्डित लेखराम वृक्षोंमें जीवात्माको विद्यमान नहीं मानते थे। एक मांस प्रचारक महाशयने यह प्रश्न उठाकर कि वृक्षोंमें जीवात्मा है वा नहीं उत्तर पण्डित लेखरामसे मांगा; तात्पर्य इस प्रश्नसे यह था कि यदि वृक्षोंमें जीव विषयमें मतभेद रखता हुआ एक पुरुष आर्य्यसमाजी रह सकता है तो मांस-भक्षणका प्रचार करने पर किसीको क्यों आर्य्य-समाजसे अलग किया जावे।

में यह कहकर, कि प्रश्न आर्य्यसमाजपर होना चाहिये न कि विशेष व्यक्ति पर, उत्तरके लिये उठा ही था कि पण्डित लेखराम स्वयं उत्तम उत्तर देनेके लिये खड़े हो गये और निम्न लिखित मनोरञ्जक प्रश्नोत्तर हुए—

प्रश्नकर्त्ता—"क्या आप वृक्षोंमें जाव मानते हैं ?"

उत्तर—"क्या एक जीव ? एक वृक्षमें एक क्या, अनेक जीव पाये जाते हैं और ऐसा ही मैं भी मानता हूं।"

प्रश्न—"मैंने तो सुना था कि आप वृक्षोंमें जीव नहीं मानते।"

उत्तर—"तुम अजब भोले आदमी हो। अब तो मैं तुम्हारे सामने हूं। सुनी सुनाई बात पर बुद्धिमान पुरुष विश्वास नहीं करते। कल्पना करो कि वृक्षको जीवधारी ही मान लें तो ऐसी अवस्थामें यह मानना पड़ेगा कि वृक्षमें जीव सुषुप्तावस्थामें है। तब तुम्हारा बकरे आदिका मांस खाना क्या वृक्षके फल खानेके समान होगा ? भोले भाई पशु पक्षीका का मांस विना हिंसाके उपलब्ध नहीं होता, और वृक्षको तुम्हारे फल तोड़ लेनेसे कुछ कष्ट ही नहीं प्रतीत होता।"

श्रोतागणको पता लग गया कि प्रश्न कुटिल भावसे किया गया है और प्रश्न-कर्त्ता लज्जित हो कर बैठ गया।

पंडित लेखरामकी हाजिर-जवाबी उन्हें बहुधा अनावश्यक वाद-विवादसे बचा दिया करती थी। एकबार रेलकी यात्रामें एक उदासी साधुका साथ हुआ। बात चीत चलने पर उसने

स्वामी दयानन्दको साधु-निन्दक सिद्ध करनेके लिये कहा—"दयानन्दने गुरु-नानकजी को दम्भी लिखा है और उनकी निन्दा की है। यह सन्यासियोंका काम नहीं।" पंडित लेख-राम उदासी जी को बड़े प्रेमसे समझाने लगे और कहा—"देखो, बाबा नानकजीके आशयकी तो स्वामीजीने प्रशंसा ही की है। हां, वेदोंकी कहीं कहीं निन्दा उनसे सहन न हुई और संस्कृत न जानते हुई भी उसमें पग अड़ाते देख कर यह लिखा है कि दम्भ भी किया होगा।" पंडित लेखरामने बहुत कुछ समझाना चाहा परन्तु उस उदासी बाबाने शोर मचा दिया और उनकी एक न सुनी। मेरे शिरमें कुछ पीड़ा थी इस लिये मैं स्टेशन आने पर दूसरे कमरेमें चला गया। अगले स्टेशनके रास्तेमें भी उदासी बाबा बहुत गरम रहे, किन्तु जब अगले स्टेशन पर रेल धीमी हुई तो अब उदासी जी दब हुएसे प्रतीत हुए और पंडित लेखराम तेज सुनाई दिये। मैं भी फिर उसी कमरेमें चला गया तो विचित्र दृश्य देखा। उदासी जी तो कुछ शान्ति की याचना कर रहे हैं और पण्डित लेखराम उनको दबा रहे हैं। मालूम हुआ कि जब समझाने पर उदासी दबाये ही चल गया तो पंडित लेखरामने कड़क कर कहा—

"अच्छा अगर बाबा नानक खुद कहदे कि मुझमें दम्भ है तो?" उदासी कुछ अश्चर्य्यित सा होकर बोला "यह क्या?" पंडित लेखरामने सिक्खोंके ग्रन्थसे एक वाक्य पढ़ा जिसमें दो तीन साधारण निर्बलताओंके साथ दम्भी शब्द भी था। अब

तो उदासी बाबा कुछ ढीले हुए और जब मैं पहुंचा तो कह रहे थे—"यह तो कसर-नफ़सी है। इसका यह मतलब थोड़े ही है कि श्री गुरु-महाराज दम्भी थे।" हाजिर जवाब लेखरामने उत्तरमें दस घृणित पापोंके नाम ले ले कर कहा—"यह सब पाप अपनेमें क्यों न बतलाये? तुम बाबा नानकको मक्कार समझते हो; हम तो उन्हें ईश्वरके सच्चे भक्त समझते हैं। उन्होंने मेरे कहे हुए दुराचारोंका नाम इसलिये नहीं लिया कि उनमें वह ऐब न थे। दो तीन कमजोरियां ही गरीबमें थीं और उनसे बचनेकी प्रार्थना अपने मालिकसे की। तुम चाहे अपने गुरुको मक्कार समझो हम तो बाबा नानकदेवजी को सच्चा ईश्वर-भक्त समझते हैं।"

उदासी जी फिर कुछ गुन गुनाना चाहते थे परन्तु आर्य-पथिकने यह कह कर बात चीतकी समाप्ति कर दी—"बस साहब! मैं तुमसे बात करना भी पाप समझता हूं। तुम गुरुनिन्दक हो" और उदासी जी की वाणी पर ताला लग गया।

पेशावरके जलसे पर जानेसे पहले पंडित लेखराम मांस-भक्षणके विषय पर एक प्रामाणिक ग्रन्थ लिख कर छपवा गये थे जिसकी समालोचना ९ कार्त्तिक संवत् १९५०के सद्धर्म-प्रचारकमें निकली थी। इस लघु पुस्तकका नाम था "आर्य-समाजमें शान्ति फैलानेका उपाय और रामचन्द्रजीका सच्चा दर्शन।" वेद-शास्त्रके प्रमाणोंसे मांस-भक्षणका निषेध दिख-

लाते हुए स्वामी दयानन्दजीके मन्तव्यको उनके ग्रन्थोंसे स्पष्ट-तया दिखलाया और अन्तिम भागमें "रामचन्द्र का दर्शन" नामी काव्यके कविकी इस कल्पनाका (जो वह जन-साधारणमें मौखिक फैलाते थे) कि रामचन्द्रजीने मांस खाया, "रामचन्द्रका सच्चा दर्शन" लिख कर प्रबल प्रमाणों तथा युक्तियोंसे खण्डन किया।

जिन सज्जनोंको मांसका प्रचार अभीष्ट था और जो मांस-भक्षणसे ही राष्ट्रमें जीवन फूंकना सम्भव समझते थे वे प्रायः पण्डित लेखरामको "पेशावरी गुण्डा" की उपाधि देते थे। यह इस लिये नहीं कि पण्डित लेखराम कुछ अधिक कटु वचन बोलते वा बहुत तीखा व्यक्ति-गत आक्रमण करते थे, प्रत्युत इस लिये कि जहां औरोंके कटाक्ष "व्यक्तिगत आक्रमण" कह कर टाले जा सकते थे वहां आर्यपथिककी युक्तियोंका युक्ति-युक्त उत्तर देना बड़ी टेढ़ी खीर थी। इसी लघु पुस्तकके प्रथम भागमें केवल प्रमाण दिये और उनका समर्थन युक्तियोंसे किया है। समाप्ति पर ग्रन्थ-कर्त्ताका केवल तीन पंक्तियोंमें निवेदन है—"प्रस सब वेदके माननेवालोंको योग्य है कि यथार्थ सत्य-शास्त्रकी रीत्यनुसार मद्य-मांसादि दुष्ट वस्तुओंका त्याग करके सात्विक उस भोजन का भोग करें जो रक्त-युक्त न हो और जिसके लिये हमें निरपराधी पशुओंके गले पर छुरी न चलानी पड़े; यही ईश्वरकी आज्ञा है।"

इस लेखको पढ़कर सर्व पाठकोंको उन लोगोंकी बुद्धि पर आश्चर्य होगा जिन्होंने लेखराम को "पेशावरी गुण्डा" की उपाधि देनेवालोंने लेखरामके पवित्र नामसे हिमालयकी चोटियों तकको गुंजा दिया और सच्चे ब्राह्मण उपदेशकके चरणोंमें शिर नवा कर अपने किये पापका प्रायश्चित्त किया।

पेशावरसे लौटनेके पश्चात् हम पं० लेखरामको २८, २९ अक्तूबर रावलपिन्डीमें और ३१ अक्तूबर १८९३के दिन लाहौर में, "वर्त्तमान दशा और हमारे कर्त्तव्य" पर व्याख्यान देता पाते हैं। फिर नवम्बरके आरम्भमें उनका व्याख्यान जालन्धर आर्य्य-समाजमें हुआ। शायद इसी सन्के सितम्बर मासमें पं० लेखराम अपनी धर्मपत्नीको जालन्धर ले आये थे और इसलिये यही नगर उनका निवासस्थान बन गया था।

जालन्धरमें ही बैठकर जहां एक ओर पं० लेखरामने ऋषि जीवन की तय्यारीका आरम्भ किया वहां उन्हीं दिनों अपनी सबसे बड़ी पुस्तक "सबूत-ए-तनासुख" नामी पुनर्जन्मको सिद्ध करनेके लिये लिखकर पूर्ण करली और उसके छपानेका विज्ञापन भी सद्धर्म-प्रचारकमें दे दिया। इस पुस्तकपर जो परिश्रम करना पड़ा होगा उसका अनुमान वे सज्जन ही लगा सकते हैं जिन्होंने संसार भरके मतवादियोंके आक्षेप इस सिद्धान्तपर पढ़े हैं। बाहरवालोंको तो एक सदा भ्रमण करनेवाले यात्री की लेखनीसे ऐसा अपूर्व ग्रन्थ तैयार होते देख कर विस्मयसा होता था परन्तु मुझसे व्यक्ति को जिसने आर्य्य पथिकको एक

पल भी व्यर्थ गंवाते नहीं देखा था कुछ भी आश्चर्य नहीं हुआ।

इन दिनों आर्य्य समाजमें गृह युद्धकी ज्वाला बड़े वेगसे प्रज्वलित हो रही थी। लाहौरमें आर्य्य समाजके दो टुकड़े हो चुके थे और आर्य्य-प्रतिनिधि सभाके वार्षिकाधिवेशनमें भी शिक्षित दलकी सभ्यता का चमत्कार दिखाई दे चुका था। परन्तु पण्डित लेखराम उस समय भी बाह्य विरोधियोंके आक्रमणोंसे ही आर्य्य समाज की रक्षा करनेमें लगे हुए थे। चारों ओरसे महम्मदियोंके आक्रमण रोकनेके लिये आर्य्य पथिक की मांग आती थी; इसी लिये २७ कार्त्तिक १९५०के प्रचारकमें मैंने लिखा था—"ज्ञात हुआ है कि महाराजा कृष्णप्रसादजी पेशकार मन्त्री सेना विभाग (राज हैदराबाद दक्षिण) इसलामकी ओर झुके हुए हैं और आर्य्य पथिककी मांग हो रही है। परन्तु कुराना-चार्य्य जहां एक ओर महर्षिके जीवन चरित्र की तैयारीमें सम्बद्ध है वहां दूसरी ओर शरीर को खेद भी है। लेकिन एक आदमी क्या २ कर सकता है.........।"

पंडित लेखराम को मैंने इन दिनों ऋषि जीवन वृत्तान्तकी तय्यारीमें निरन्तर लगा दिया था, परन्तु अपना नियत काम समाप्त करने पर उन्होंने जालन्धर के बाजारोंमें नित्यप्रचार करना आरम्भ कर दिया। जालन्धरमें भी आर्य्य पथिक को बैठने कौन देता था। इसी वर्ष (सन् १८९३ ई०) के दिसम्बर में लाहौर नगर इन्डियन नैशनल कांग्रेस का केन्द्र बन रहा था।

राजनैतिकोंके शिरोमणि दादा भाई नौरोजी प्रधान निर्वाचित हुए थे। दूर दूरसे आर्य भाई भी आये थे। इस अवसर पर पंडित लेखरामको भी व्याख्यानोंके लिये लाहौर बुलाना पड़ा। फिर लाहौरसे लौटते ही समाचार आया कि शाहाबाद (जिला अम्बाला) के पास एक ग्राममें कुछ हिन्दू महम्मदी मत ग्रहण करनेवाले हैं। पण्डित लेखराम की टांगमें एक फोड़ा था जिससे वह तङ्ग थे। मैंने उत्तर दिया—"पण्डित जो यह लोग बड़े निर्दय हैं। समझते नहीं कि हर समय मनुष्यका स्वास्थ्य एकसा नहीं रहता। आप इस विषयमें कुछ न सोचें, मैं उत्तर दे दूंगा।"

पण्डित लेखराम मेरे कार्य्यालयके सामने वाटिका की दूसरी सीमावाले कमरेमें काम किया करते थे; वहां चले गये। आध घण्टेके पश्चात् फिर मेरे पास आकर बैठ गये—"क्यों साहब! किसको भेजनेका खयाल है?" मैंने उत्तर दिया—"पण्डित जी! यह लोग बड़े बेपरवा हैं। इनको स्वयं भुगताना चाहिये, और क्या हो सकता है।" आर्य्य पथिक कुछ रुक रुक कर बोले—"वे गरीब क्या करेंगे; कुछ तो इन्तजाम होना चाहिये" मैंने उत्तरमें कहा—"कहिये तो पण्डित लालमणिको भेज दूं।" पण्डित लेखराम मुसकिरा कर बोले—"ईश्वर जानता है आपने मुझे कायल कर दिया; रात को रेलमें ही चला जाऊंगा"

पण्डित लेखरामजीकी धर्मसेवाके भावका यह एकही दृष्टान्त नहीं है। मैंने यह एक नमूना पेश किया है।

शाहाबादके पासवाले ग्राममें मुसलमान होने वालोंको बचाकर इस्माईलाबादमें तीन व्याख्यान दिये जिनके प्रभावसे पीछे वहां आर्य्य-समाज स्थापित हो गया। फिर शाहाबाद, थानेश्वर, और करनालमें व्याख्यान देकर जालन्धर लौट आये। शाहाबादमें आर्य्यसमाजका स्थापित होना भी इसी वार-के प्रचारका फल था। इस धावेपर जाते हुए मैंने आर्य्य-पथिकसे प्रतिज्ञा की थी कि छुट्टीके दिनोंमें मैं भी उनकी सहायताके लिये पहुंचूंगा, परन्तु उन्होंने शाहाबाद पहुंचते ही मुझे लिख दिया कि मेरी कुछ आवश्यकता नहीं। पण्डित लेखराम किसीको भी अनावश्यक कष्ट नहीं देते थे और यह देखकर कि मेरी अनुपस्थितिमें आर्य्य-प्रतिनिधि सभा पञ्जाबका काम बिगड़ेगा उन्होंने अकेले ही सब काम कर लिया।

ऊपर लिखित सब काम करते हुए भी पण्डित लेखराम, का अन्ध विश्वासोंको पोल खोलनेके लिये समय मिल जाता था। २० जनवरी सन् १८९४ ई० के ताजुल अखबारमें एक समाचार निकला कि एक सय्यद जलालीकी कब्र खुदवाकर टाउनहालमें मिलानेके कारण मुजफ्फर नगरका एक तहसील-दार अन्धा हो गया और जाइण्ट मजिस्ट्रेट पागल हो गये। पण्डित लेखरामने समाचार पढ़ते ही अपने एक मित्र, ज-

फ़्फ़र नगरके रईससे असल हाल पूछा जिनके पत्रसे यह समाचार सर्वथा झूठा सिद्ध हुआ, उस पत्र व्यवहारको पण्डित लेखरामने २२ माघ १९५० के सद्धर्मप्रचारकमें छपवा दिया।

फरवरी, १८९४ में मान्ट-गुमरी आर्य-समाजके वार्षिकोत्सव पर व्याख्यान देनेके अतिरिक्त झङ्ग और कमालिया आदि स्थानोंमें प्रचार करते हुए लाहौर पहुंचे। इसी मासके प्रचारकमें एक लेख माला आरम्भ हुई जिसे पण्डित लेखरामके धर्म पर बलिदान होनेके पश्चात् "तकजीब बुराहीन अहमदिया" के दूसरे भागमें सम्मिलित किया गया था। इस लेखमालामें अकाट्य प्रमाणोंसे सिद्ध किया गया है कि "असकन्दिरिया" (मिश्र प्रान्त) का प्रसिद्ध पुस्तकालय महम्मदी पक्षपातकी ही भेंट चढ़ा था।

ऋषि जीवनकी तय्यारीके साथ साथ मौखिक धर्म-प्रचारका कार्य्य भी बराबर जारी रहनेका प्रमाण समाचार पत्रोंके अवलोकनसे मिलता है। १४ मार्च तक श्री गोविन्दपुर तथा आस पासके ग्रामोंमें धर्म-प्रचारकी धूम रही, शङ्का-समाधान खूब होता रहा। वहांसे लौट कर कुरुक्षेत्रकी भूमिमें प्रचारके लिये पण्डित लेखराम मेरे साथ चल दिये।

जिस प्रकार चन्द्र-ग्रहणपर काशीमें गङ्गास्नानका माहात्म्य है उसी प्रकार सूर्य्य-ग्रहणको कुरुक्षेत्रके तालाबमें डुबकी लगाने से, पौराणिक मतावलम्बी, स्वर्गप्राप्तिकी कल्पना करते हैं। ६ अप्रैल, १८९४ को सूर्य्यग्रहण होनेवाला था इसलिये २९

मार्चको हा, सरकारी हस्पतालके पास सड़कके किनारे पर साफ करके आर्य्यसमाजका प्रचार-मण्डप खड़ा कर दिया गया और अप्रैलके आरम्भसे ही वैदिक-धर्मके प्रचारका काम शुरू हो गया। इस प्रचारमें शङ्का-समाधानका काम प्रायः पण्डित लेखरामजी ही करते रहे। "धर्मकी असलियत और उसका आन्दोलन" विषय पर जो व्याख्यान इस स्थान पर पण्डित लेखरामने दिया वह बड़ा ही चित्ताकर्षक था। दूसरे व्याख्यानमें आपने यह बतलाया कि आर्य्यसमाज ऋषियोंकी निन्दा नहीं करता बल्कि उनके सिद्धान्तोंको फैलाता है। ६ अप्रैलको मेरे साथ पण्डित लेखराम करनाल चले आये जहां ७, ८ और ९ अप्रैलको आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें दो व्याख्यान देनेके अतिरिक्त शङ्का-समाधान भी खूब किया। वार्षिकोत्सवके पश्चात् मैं तो चला आया परन्तु आर्य्य मुसाफिर एक मास तक करनालमें ही रहे क्योंकि जिस टांगके फोड़के कारण मैं उन्हें शाहाबाद नहीं भेजना चाहता था वह फोड़ा इतस्ततः भ्रमण करते फिरनेके कारण बहुत खराब हो गया था। इसी फोड़ेके सम्बन्धमें एक मनोरञ्जक बात मुझे याद आई है। पण्डितजीने कुछ सभासदोंसे पूछा—"किसी आर्य्य-डाक्टरके पास मुझे ले चलो तो फोड़ा दिखलाऊंगा।" एक अधिकारीने किसी मुसलमान डाक्टरका नाम लेकर कहा कि उसे बुलाकर दिखायेंगे। पण्डितजीने फिर पूछा कि क्या कोई आर्य्य डाक्टर नहीं है। लाला कर्त्तारामने कहा—"डाक्टर तो

कोई आर्य्यसमाजका सभासद् नहीं। इलाजमें आर्य्या अनार्य्य-पना क्या घुसा है।" आर्य्य-पथिककी आंखें लाल हो गईं और बोले—"खाक आर्य्या-समाज है! एक डाक्टरको भी आर्य्या नहीं बना सकते।" मैंने हंस कर कहा कि जिस समाजका कोई डाक्टर सभासद् न हो तो क्या उसे आर्य्य समाज ही न कहा जाय। आर्य्या-पथिकने कुछ गम्भीर होकर उत्तर दिया—"जिस आर्य समाजने डाक्टरों, स्कूलके अध्यापकों और विद्यार्थियोंको आर्य नहीं बनाया उसने क्या खाक काम किया। जड़को सींचनेसे ही वृक्ष हरा होता है।" इस उत्तरने मेरा अन्तःकरण तक लेखरामके पैरोंमें झुका दिया था।

इस एक मासके करनाल निवासके समयकी कुछ घटनायें लाला कर्त्तारामजीने लिखी हैं जिनका संक्षिप्त वृत्तान्त यहां देना शिक्षाप्रद होगा—"एक दिन एक पादरी साहब पंडितजीसे मिलनेके लिये आर्य मन्दिरमें आये। मेरे सामने उन्होंने वैदिक-धर्मके विषयमें कुछ प्रश्न किये जिनका उत्तर पण्डित लेखरामजीने बड़े नम्र, मधुर शब्दोंमें दिया। इसके पश्चात् पं० जीने क्रिश्चियन मतके विषयमें कुछ बातें पूछीं जो पादरी साहबके बतलाने पर नोट कर लीं। पादरी साहबने विदा होते समय पं० जीकी योग्यता और शिष्टाचारकी बहुत प्रशंसा की।

"इन्हीं दिनों करनाल पोस्ट आफिसके महाशय गोपालजी सहायके पुत्र उत्पन्न हुआ। ज्योतिषीने व्यवस्था दी कि लड़का माता, पिता, भाइयोंको मार कर रहेगा। माता, पिताने उसके

लिये दूसरे माता पिता ढूंढ़ने चाहे परन्तु ऐसी उत्तम ख्याति वाले बालकको अङ्गीकार कौन करता। पण्डित लेखरामको जब पता लगा तो उन्होंने समझा कर महाशय गोपाल सहाय-को ऐसी अनुचित कार्य वाहीसे रोका। परिणाम यह हुआ कि न केवल सारा परिवार ही जीवित है प्रत्युत उस बालकके दो भाई और हो चुके हैं और पिताकी वेतन वृद्धि होती रही।

"पण्डितजी सन्ध्या-वन्दनमें बड़े पक्के थे। नित्य शारीरिक व्यायाम भी करते थे। निकम्मे, ख़राब पके हुए भोजनसे उन्हें घृणा था। भोजन-छादनमें सावधान रहते। एक बार मैंने कहा—"महाराज! आपको भोजन विषयमें कुछ नहीं कहना चाहिये। यह आपकी शानके बरखिलाफ है।" बड़ी सख्तीसे जवाब दिया—"हम लोग जो दिन रात बाहर घूमते और दिमाग़ी काम करते हैं अगर भोजन छादनमें बेपरवाई करें तो काम कैसे होगा। जो उपदेशक इस विषयमें सचेत न रहेंगे वे या तो शीघ्र मर जायंगे वा कामसे थक कर बैठ जायंगे।

"प्रातःकाल ब्राह्ममुहूर्तमें उठते थे। शौचके लिये बाहर जङ्गलमें जाते थे। समय व्यर्थ नहीं खोते थे। कभी ख़ाली बैठे नहीं देखे गये। रातके ठीक दस बजे सो जाते थे। चार पांच घन्टे बराबर उपदेश देना उनके लिये साधारण बात थी। ऐसा निडर, धर्मात्मा, सदाचारी उपदेशक मैंने और नहीं देखा। करनालसे शायद मई १८९४ के मध्य भागमें आर्य्य-पथिक

लौट आये और फिर जालन्धरमें बैठ कर ऋषि-जीवन सम्बन्धी काम करते रहे। इस अन्तरमें उन्होंने स्थानीय प्रचार बन्द नहीं किया और आस पास भी धर्म-प्रचारके लिए जाते रहे। ५ जुलाईको उनका व्याख्यान जालन्धर आर्य्य-मन्दिरमें होना छपा हुआ है।

९ जुलाई १८९४ को पण्डित लेखरामजी मेरे साथ क्वेटा आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिए चले। रास्तेमें मुलतानमें एक व्याख्यान देकर क्वेटे पहुंचे। वार्षिकोत्सवसे पहले "पुनर्जन्म" विषय पर उनका बड़ा सार-गर्भित और आन्दोलन पूर्ण व्याख्यान हुआ था। मैं तो वार्षिकोत्सवके पश्चात् १०००) से अधिक धन वेद-प्रचार निधिके लिए लेकर लौट आया परन्तु पण्डित लेखरामजी क्वेटेमें ही रह गये। वहां उनके १३ व्याख्यान हुए। वहांसे हिरक, दोज़ान, मच्छ, बोस्तान, खोस्ट, शाहरिगमें, कहीं दो कहीं तीन, व्याख्यान देते हुए सीबीमें पहुंचे। १ अगस्तको यहां बड़ा प्रबल व्याख्यान हुआ और २ अगस्तको फिर सीबी निवासियोंको सच्चे धर्मका सन्देश सुनाया गया। ५ अगस्तको पांच छः सौ की जन-उपस्थितिमें "दीन महम्मद" और "महम्मद मुस्तफा" को शुद्ध करके फिरसे वैदिक-धर्ममें प्रविष्ट कराया गया। ८ अगस्तको सक्खरमें पहला व्याख्यान हुआ, और फिर तीन और व्याख्यान देकर आर्य्य-पथिकने सं० १८९४ ई० के आरम्भमें ही, जब कि उनको ऋषि दयानन्दके जीवन

चरित्रको शीघ्र छपवा डालनेकी आशा बन्ध गई थी, भारतवर्ष का सविस्तर इतिहास निकालनेसे पहले एक मासिक पत्र निकालनेका विचार किया था। उसका नाम करण संस्कार "विद्यावर्तक" किया था और उद्देश्य यह था कि उसके द्वारा वैदिक-धर्मके प्रचार तथा आर्य्य जातिकी सेवाके सब काम किये जावें। अगस्त १८९४ में पहले अङ्ककी विषय सूची इस प्रकार तय्यार की थी—

(१) कितने आर्य-समाज स्थापित हुए, (२) कितने मुसलमान या ईसाई वा मुसलमान शुद्ध हुए, (३) कितनी विधवाओंके विवाह हुए, (४) विद्या सम्बन्धी लेख, (५) नये विद्या सम्बन्धी निरूपण, (६) वेद सम्बन्धी शंकाओंका समाधान, (७) ऋषियोंके जीवन चरित्र।

पण्डित लेखरामकी इस शुभ इच्छाकी पूर्तिके लिये आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाबने उनकी मृत्युके डेढ़ वर्ष पश्चात् "आर्य्य मुसाफ़िर" नामक मासिक पत्र प्रकाशित करना आरम्भ किया था जो अब तक गिरता पड़ता चल रहा है। यदि इस पत्रको समयानुसार उर्दू भाषामें तत्वान्वेषणका साधन बनाया जावे तभी आर्य्य-समाजको एक जाग्रत शक्ति कहा जा सकेगा।

सितम्बर, १८९४ का एक और नोट मुझे मिला है जिससे पण्डित लेखरामके हृदयके भाव विस्पष्टतासे प्रतीत होते हैं—

"समग्र भारतवर्षको आर्य्य-धर्ममें लानेके निम्न साधन हैं। यदि इनमें हम, ईश्वरकी कृपासे, कृत-कार्य हों तो अवश्य सब लोग सद्धर्ममें आजावें :—

प्रथम—विधवा विवाह या और कोई साधन जिससे भविष्यमें स्त्रियां मुसलमानी वा ईसाई न हों।

द्वितीय—शुद्धि फन्ड जिससे सब मतोंके अनुयायी वैदिक-धर्म में आ सकें।

तृतीय—वेद प्रचार निधि स्थापित करना अर्थात् उपदेशक तय्यार करना।

चतुर्थ—बचपनका विवाह रोकना।

पञ्चम—पुस्तक प्रचार प्रत्येक भाषामें और साइन्सकी वह बातें जो वेद-धर्मके विरुद्ध हों, उन पर विचार करना।

षष्ठ—साधु कम हों और उपदेशक बनकर वर्तमान साधु धर्मका कार्य करें।

सप्तम—दानकी व्यवस्था ठीक करना।"

सितम्बर १८९४ के मध्यमें हम पण्डित लेखरामको श्री-गोविन्दपुर आर्य्य समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित पाते हैं; और इन्हीं दिनों प्रचारकमें "दरियाई मज़हब" पर आर्य्य-पथिकका एक विस्तृत नोट देखते हैं।

ऐसा मालूम होता है कि श्रीगोविन्दपुरसे निवृत्त होकर पण्डित लेखराम कुछ दिनों जालन्धरमें जीवन-चरित्रका काम करते रहे और फिर २९ और ३० अक्टूबर १८९४ को गुरुदास

पुर आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए। दोनों दिन "-पुनर्जन्म" और "सचाईका मजबूत चट्टान" विषयों पर ऐतिहासिक दृष्टिसे बड़े गम्भीर और जन-प्रिय व्याख्यान देकर महम्मदी प्रश्न कर्त्ताओंकी शङ्काओंका भी समाधान किया। गुरुदासपुरसे लौट कर ही, अपनी धर्म-पत्नीको घर पहुंचा, पण्डित लेखराम कोहाट पहुंचे जहां उन्होंने ५ नवम्बरसे ११ नवम्बर, सं० १८९४ तक बराबर ६ व्याख्यान दिये। इन्ही दिनों एक आर्य्य भाईके यहां मौत होजानेपर आर्य्य-पथिक ने मृतक संस्कार वैदिक रीत्यनुसार कराया।

कोहाटमें पण्डित लेखरामके व्याख्यानोंकी वैसी ही धूम मच गई जैसी अन्य स्थानोंमें सुननेमें आती थी। यहां बन्नू आर्य्य-समाजकी ओरसे तारोंपर तारें आती रहीं क्योंकि एक माससे बन्नू निवासी आर्य्य-पथिकके व्याख्यानोंके प्यासे बैठे थे। अन्तको १२ नवम्बरके दिन कोहाटसे तार-समाचार पहुंचा कि पण्डित लेखरामजी टाङ्गामें बन्नूको चल दिये हैं। आर्य्य भाई नगर निवासियों समेत टाङ्गाके स्थानमें पहुंच गये और हमारे चरित्र नायकका स्वागत कर भजन कीर्तन करते हुए उन्हें नौ बजे रातके आर्य्य-मन्दिरमें पहुंचाया।

दूसरे दिनसे ही व्याख्यानोंका सिलसिला शुरू हो गया। ईश्वरकी हस्ती, मुक्ति-पथ, धर्म्म, सचाईका चट्टान और आर्य्य-जीवन (विषयों) पर बड़े सार-गर्भित तथा दिलोंको हिलाने वाले व्याख्यान हुए। एक दिन प्रश्नोत्तरके लिए रक्खा

गया जिसमें किसी अन्य मतावलम्बीने तो कोई प्रश्न न किया, किन्तु सनातन-धर्म्म-सभाके मन्त्रीका पत्र आदित्यवारको शास्त्रार्थके लिए नियत करनेके निमित्त आया। तदानुसार आदित्यवारको बड़ी जन--उपस्थितिमें सनातन-सभाके मन्त्री तथा एक अन्य पण्डितका "काफियातङ्ग" कर दिया। इन्हीं दिनोंमेंसे १९ जनवरीका दिन अपने अन्वेषणके अनुरागकी तृप्तिके लिए नियत किया और ग्राम कक्किभरत् के खण्डरातको जाकर देखा। लोगोंमें प्रसिद्ध है कि भरतकी नन्हसाल अर्थात् महाराजा कैकेयकी राजधानी इसी स्थानमें थी। एक पुराना सिक्का देख कर पीछेसे उसको २२) रुपयों तक खरीदनेकी भी आज्ञा मन्त्री आर्य्य-समाजको भेजी, किन्तु जिस मनुष्यके पास वह सिक्का था, वह उस समय मर चुका था।

२० नवम्बरको पण्डित लेखरामका अन्तिम व्याख्यान था। विषय "आर्य्य-जीवन" था। इस व्याख्यानमें आर्य्य-जीवनका चित्र खींचते हुए मर्य्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र, हकीकतराय, पूर्ण भक्तादिके दृष्टान्तोंको श्रोतागणके आगे ऐसी योग्यतासे रक्खा कि मृत प्राणियोंमें भी जीवन पड़ गया और पत्थर दिलोंको भी मोम बना आठ आठ आंसू रुलाया।

२१ नवम्बरको बन्नूसे चल कर डेराइस्माइलखांके रास्ते लाहौर आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये प्रस्थान किया। मालूम होता है कि २२ नवम्बरकी रातको दरियाखां रेलवे स्टेशनसे लाला मूसाके लिये चल दिये जहां

२३ नवम्बरके प्रातःकाल पहुंच गये। लालामूसामें कुछ देर तक ठहरना पड़ता है क्योंकि रावलपिण्डीसे डाक यहां १२ बजेके पश्चात् पहुंचती है।

परिडत लेखराम अपना समय व्यर्थ गंवाने वाले न थे इस लिये स्टेशनके किसी बाबूसे समाचार-पत्र मांगे। जो पत्र बाबूने दिये उन्हींमें ७ नवम्बरका 'मित्र-विलास' मिल गया। उसी समय डायरीमें नोट कर लिया—"१० अक्टूबरके मेसेन्जरमें लिखा है कि परोपकारिणी-सभा सत्यार्थ-प्रकाशमेंसे वह लेख जो बाबा नानककी बाबत है निकाल देवें। देखना है कि समाज इसको क्या समझती है" (मित्रविलास)—

उत्तर—परोपकारिणी-सभा इसको नहीं निकाल सकती। समाज इसको स्वामीजीकी तहरीर (लेख) समझता है और जब तक उसकी गलती मालूम न हो बिल्कुल सही समझता है। और ग़लती मालूम हो जाने पर आर्य्य-समाज नियम ४ के अनुसार ग़लती कबूल (भूल स्वीकार) करनेको तय्यार है। लेखराम आर्य्य-मुसाफिर बक़लमखुद—मुफ़स्सिल जवाब दिया जायगा। २३ नवम्बर, १८९४, रेलवेस्टेशन लालामूसा।"

धुन यह लगी रहती थी कि आर्य्य-समाज पर कोई आक्षेप ऐसा न रहे जिसका उचित उत्तर न दिया जाय। इन्हीं दिनों दक्षिण-हैदराबादमें निजामकी पुलिसने परिडत गोकुलप्रसाद पौराणिकके मुकाबिलेमें व्याख्यान देने वाले परिडत बाल-कृष्ण शास्त्री आर्य्योपदेशक तथा ब्रह्मचारी नित्यानन्दजीको

राजसे बाहर कर दिया था। उसका हाल मित्रविलासमें पढ़ कर नोट कर लिया कि उसके विषयमें आन्दोलन करके आर्य्य समाजकी रक्षाके लिये लेख लिखेंगे।

२३ नवम्बरकी डाकमें लाहौर पहुंच कर पण्डित लेखराम-जीने नगर कीर्तनकी शोभा अवलोकन की और २४ नवम्बर-को आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें मध्यान्होत्तरके समय, पौराणिक सभाकी ओरसे पण्डित गोपीनाथ, गोपालशास्त्री और एक साधुको लेकर आये थे। पौराणिकोंकी वक्तृताओं-का जिक्र करके सद्धर्म-प्रचारकमें लिखा है—"किन्तु जब आर्य्य-मुनिजीने दोनों (सनातनी) बोलने वालोंका परस्पर विरोध, अपनी प्रबल युक्तियोंसे, दिखलाया और आर्य्यपथिक-ने वेद प्रमाणोंसे सनातनियोंके प्रमाणों और युक्तियोंको खण्ड खण्ड कर दिया तो फिर जो प्रभाव श्रोता-गण पर पड़ा उस-का अनुमान वही लोग कर सकते हैं जिन्होंने इन दोनों उप-देशकोंके प्रसिद्ध शास्त्रार्थ देखे हैं।"

२५ नवम्बरको अन्तिम व्याख्यान पण्डित लेखरामका था। समय केवल एक घण्टा दिया गया था परन्तु जब आर्य्य-पथिक आर्य्य-समाजके नियमोंकी व्याख्या करने लगे तो फिर श्रोतागण भला कब हिलने का नाम लेते। अढ़ाई घन्टे तक बराबर श्रोतागण लिखित चित्रवत् बैठे रहे। यदि वक्ता एक घण्टा और बोलते तब भी श्रोतागण बैठे रहनेको तैयार थे।

लाहौरसे आर्य्य-पथिक अपने जन्मदाता आर्य्य-समाज

पेशावरमें गये और ३ से ५ दिसम्बर, १८६४ तक बराबर व्याख्यान दिये। ६ दिसम्बर, को रावलपिंडी उतरे, परन्तु व्याख्यानका प्रबन्ध न होनेके कारण अपने निवास-स्थान कहूटा को चले गये। इस बार अपने ग्राममें लाभचन्द्र भजनीक को भी साथ ले गये और दो दिनों तक वैदिक-धर्मका खूब प्रचार हुआ। वहांसे रास्तेमें गूजर खां, चकवालादि स्थानोंमें वैदिक-धर्मका डङ्का बजाते हुए २५ दिसम्बर, सन् १८६४ को जालन्धर आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें आकर सम्मिलित हुए।

पंडित लेखराम चकवालमें थे जब ईसाई अखबार "नूर-अफशां" में किसी का छपवाया हुआ लेख देखा जिसमें लिखा था कि पण्डित लेखरामने एकबार गुजरातमें ईसाके विचित्र जन्मका पता वेदोंसे दिया था। आर्य्य-पथिकने वहींसे उस लेखका खन्डन सद्धर्म्म-प्रचारकके लिये भेजा, जो १५ पौष १६५१के अङ्कमें छपा था।

जालन्धर आर्य्य-समाजके इस वार्षिकोत्सवमें पण्डित लेख-राम का पहला व्याख्यान स्मरणीय है। विषय "धर्म परात्मा की कसौटी" था जिसे आर्य्य-पथिक ने ऐसा प्रभावशाली बनाया कि सद्धर्म प्रचारकके संवाददाताके शब्दोंमें—"एक साधु, जो आगरेके राय शालिग्राम का चेला हो चुका था, और राधा स्वामीके जापमें निगम्न था, व्याकुल हुआ। पण्डित (लेखराम) जीसे फिर मिला और अन्तको वैदिक धर्मका शरणमें आकर

उसने राय शालिग्रामको पोस्टकार्ड भेज दिया कि पण्डित लेखरामका व्याख्यान सुनकर उसे राधा स्वामी मत पर विश्वास नहीं रहा ।"



ग्यारहवां अध्याय

ऋषि जीवन की छपाई

और

लाहौरकी स्थिति ।



स्वामी दयानन्दके जीवन चरित्र की पूर्तिके लिये आवश्यक यह था कि पण्डित लेखराम बाहरके आन्दोलनके पश्चात् किसी विशेष स्थानमें बैठकर काम करें, परन्तु एक ओर पण्डित लेखरामका अपना धार्मिक उत्साह और दूसरी ओर आर्य्य जनताकी आवश्यकताएं उनको एक स्थानमें बैठने न देती थीं। आर्य्य-प्रतिनिधि सभाने कई बार विशेष नियम बना बना कर पंडित लेखरामको दिये, परन्तु आर्य्यपथिकके धार्मिक जोश को ठण्ढा करनेके लिये कोई भी नियम पर्याप्त न थे। जीवन चरित्रका काम करते हुए उनको बुलानेके लिये यह लिख देना काफी था कि एक आर्य्य-जातिस्थ पुरुष मुसलमान होनेवाला है वा किसी महम्मदी प्रचारकके साथ शास्त्रार्थकी सम्भावना है; और फिर यदि सभाकी ओरसे आक्षेप होता तो पण्डित लेखराम का यह उत्तर, कि शास्त्रार्थके दिनोंका वेतन काट लो, सभाके अधि-

कारियों को चुप करानेका अपूर्व साधन था। मेरे पास पंडित लेखराम को इसी लिये रक्खा गया था कि जमा किये वृत्तान्त को किसा क्रमसे ठीक करके छपवानेका प्रबन्ध करूं। परन्तु यह इकट्ठा किया हुआ मसाला समझमें नहीं आ सकता था जब तक पंडित लेखराम ही उसे नोटोंसे साहित्य का रूप न देते, और मैं आर्य्य पथिक को प्रचारके लिये भेजने पर मजबूर था। जब मैंने सभामें रिपोर्ट कर दी कि पड़तालका कार्य्य किसी अन्य सज्जनके सुपुर्द हो, तो सर्व पत्रादि राय ठाकुरदत्तजीके पास भेजे गये। परन्तु जब राय साहेबने भी इन पत्रों को अभी अपूर्ण बतलाया तो फिर यह निश्चय हुआ कि लाहौरमें स्थित होकर पण्डित लेखराम ही ऋषि का जीवन वृत्तान्त ठीक करके छपवाना आरम्भ कर दें।

उपरोक्त निश्चयके अनुसार पं० लेखरामजीने लाला जीवन दास पेन्शनरके मकानमें रहनेका प्रबन्ध किया और अपनी धर्म-पत्नी को लाहौर लानेके लिये जनवरी, १८९५के मध्य भागमें घर की ओर चल दिये। मार्गमें गुजरातके आर्यों के निवेदन पर ठहर कर एक भूले भाईको वैदिक धर्मकी सच्चाइयोंका उपदेश करके मुसलमान होनेसे बचाया। १८ जनवरीको लाला मूसामें व्याख्यान देकर १९ जनवरीको गुजरातमें "सद्धर्म की प्राप्ति" विषय पर एक व्याख्यान दिया और फिर घर जाकर अपनी धर्म-पत्नीजी को साथ ले सीधे लाहौरमें उपस्थित हुए।

इन्हीं दिनों पण्डित लेखरामजीको प्रेरणा पर जो मैंने वेद भाष्य की रक्षा विषयक लेख प्रचारकमें लिखे थे, उनका परिणाम निकल आया। यह पण्डित लेखरामने ही पता लगाया था कि ऋषि दयानन्दके वेद भाष्य का आर्य्य भाषामें अनुवाद करते हुए ब्राह्मण कुलोत्पन्न पण्डित अपने सिद्धान्त बीचमें घुसेड़ कर भाष्यको संदिग्ध बना रहे हैं। परोपकारिणी सभाने यह निश्चय मुद्रित कराया कि "महर्षि दयानन्द कृत पुस्तकोंके शोधनेके लिये पण्डित लेखरामजीको लिखा जावे कि वह अशुद्धियां छांट कर वैदिक यन्त्रालयके अधिष्ठाताके पास लिख भेजें।

लाहौरमें स्थित होकर पण्डित लेखरामने जीवन चरित्रका लेख कातिब (लेखक) के हाथमें देना शुरू तो कर दिया परन्तु फिर भी एक ओर लगकर काम करना उन्हें वहां भी न मिला। ९ फरवरी १८९५ के दिन हम उन्हें अपने देशकी आवश्यकता पर मान्टगुमरीमें व्याख्यान देते पाते हैं और फिर १० फरवरीको गुजरांवालामें "हमारी मौजूदा तहकीकात" पर प्रकाश डालते देखते हैं। कारण वही मांस-भक्षणका झगड़ा था। जहां कहीं कालिज दलके आदमी समाजको अपनी ओर खींचने जाते वहीं पण्डित लेखरामको भेजना पड़ता।

परन्तु केवल सभाके अधिकारी ही ऋषि जीवनकी तय्यारीमें बाधा डालनेवाले नहीं समझे जा सकते; स्वयं पण्डित

लेखरामका भी इसमें बड़ा भारी हाथ होता था। मान्टगुमरी और गुजरांवाला जानेका हाल मुझे भेजते हुए आर्यपथिक अपने १४ फरवरी, १८९५ के पत्रमें लिखते हैं—"अब भिवाना स्यालकोट, करांची, होशियारपुरके जलसे समीप आ गये। आपने क्या सलाह की है। आप समेत ८ महाशय जानेवाले हैं। उनमेंसे ४ स्यालकोट और ४ भिवानी चले जावें। मैं और पण्डित कृपारामजी दोनों, लाभचन्द्र (भजनीक) समेत, होशियारपुरको भुगत लेंगे। बतलाइये अब क्या आज्ञा है? जिन जिनको जिस स्थानमें भेजना है, आप भली प्रकार सोच विचार कर, शीघ्र सबको सूचित कर दीजिये जिससे ठीक समय पर काम हो।"

ऊपरका उद्धृत लेख स्पष्ट सिद्ध करता है कि जिस प्रकार पण्डित लेखराम पेशावर आर्य-समाजके प्रबन्धकर्त्ता बने हुए थे उससे भी बढ़कर उन्हें दिन रात आर्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाब की चिन्ता रहती थी; परन्तु यश और कीर्तिका लेशमात्र भी लालच उन्हें न था। होशियारपुर न जाकर २३, २४ फरवरीको भिवानी आर्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए जहां व्याख्यानोंके अतिरिक्त धर्म-चर्चामें भी विशेष भाग लिया।

भिवानासे पण्डित लेखराम सीधे करनाल आर्य-समाजके जलसे पर पहुंचे और उसी स्थानमें उनके साथ मैं भी शामिल होकर २७ से २९ मार्च तक काम करता रहा। शङ्का-समाधान

का तो अधिक बोझ पण्डित लेखराम पर रहता ही था, परन्तु करनालके इस वार्षिकोत्सव पर जो दो व्याख्यान उन्होंने दिये उन्होंने हिन्दुओंके मुर्दा तनोंमें भी जीवन फूंक दिया। पतितोंके उद्धार और आर्य-जातिके भविष्य पर ऐसे बल-वर्धक व्याख्यान मैंने पहले नहीं सुने थे।

इसी वर्ष चिरकालसे सोया हुआ दिल्ली आर्य्य समाज जाग उठा था और ३० मार्च, १८६५ से उनके वार्षिकोत्सवका आरम्भ था। इस वार्षिकोत्सवमें भी पण्डित लेखराम मेरे साथ ही करनालसे चलकर सम्मिलित हुए थे। दिल्ली नगरमें हमारा पहला नगरकीर्तन था इसलिये दिल्ली वाले हमारी भजन-मण्ड-लियोंको भी तमाशे वालेका विज्ञापन समझे। तब हमारे उपदेशकोंने भजनोंके पश्चात् ऊंचे मूढ़ोंपर खड़े होकर व्याख्यान आरम्भ कर दिये। इस नगर-प्रचारमें पण्डित लेखरामने बड़ा काम किया। जब चांदनी चौकमें छुन्नामल वालोंके मकानके नीचे पण्डित लेखरामने अपनी वक्तृता आरम्भ की तो दो हज़ारसे कमकी भीड़ भाड़ न थी।

पण्डित लेखरामके व्याख्यानोंमें महम्मदी लोग बहुत आते थे। बाहरसे चाहे कुछ भाव लेकर आते परन्तु आर्य्यपथिककी आस्तिकता पूर्ण युक्तियां सुनकर "सुभान-अल्ला" और "बारकअल्ला" के ही "नारे बलन्द" होते और दाढ़ी वाले सिर और गर्दनें चारों ओर हिलती दिखाई देतीं।

अभी लाहौर पहुंचकर जीवन-चरित्रका कार्य फिरसे

आरम्भ किया ही था कि सियालकोटसे एक सिक्ख रिसाले-के सवारोंके डांवाडोल होनेके समाचार पहुंचे। पण्डित लेख-राम उसी समय सियालकोट पहुंचे और बड़े प्रेमसे अपने सिक्ख भाइयोंको धर्मका महत्व समझाया। तीन दिन तक महम्मदी मत खण्डनमें आर्य्य-पथिकके प्रबल व्याख्यान होते रहे जिसका परिणाम यह हुआ कि सैकड़ों खालसे मुसलमान होनेसे बचे गये।

१३ अप्रैल, १८६५ के प्रातःकाल मेरे साथ पण्डित लेख-रामजी मालेरकोटला आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए। यहांकी कुछ मनोरञ्जक घटनायें वर्णन करनेके योग्य हैं। (१) मुसलमानी रियासत होनेके कारण पण्डित लेख-रामके पहुंचनेको धूम मच गई। मध्यान्होत्तरका समय धर्म-चर्चाके लिये निश्चित था। एक सभ्य मुसलमान सज्जन, मुंशी अबदुल्लतीफ़ नामी ने पुनर्जन्म पर कुछ प्रश्न किये जिनका उत्तर पण्डित कृपाराम देते रहे, परन्तु मुंशीसाहब प्रश्नोत्तरके पश्चात् केवल यह कह देते कि उनकी तसल्ली नहीं हुई। जब तीन चार बार ऐसा ही हुआ तो मैंने पण्डित कृपारामजी-का आशय उनको समझाना चाहा। इस पर वह बहुत बिगड़े। फिर भी जब दो तीन बार मैं प्रबन्धके लिये उठा तो मुन्शी साहबने रोक कर कहा—"आप कौन हैं जो बार बार प्रबन्धके लिये उठते हैं।" मैंने उत्तर दिया कि मैं स्थानिक प्रधानकी आज्ञासे प्रबन्ध कर रहा हूं। जब इसपर

मुन्शी साहबको विश्वास न आया तो प्रधान स्थानीय आर्य्य-समाजने मेरे कथनका समर्थन किया और मैंने कहा कि मैं पञ्जाब आर्य्य प्रतिनिधि सभाका भी प्रधान हूं इसलिये प्रबन्धमें हाथ दे सकता हूं। मुन्शी साहब इस पर बोले—"आपका नाम किसी प्रतिनिधिके ताल्लुक (सम्बन्ध) में किसी अख़बारमें, ख़ुसूसियतसे (विशेषतः) सद्धर्म्म-प्रचारकमें भी, कभी नहीं पढ़ा। आप प्रतिनिधिके हरगिज प्रधान नहीं हैं।" तब तो मुझे कुछ असलियत खटकी और मैंने पूछा—"क्या आप मेरा नाम भी जानते हैं?" मुन्शी अबदुल्लतीफ़ साहबने फ़रमाया—"ख़ूब जानता हूं। आप पण्डत (पण्डित) लेख-राम साहेब हैं।" इस पर श्रोतागण खिलखिला कर हंस पड़े और मुझे पता लगा कि पञ्जाबी लोकोक्ति ठीक है—

"नामा-शाह खट्ट-खाय, बदनाम चोर मारा जाय।"

पण्डित लेखरामके व्याख्यान तो मुन्शी साहबने सुने ही, परन्तु मेरे व्याख्यानके पश्चात् मेरे हाथमें ५) इस लिये दिये कि मैं जिस शुभकार्य्यमें उसे व्यय करना चाहूं करदूं। (२) दूसरी मनोरंजक घटना रातको हुई। मैं दस बारह दिनोंसे दिन रात काम करता आया था, इस लिये एकान्तमें जाकर सो गया। एक घण्टेके पश्चात् ही दो भाई मेरे पैर दबाने लगे। मैं उठ खड़ा हुआ। क्षमा मांग कर उन भाइयोंने कहा कि अनर्थ होने लगा है, शीघ्र चलिये। मुसलमानी रियासत और हमारे मना करते करते पण्डित लेखरामने मुसलमानोंसे

मुबाहसा शुरू कर दिया है ! मैं भागा हुआ पण्डित लेखरामकी ओर चल दिया। वहां क्या देखता हूं कि चार पांच मुसलमानोंके बीचमें बैठे पण्डित लेखरामने एक मुसलमान युवकका हाथ अपने हाथमें लिया हुआ है और दूसरा हाथ उसकी जांघ पर रख रख कर उसे प्रेमसे कुछ समझा रहे हैं, और युवक कह रहा है—"यह हवाला तो, पण्डितजी, आपने कुरान शरीफमेंसे निकाल ही दिया। अब तो अपने मौलवी साहबसे फिर पूछ कर आऊंगा।" परन्तु पण्डित लेखराम ऐसी जल्दी कब जाने देते थे। बोले—"मैं तो मुसाफिर हूं, न जाने फिर मिलना हो या नहीं। मेरा आशय तो सुन लो।" फिर आध घण्टे तक वैदिक-धर्मकी श्रेष्ठता जतला कर उन सब मुसलमान भाइयोंको बड़े प्रेमसे विदा किया। जब मुसलमान विदा हो चुके, और पण्डित लेखरामको मेरे आनेका कारण ज्ञात हुआ, तो स्थानीय आर्य्य-समाजियोंसे कहने लगे—"तुम बड़े बोदे हो। क्या मैं तुमलोंके भरोसे पर धर्मका प्रचार कर रहा हूं ? ईश्वर जानता है, तुमसे अविश्वासी नास्तिकोंसे तो निमाजी मुसलमान हजार दर्जे बेहतर हैं।

(३) फिर जब मैं १४ अप्रैलकी रातको शिक्रममें बैठने लगा तो तीसरी मनोरंजक घटना हुई। आर्य्य पुरुष चाहते थे कि पण्डित लेखराम मेरे साथ ही विदा हो जायं, इस लिए मेरी शिक्रमको ठहरा लिया (क्योंकि उन दिनों मालेरकोटलेको रेल नहीं जाती थी) और पण्डित लेखरामको कहा कि मैं उनके

लिये ठहरा हुआ हूं। आर्य्य-पथिक बिना विस्तर आदि लिये आये और पूछा—"क्या आप मुझे जबरदस्ती साथ ले जाना चाहते हैं।" स्थानीय अधिकारियोंकी दशाका ध्यान करके मैंने कहा—"चलिये तो अच्छा ही है।" परिडतजीके लब-फड़कने लगे—"मैं सब कुछ समझ गया हूं। आप मुझे आजसे सभाका नौकर न समझिये। ईश्वर जानता है, ये लोग आर्य्य नहीं हैं। क्या मैं इन बुजदिलोंको खुश करनेके लिये मैदानसे भाग जाऊं। मैं सरायमें डेरा करके यहीं रहूंगा" मैं तो खिलखिला कर हंसा और परिडतजीको नमस्ते कह कर शिक्रम चलवादी और मालेरकोटलेके आर्य्यसमाजी लज्जित होकर आर्य्य-पथिककी सेवा शुश्रूषामें सन्नद्ध हुए।

मलेरकोटलेसे लौटनेके पश्चात् परिडत लेखरामके रोपड़ आर्य्य-समाजके जलसेमें, २७ अप्रलको, सम्मिलित होनेका पता लगता है, जहां उनके दो व्याख्यान हुए थे।

इन्हीं दिनों प्रीतमदेव शर्माकी न्याई उदासी साधु बालक-रामने भी पञ्जाबका दौरा शुरू किया था और जिस प्रकार प्रीतमदेव, केशवानन्दादिने स्वामी दयानन्द और आर्य्य-समाज को गालियां देना ही धनसञ्चय करनेका साधन समझा था वैसा ही बालकरामने भी अमल शुरू किया। इस लिए परिडत लेखरामको इसके मुकाबिलेमें कई जगह जाना पड़ा था। मास मई, १८९५ के आरम्भमें उदासी बालकराम भेरेमें था, इस लिए परिडत लेखरामने वहां पहुंच कर बराबर तीन व्याख्यान

दिये। यद्यपि शास्त्रार्थके लिए बालकरामजी तय्यार न हुए तथापि भेरा आर्य्य-समाजका वार्षिकोत्सव २४, २५, २६ मई १८९५ के लिए नियत हो गया।

पण्डित लेखरामके घरमें सन्तानोत्पत्तिकी आशा थी, इस लिए वह १५ मई, १८९५ को लाहौरसे अपनी धर्म-पत्नीको साथ लेकर अपने घर कहूटे में पहुंचे, जहां १८ मई शनिवारके दिन प्रातः ९ और १० बजेके बीचमें उनके यहां पुत्र उत्पन्न हुआ। बच्चे का नाम-करण संस्कार वैदिक रीतिसे करके, २२ मईको आर्य्य-पथिकने फिर यात्रा आरम्भ कर दी। ३५ वर्षको आयुमें विवाह करके जब पुत्र उत्पन्न हो तो उसके आनन्दमें एक साधारण पुरुष सब कुछ भूल जाता है, परन्तु यहां तो अपने पुत्र द्वारा मन्त्रीजीसे प्रतिज्ञा कर चुके थे कि गूजरखां और तरक्कामें विशेष कार्य्यों के लिये २३ और २४ मई को ठहरते हुए २५ को भेरा आर्य्य-समाजके उत्सवमें सम्मिलित हो जायंगे। और ऐसा ही किया भी।

भेरा आर्य्य-समाजके इस वार्षिकोत्सवमें मैं भी सम्मिलित था। पण्डित लेखरामजी अपने पुरुषार्थको सफल देख कर गद् गद् हो रहे थे। साधु बालकरामको भी निमन्त्रण भेजा गया परन्तु वह आकर अपनी अप्रतिष्ठा कब कराता था? यहां आपके एक व्याख्यानका विषय था "आजकलके नौजवान (युवक) और उनकी हिम्मत।" इस व्याख्यानमें आर्य्य-पथिकने कहा—"जो युवक व्यायाम नहीं करते वे खाकर कुछ

पचा नहीं सकते और जब काफी भोजन नहीं खाते तो बल कहांसे आवे। देखो हस्पतालके बीमारोंकी खुराक गवर्मेन्ट की ओरसे यह नियत है—आटा आधसेर, दाल एक पाव, घी एक छटांक, चावल आध पाव। हमारे युवक हस्पतालके बीमारोंसे भी बदतर हैं कि दो तीन फुलकियां खाकर उठ खड़े होते हैं।" पण्डित लेखरामजीके व्याख्यानका यह भाग उनके सब साथियों और नगर निवासियोंको भी कण्ठस्थ हो गया था। २७ के प्रातः हम सब भेरासे चले और ७।१२ बजे लाला मूसामें पहुंच कर स्नान सन्ध्यादि सारी जमातने किया। लगभग ६ वा ७ उपदेशक थे। भोजन बनवानेका काम पण्डित लेखरामने अपने जिम्मे लिया। जब भाजी आदिके साथ आटेकी पूरियां लाकर रक्खी गईं तो आध सेर आटे वाला मामला सबको हंसाता रहा। भोजनके समय आर्य्य-पथिक सबको टोकते जाते थे परन्तु मेरे साथ उनका सम्मुख्य हो गया। दो पूरियां उन्हें दी जाती तो दो ही मुझे। इस प्रकार जब सब हार गये और हम दोनों भी सत्रह सत्रह पूरियां खा चुके तो पण्डितजीने हाथ धो लिये और मैंने दो और लेकर बस की। तब पण्डितजी बोले—"लालाजी! मैं तो आपको रईसोंमें ही शुमार करता था। आपने तो गजब कर दिया।"

पण्डित लेखराम वैसे तो बड़ी टेढ़ी प्रकृतिके दिखाई देते थे, परन्तु थे बड़े ही हंस मुख और सरल हृदय; वह नहीं

सहन कर सकते थे तो मक्कारी और झूठको। भोजनके पश्चात् पुत्रोत्पत्तिके उपलक्षमें पण्डित लेखरामसे सह-भोज मांगा गया। पण्डितजीने उस समयके सारे भोजनका व्यय अपने पाससे देकर सबको प्रसन्न कर दिया।

भेरेसे लौट कर पण्डित लेखरामने अभी जीवन-चरित्रके कामको हाथ ही लगाया था कि फिर उनके लिए मांग क्वेटे से आई। इधर तो यह हाल और उधर जीवन-चरित्रका मसाला पड़ताल करानेके लिए अन्तरङ्ग सभाने प्रत्येक लेखकी तीन प्रतियां तय्यार करनेका प्रस्ताव स्वीकार किया। पण्डित लेखराम भी ऐसी अवस्थामें बड़े तङ्ग आ जाते थे। सभाके मन्त्रीके नाम जो पत्र १७ मईको उन्होंने कहूटे से लिखा उसमें दर्ज था—"आर्य्य-प्रतिनिधि-सभाके गत दो अधिवेशनोंमें लाला मुन्शीरामके, विशेष आवश्यकताओंके कारण, न सम्मिलित होनेसे काम पूर्ण न हुआ। जो रेजोल्यूशन पास हुए हैं म उनके साथ सहमत नहीं हूं। तीन कापियां करानेमें दो तीन सौ रुपये मुफ्तमें फालतू खर्च होंगे........एक कापीका होना तो जरूरी है किन्तु एकसे अधिक नहीं, उससे केवल व्यय ही बढ़ेगा। आप जानते हैं कि मैं यात्रामें, और विशेषतः उप-देशके लिए यात्रामें, जीवनचरित्रका काम बिल्कुल नहीं कर सकता। और यात्राकी असावधानतामें पत्रोंके गुम हो जानेका भी सन्देह रहता है। अब मैं सब पत्र लाला जीवनदासके मकान पर तालेमें बन्द कर आया हूं, साथ नहीं लाया।"

आर्य्य-पथिकके ऊपर लिखित दृढ़ प्रतिषेध करने पर भी उन्हें क्वेटे की ओर जानेकी आज्ञा मिली। तदनुसार वह ८ जून १८९५ को लाहौरसे चल कर मान्टगुमरी पहुंचे जहां उन्होंने दो व्याख्यान दिये। १३ जूनको सीबी पहुंच कर व्याख्यान दिया और १४ को क्वेटे पहुंच गये। १६ और १८ जूनको दो व्याख्यान देनेके पश्चात् जुलाईके अन्तिम सप्ताह में आर्य्य समाजका वार्षिकोत्सव रखवाया।

इन्हीं दिनों मेरठसे परिडत लेखरामको एक पत्र, जालन्धर से घूमता हुआ, क्वेटे में पहुंचा जिसमें लिखा था कि एक हिन्दू सभ्य मुसलमान हो चुका है और दूसरा होनेवाला है—और परिडत लेखरामसे सहायता चाही थी। क्वेटे से बिना आज्ञा मेरठ जाना कठिन था परन्तु परिडत लेखरामके अन्दर कैसा आत्मा काम करता था उसका पता उनके पत्रसे लगता है—"लाला मुन्शीरामजीको तार दी है कि इसका स्वयं प्रबन्ध करें या जैसी आज्ञा हो लिखें तो उसका पालन करूंगा। आप भी उनसे पूछ लें कि क्या बन्दोबस्त किया।"

इधर तो आर्य्यसमाज क्वेटाका वार्षिकोत्सव नियत कराया और उससे पहले धर्म-प्रचारका सिलसिला जमाया और उधर घरसे बड़ा शोकजनक समाचार मिला। जब परिडत लेखराम घर पर छुट्टी लेकर गये थे उन्हीं दिनों उनका भाई, तोताराम, बीमारीके बिस्तरेसे उठा था, परन्तु निर्बल अधिक था। क्वेटे में चचाका पत्र पहुंचा कि १२ जूनको भाईका देहान्त हो

गया। इस पर १ जुलाईको जो पत्र, क्वेटेसे, पण्डित लेखरामने सभाके मन्त्रीजीको लिखा वह उनके मानसिक भावोंको बड़ी उत्तमतासे प्रकट करता है!—मेरा छोटा भाई तोताराम १२ जूनको मर गया परन्तु घर वालोंने मुझे कुछ समय तक सूचित न किया। कल पेशावरसे मेरे चचाका पत्र आया जिससे हाल मालूम हुआ। हैरान हूं कि क्या करूं। इधर समाजका काम उधर गृहकी आपत्ति, हैरानी पर हैरानी है। यदि यहांसे काम छोड़कर चला जाता हूं तो अपने समाजको हानि पहुंचती है और वहां भी बहुतसा हर्ज है। लाचार मैंने आज ही घर पत्र लिखा है कि यदि वे मुझे आज्ञा दें तो जुलाईके अन्त तक क्वेटे रहूं, नहीं तो पत्र आनेपर आपको सूचना दूंगा।"

मालूम होता है कि घरवालोंने, पण्डित लेखरामका अपनी धार्मिक संस्थासे असीम प्रेम देखकर, फिर उन्हें तङ्ग नहीं किया क्योंकि क्वेटमें दो और व्याख्यान देकर हम उन्हें बलूचिस्तानका दौरा करते पाते हैं। २ जुलाई १८९५ को क्वेटसे चलकर बोलान, दोज़ान, कोलपुर, हिरक चतरज़ई, पनीरबन्द आदिमें प्रचार, और वेद प्रचारनिधिके लिये धन एकत्र, करते क्वेटमें लौट आये। फिर क्वेटा आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवसे पहले दो व्याख्यान देकर नगर-निवासियोंको तय्यार किया और वार्षिकोत्सवमें दो व्याख्यान देकर लौट आये।

परन्तु क्या पण्डित लेखराम भाईके मरनेसे १ महीना १०

दिनोंके पश्चात् घर लौटे ? दीनानगरसे तार आया था कि कि मुसलमानोंके साथ शास्त्रार्थ ठन गया है, तब आर्य्य-पथिक घर कैसे जाते ? ३० जुलाईको क्वेटे से चलकर २१ जुलाईको रूक जङ्क्शन स्टेशन पर प्रातः १० बजे "ईश्वर प्राप्ति" विषय पर व्याख्यान दिया और सीधे चलकर प्रथम अगस्तकी रातको दीनानगर रेलवे स्टेशन पर पहुंच गये। यहां मौलवी अकबर अली और मौलवी चिरागुद्दीन, महम्मदी मतके प्रचारक, पहलेसे जमे हुए थे, परन्तु शास्त्रार्थके लिए सामने न आये। तब दो अगस्तसे आरम्भ करके मौलवियोंके मुक़ाबिलेमें तीन जबरदस्त व्याख्यान दिये, और जनताके आग्रहपर फिर तीन दिन और ठहर कर "वैदिक-धर्मकी श्रेष्ठता" "सन्ध्याकी आवश्यकता" और "सच्चाईका मज़बूत चट्टान" विषयों पर बड़े सार-गर्भित व्याख्यान दिये। इनका प्रभाव उस समयके स्थानिक मन्त्रीजी इस प्रकार वर्णन करते हैं—"किसी वार्षिकोत्सवमें इतनी जन संख्या उपस्थित नहीं हुई और पण्डित (लेखराम) जीके व्याख्यानोंसे लोगोंके हृदयोंमें जो सहानुभूति आर्य्य-समाजके साथ उत्पन्न हुई है, उसका भी पहला ही अवसर है।.........पण्डितजीके व्याख्यानोंके पश्चात् यहां सन्ध्या पुस्तकोंकी बड़ी मांग हो रही है। जहां तक मेरा ख्याल है कोई भी आर्य्यसमाजका मेम्बर और धर्मात्मा हिन्दू न होगा जो अब भी दो घण्टे व्यय करके दो काल सन्ध्योपासना न करेगा।"

८ अगस्तको अमृतसर पहुंचकर आर्य्य-पथिकने "धर्मके मजबूत चट्टान" विषय पर व्याख्यान दिया और ९ अगस्त को "सत्यके स्रोत" विषय पर। यहां पर ही मुरादाबादकी तार के साथ प्रधान आर्य्य-प्रतिनिधिकी भी आज्ञा पहुंची कि मुरादाबादमें जाकर एक भाईको ईसाई मतके फन्देसे बचा लाइये। आर्य्य-पथिक विना किसी ननुनच के मुरादाबाद चल दिये। खन्ना (जिला लुधियाना) का श्रीराम सारस्वत ब्राह्मण ईसाई हो चुका था जिसको वैदिक-धर्मका अनुयायी बनाया और प्रायश्चित्त करनेके पश्चात् नगरकीर्तन करते हुए उसे आर्य-समाज मन्दिर मुरादाबादमें लाकर ५०० पुरुषोंकी उपस्थितिमें शुद्ध किया, और सब भाइयोंने श्रीरामके साथ खान-पानका व्यवहार आरम्भ कर दिया। उन दिनों सनातनधर्म सभामें आलाराम सागरके लोगोंको आर्य्यसमाजके विरुद्ध भड़का रहा था परन्तु ११ से १५ अगस्तके बीच प्रबल व्याख्यान देकर आर्य्यपथिकने हिन्दूमात्रको अपने साथ कर लिया और फिर अम्बालेका तार आने पर वहांको चल दिये। यहां पर ईसा-इयोंने कुछ शोर मचाया हुआ था जिसके मुकाबिलेमें पण्डित लेखरामजीके व्याख्यान बड़े प्रभावशाली हुए और सर्वसाधा-रणको ईसाई मतकी निर्बलताओंका परिज्ञान हुआ।

अम्बाला छावनीमें जिस कामके लिये आये थे उसे करके २३ अगस्तको शिमला आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मि-लित हुए। शिमलामें पण्डित लेखरामके तीन व्याख्यान हुए।

जिनमेंसे अन्तिम व्याख्यान टाउन हाल (Town Hall) में आर्य्यसमाजके नियमों पर हुआ। इस व्याख्यानसे प्रभावित होकर बहुतसे नये सज्जन आर्य्य-समाजके सभासद तथा सहायक बने।

शिमलेसे लौटते हुए पण्डित लेखरामको वर्षामें भी भीगते भीगते आना पड़ा और अम्बालामें भी बादल न खुले। वहां अभी कपड़े सुखानेका बन्दोबस्त करने ही लगे थे और एक व्याख्यान भी दे चुके थे कि मेरा तार पहुंचा और आर्य्य-पथिक सीधे जालन्धर पहुंच गये। तीसरे पहर रेलसे उतरते ही मेरे पास आये। मैंने उनको कष्ट देनेका कारण बतलाया। धर्मशाला पर्वतके आर्य्य-समाजका वार्षिकोत्सव था और उसी समय कालिजपार्टीने भी उत्सव मनाना निश्चित किया। जहां उधरसे बड़े बड़े प्रसिद्ध उपदेशक, लीडर और राय साहबान जानेवाले थे वहां हमारी ओरसे लाभचन्द्र भजनीकको लेकर अकेले पण्डित कृपारामजी पहुंचे हुए थे। उस स्थानमें पण्डित लेखरामको भेजनेका विचार था। २९ अगस्तको पण्डित लेखराम मेरे पास पहुंचे और धर्मशालामें ३१ अगस्तको नगर कीर्तन था; यदि दूसरे दिन प्रातःकाल ही चल देते तो धर्मशाला आर्य्यसमाजके सभासदोंके डांवाडोल हृदयोंको शांति मिल सकती थी।

मेरी सारी कहानी सुन कर पण्डित लेखराम बोले "यह देखिये! लगातार सफ़रमें सारे कपड़े मैले हो गये, कहीं

धुलोनेका समय नहीं मिला। फिर शिमलेसे आते हुए उन मैले कपड़ोंमेंसे एक भी सूखा नहीं बचा। मुझे परसोंसे ज्वर आता है और जुकाम साथ है। बतलाइये। मैं जानेकी अवस्थामें हूं?" मेरी आंखोंसे अश्रुधारा बहने लगीं और मैंने कहा—"पण्डितजी! आप अब आराम कीजिये, धर्मशालाका विचार छोड़ दीजिये। वहांका भुगतान हो जायगा।" इतना कहकर मैंने पण्डितजीको उनके निश्चित कमरेमें उतारा और कपड़े सुखानेके लिये अङ्गीठी जलवा दी, क्योंकि उन दिनों व्यापक झड़ी लगी हुई थी। पण्डित लेखरामको भोजन कराके मैं अपने काममें लग गया और फिर उस रात उन्हें न मिला।

दूसरे दिन प्रातः मुकद्मोंका प्रबन्ध करके मैं कचहरी जानेकी तय्यारी करने लगा था कि पंडित लेखराम कपड़ोंका बेग बाहर रख कर मेरे बरामदेमें पहुंचे और मुझे अन्दरसे बुलावाया। जब मैं बाहर पहुंचा तो क्या देखता हूं कि पाजामा, कोट पहिने पगड़ीका समला छोड़े कमरकी पेटी हाथमें लिये आर्य्यपथिक यात्राको तय्यार खड़े हैं। मुझे देखते ही बोले—"लालाजी! २०) रुपये मार्ग व्ययके लिये मंगा दीजिये और अपने दो नये कुर्ते भी। ऊपरी सफाईकी मुझे परवा नहीं लेकिन शरीरमें सटा हुआ तो शुद्ध वस्त्र ही होना चाहिये।"

मैं आर्यपथिककी ओर आश्चर्य्यसे देखने लगा और पूछा "क्या घरसे कोई तार आया है।" उत्तर मिला—"घरकी मुझे कम परवा है। वहीं धर्मशाला जाता हूं। क्या किया जाय।

जाना ही पड़ेगा।" मैंने बतलाया कि मध्याह्नोत्तरकी रेलमें मैं चला जाऊंगा वह कष्ट न उठावें। पण्डित लेखराम, प्रसिद्ध कटु भाषी पण्डित लेखराम, प्रेमसे सनी हुई वाणीमें बोले—"लालाजी ; आपका यहांसे हिलना बड़ा हानिकारक होगा। आपके ही बलसे तो हम सब काम करते हैं। यदि ऐसी छोटी बातोंके लिये आपको कष्ट दें तो हम किस मर्जकी दवा हैं। लीजिये ! जल्दी रुपया मंगाइये, रेलका समय समीप आ रहा है।"

इस दृश्यको स्मरण करके अब भी मेरी आंखोंमें आंसू भर आये हैं। आज आर्य्य-समाजकी अवस्था पुकार पुकार कर चिल्ला रही है—लेखराम ! हा ! धर्मवीर, कर्तव्य-परायण लेखराम !!"

रुपये अन्दरसे आये, पेटीकी बांसलीमें डाले गये और आर्य्य-पथिक घोड़ा-गाड़ीकी भी प्रतीक्षा न करके रेलवे स्टेशन की ओर चल दिये।

धर्म्मशालामें अकेले लेखरामने सचमुच सवा-लाखका काम किया। सनातनी ब्रह्मानन्द भारतीने नियोगकी आड़ लेकर आर्य्य-समाज और उसके प्रवर्तकको बहुत कुछ कोसा था। उसके मुकाबिलेमें महात्मा हंसराजजीने पहलेसे व्याख्यान दिये थे और नवीन वेदान्त मतका खण्डन भी किया था परन्तु भारतीका प्रभाव न मिटा। तब पण्डित लेखरामने भारतीजीको शास्त्रार्थका घोषणा-पत्र भेजा। शास्त्रार्थसे तो वह बच गया परन्तु पण्डित लेखरामने, विज्ञापन देकर, नवीन वेदान्त मत

खण्डन और वेदोक्त नियोगके मण्डन विषय पर २ सितम्बर की रातको बड़ा शक्तिशाली व्याख्यान दिया। इस व्याख्यान में स्वामी ब्रह्मानन्द भारती और महात्मा हंसराजजीके अतिरिक्त धर्मशालामें उपस्थित सब सज्जन विद्यमान देखे गये। पण्डित लेखराममें एक बड़ा गुण था कि वह विरोधाकी वक्तृताको स्वयं सुन आते थे। इस लिए उनके व्याख्यान टाले नहीं जा सकते थे। इस व्याख्यानने भारतीकी सारी लीलाको समाप्त कर दिया और जो कल्वर्ड महाशय पण्डित लेखरामको लठ्ठबाज और पेशावरी गुण्डा कह और लिख कर आर्य्य-पथिकसे घृणाका भाव प्रकट किया करते थे उन्होंने भी इस अपूर्व वक्तृता पर हर्ष प्रकट करके अपने विरोधी विचारोंका प्रायश्चित्त किया।

धर्मशालासे लौटते हुए पण्डित लेखरामने पठानकोट आर्य्य समाज मन्दिरमें "ईसाईमत खण्डन" पर एक व्याख्यान दिया जिसकी वहां आवश्यकता बतलाई जाती थी और वहांसे "वेद-प्रचार निधि"के लिए धन भी एकत्र करलाये।

इसके पश्चात् भी कुछ थोड़ा ही काम ऋषि-जीवन सम्बन्ध कर पाये होंगे क्योंकि हम उन्हें गुजरातादि आर्य्य-समाजोंमें भ्रमण करते हुए देखते हैं। फिर मान्टगुमरीमें प्रचार करके अक्टूबर मासमें ऐबटाबादमें प्रचार करनेके अतिरिक्त रावलपिण्डी और अमृतसर आर्य्य-समाजोंके जलसोंमें उनका सम्मिलित होना पाया जाता है।

अमृतसर आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवसे निवृत्त होकर पण्डित लेखरामने लाहौरमें तीन व्याख्यान दिये, जिनमें "ब्राह्मसमाजके इतिहास" पर दृष्टि डालते हुए जो व्याख्यान हुआ वह बड़ा ही आन्दोलन पूर्ण था। लाहौरसे चल कर ३ नवम्बरको मुलतान पहुंचे जहां ५ नवम्बर तक तीन व्याख्यान दिये। ६ नवम्बरको आराम करके ७ को डेरागाजीखां पहुंचे जहां उन्होंने उसी सायंकालके समय "धर्मकी आवश्यकता" पर व्याख्यान दिया। फिर १० नवम्बर तक तीन और व्याख्यान देकर ११ नवम्बरको मुजफ्फरगढ़ पहुंचे। वहां दो व्याख्यान दे और करोड़ आर्य्य-समाजमें प्रचार करके लाहौर लौट गये।

जीवनचरित्रका थोड़ा ही काम कर सके थे कि लाहौर आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें भाग लेना पड़ा। नगरकीर्तनके समय नगर-प्रचारके अतिरिक्त १ दिसम्बर १८९५ को वार्षिकोत्सवका अन्तिम व्याख्यान दिया जिसमें सबसे अधिक जन संख्या थी। व्याख्यान पर श्रोता-गण इतने मोहित हुए कि समय समाप्त होनेके एक घण्टा पीछे तक बराबर जम कर बैठे रहे।

इन्हीं दिनों आर्य्यपथिकका सबसे बड़ा ग्रन्थ "पुनर्जन्म" विषयपर छप कर तय्यार हो गया और आर्य्य-जनता मात्रने उसका बड़े आदरसे सत्कार किया।

लाहौरके उत्सवके पश्चात् फिर जीवन-चरित्रका कार्य्य

आरम्भ किया था कि आर्य्य-पथिकके लिये पुनः मांग आने लगी। ८ दिसम्बरको उनका व्याख्यान लुधियाना नगरमें हुआ। १० को माछीवाड़ा ग्राममें धर्मप्रचार करके १२ दिसम्बर, १८९५ को रोपड़ पहुंचे जहां १३ तक दो व्याख्यान दिये। मूर्त्ति-पूजा विषय पर पौराणिक पण्डितोंके यहां शास्त्रार्थ भी हुआ।

कहां रोपड़ और कहां शरकपुर! दोनों रेलवे लाइनसे दूर—परन्तु हम १५ और १६ दिसम्बरको शरकपुर (जिला लाहौर) में व्याख्यान देते देखते हैं।

इस वर्षका दौरा भी गत वर्षानुसार जालन्धर आर्य्यसमाज-के वार्षिकोत्सव पर ही समाप्त हुआ, और वहांसे ही आर्य्य-पथिकने नये वर्षका कार्य्य आरम्भ किया।

जनवरी, १८९६ के आरम्भमें ही पटियाला राजमें पहुंच-कर पांच व्याख्यान दिये। वहांसे लाहौर लौट कर जीवन चरित्रमें कुछ त्रुटि देख ११ जनवरी १८९६ को फिर मुलतानमें ऋषि जीवन सम्बन्धी आन्दोलनके लिये गये। १९, जनवरी से तीन फरवरी तक वहां रहे, इस अन्तरमें वहां सात व्याख्यान भी दिये। ४ फरवरीको लाहौर लौटकर फिर जीवन चरित्रका काम होने लगा, परन्तु स्थानीय प्रचार भी साथ साथ चलता रहा। ९ फरवरीको मियां मीरमें और १० तथा ११ फरवरीको अमृतसरमें व्याख्यान दिये। वहांसे चलकर १४ से २४ फर-वरी तक डेरा-इस्माइलखां आर्य्यसमाजमें रहे जहां उदासी

साधु बालकने शोर मचा रखा था। यहां बड़ी धूमके व्याख्यान हुए। लौटते हुए २५, २६ फरवरीको मुजफ्फरगढ़में व्याख्यान दिये और २७ फरवरीके दिन डेरा गाजीखां पहुंच गये। वहां एक पादरीसे शास्त्रार्थ करके नगर कीर्तन कराया जिसमें स्वयं थोड़ी २ दूरी पर व्याख्यान देते रहे और २८ फरवरीको फिर ७०० की जनोपस्थितिमें आर्य्यसमाजके नियमोंपर व्याख्यान दिया जिसकी समाप्ति पर १३ नये सभासद बने।

इसके पश्चात् लाहौर लौटकर जीवन चरित्रकी छपाईके साथ साथ स्थानीय प्रचार भी करते रहे। फिर १५ मार्चको करनाल पहुंचे जहां नगर कीर्तनमें नगर प्रचार करनेके अतिरिक्त दो अत्युत्तम व्याख्यान दिये। वहांसे १८ मार्च, १८९६ को चल कर १९ को दिल्लीमें "वैदिक-धर्मकी श्रेष्ठता"पर व्याख्यान दिया। और वहांसे सीधे अजमेर पहुंचकर वहांके आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए। वार्षिकोत्सवकी कार्यवाहीमें तो पण्डित लेखरामके दो बलयुक्त व्याख्यान हुए ही परन्तु नगर कीर्तनमें एक ऐसी घटना हुई जिसे अजमेर आर्य्य-समाजके वृद्ध सभासद् अभीतक नहीं भूले हैं।

आर्य्य-पथिक भजन मण्डलीके साथ झूमते हुए जा रहे थे, और बीचमें कहीं कहीं व्याख्यान भी देते जाते थे। मार्गमें कुछ मुसलमान भाइयोंसे बातचीत होने लगी। पण्डित लेख-रामके उत्तर सुन कर कुछ मुसलमान भड़क उठे। "ख्वाजा चिश्ती"की दर्गाह पास थी, इस लिये आर्य्यसमाजी डर कर

भाग गये। अकेला लेखराम न यार न मदद गार। परन्तु क्या लेखरामने अपना धर्म प्रचारका काम बन्द कर दिया? नहीं। कहीं सुना था कि विधर्मीके धर्म-मन्दिरसे ३० कदमकी दूरी पर प्रत्येक धर्म-प्रचारकको अपने मतके समर्थन करनेका अधिकार है। आप दर्गाहके द्वार पर पहुंचे। मुसलमान आश्चर्यसे इनकी क्रियाको देख रहे थे। लेखरामने दर्गाहके द्वारसे उच्च स्वरमें कदम गिनने आरम्भ किये और तीसवें कदम (पग) पर पहुंच, एक छोटे पुल पर खड़े होकर धर्म-प्रचार शुरू कर दिया। "कब्रपरस्ती" और "मर्दुमपरस्ती" इत्यादिका जबरदस्त खन्डन होने लगा। मुल्लाओंने बहुतेरा भड़काया परन्तु मुसलमान सर्व-साधारण जनताने (जो एक सहस्रकी संख्यामें एकत्र हो गई थी) वह दानियत (एक ब्रह्मवाद) की एक एक चोट पर वक्ताके साथ सहानुभूति प्रकट की। उस समय तक आर्य्य-समाजियोंको भी होश आ चुका था। चुपके से दो चार देखने गये कि लेखराम पर कैसी बीती, क्या मारा गया वा कहीं भाग कर बच गया। किन्तु उनके आश्चर्यकी सीमा न रही जब उन्होंने प्रचारकके व्याख्यानका प्रभाव अपनी आंखोंसे देखा और मुसलमान जन साधारणको वक्ताके वशी-भूत पाया!

अजमेरसे लौट कर पण्डित लेखरामने एक सप्ताह ही जीवन चरित्रका काम किया होगा कि मुस्तफाबाद (जिला अम्बाला) के उत्सवके लिये उनकी मांग आई। १०, ११, १२ अप्रैल,

उस उत्सवमें सम्मिलित रहे जिसमें साधारण व्याख्यानोंके अतिरिक्त दो हिन्दुओंको मुसलमान होनेसे बचाया। इसके पश्चात् २४ से २६ अप्रैल तक हम पण्डित लेखरामको दीनानगर आर्य्य समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित पाते हैं। ७ जून, १८६६ को जालन्धर आर्य्यसमाजमें "आर्य्यों के जातीय त्यौहार" विषय पर व्याख्यान देना छपा है।

ऐसा मालूम होता है कि इन दिनों विशेष प्रकारसे फिर पण्डित लेखराम जालन्धरमें स्थित हो गये थे, और अपनी धर्म-पत्नी तथा बच्चे सहित (जिसका नाम सुखदेव रखा था) महल्ला "कोट कृष्णचन्द्र" में किरायेके मकानमें निवास करते थे।



बारहवां अध्याय

जालन्धरमें गृहस्थ जीवन

और

आदर्श ब्राह्मण गृह



जालन्धरमें ही पण्डित लेखरामने वास्तविक गृहस्थाश्रमका आरम्भ किया, इसी स्थान पर देवी लक्ष्मीजीकी गोद हरी हुई और अन्तको इसी भूमिमें पण्डित लेखरामको अपने इकलौते पुत्रका अन्त्येष्टि संस्कार करना पड़ा, इसलिये उनके गृहस्थ जीवनका पूरा वृत्तान्त इसी स्थानमें देना आवश्यक प्रतीत होता है।

पण्डित लेखरामजीका मेरे साथ विशेष प्रेम था, इसके बतलानेकी कोई आवश्यकता नहीं, फिर भी वह उस समय सारे आर्य्यजगत्‌को एक परिवार समझने लग गये थे और इसलिये उनका किसी स्थान विशेषसे प्रेम नहीं रह सकता था। परन्तु पण्डित लेखरामजीकी धर्मपत्नी; श्रीमती लक्ष्मी देवीजी उस उच्च आदर्शको ग्रहण नहीं कर सकी थीं। उनका मन केवल जालन्धर निवासिनी आर्य्या स्त्रियोंसे ही मिला हुआ था। लाहौरमें

वह जब तक वहां अपने आपको परदेसमें समझती रहीं और इस लिये वहांसे घर चली गई थीं।

जब पुत्र उत्पन्न हो चुका, उसके पश्चात् स्वभावतः उन्हें भरी गोद लेकर उसी जालन्धर नगरमें लौटनेका उत्साह हुआ जहांसे वह गोद हरी लेकर गई थीं। इसी अन्तरमें पण्डित लेखरामका लाहौरमें रखना भी कुछ अनावश्यक ही प्रतीत हुआ क्योंकि जीवन-चरित्रकी तय्यारीमें उनको मुझसे अधिक सहायता मिल सकती थी। तब यही ठीक समझा गया कि उन्हें लाहौरसे जालन्धर आनेकी आज्ञा दी जावे।

इन्हीं दिनों पण्डित लेखरामजीके पिताका देहान्त हो गया, और इस लिये १९ से २८ मई, १८९६ तककी छुट्टी लेकर वह अपने निवास-स्थान कहूटाको चले गये और वहांसे अपनी धर्म-पत्नी और पुत्रको साथ लेकर जालन्धर आ गये।

पण्डित लेखरामको मैं एक सच्चा ब्राह्मण मानता हूं और उनके गृहको आदर्श ब्राह्मण गृह समझता था क्योंकि वह त्यागका जीवन व्यतीत करते थे। चिरकाल तक उन्हें २५) मासिक वेतन ही मिलता रहा और उसीमें वह अपना निर्वाह करते रहे। फिर जब उनका विवाह हो गया तो सभाने स्वयं उनको ३०) मासिक देना आरम्भ कर दिया ; आर्य्य-पथिकने वेतन वृद्धिके लिये कोई प्रार्थना पत्र नहीं दिया था। फिर जब पण्डित लेखरामके घर पुत्र उत्पन्न हुआ और मुझे मालूम हुआ कि उन्होंने "हिन्दू परस्पर-सहायक-भण्डार"में सम्मि-

लित होनेके अतिरिक्त १७ जून १८९५ से "सन् लाइफ इन्श्यु-रेन्स कम्पनी"में अपने जीवनका बीमा करा लिया, तब मैंने सभाका ध्यान इस ओर आकर्षित करके उनका वेतन ३५) मासिक करा दिया था। शायद यह समझा जावे कि पण्डित लेखरामको अपनी रची हुई पुस्तकोंकी बिक्रीसे अधिक आमदनी होती होगी, परन्तु उनकी मृत्युके पश्चात् उनकी पुस्तकोंका सारा हिसाब पड़ताल करनेसे मुझे ज्ञात हुआ कि जब तक आर्य्यपथिककी पुस्तकोंका सारा प्रबन्ध सद्धर्म-प्रचारक यन्त्रालयके अधीन (शायद सन् १८९५ में) नहीं हो गया था तब तक उन्हें पुस्तकोंसे एक कौड़ीका भी लाभ नहीं होता रहा। पण्डित लेखरामके पीछे कइयोंने "आर्य्य-मुसाफिर" नाम धराये, और उसके सहारे सहस्रों रुपये कमाये; परन्तु आर्य्य-पथिकने धन जमा करना अपना उद्देश्य रक्खा ही न था और यदि वह अपने जीवनका बीमा न करा जाते तो देवी लक्ष्मीके पास अपने निर्वाहके लिये शायद थोड़ेसे आभूषणोंके अतिरिक्त कुछ भी न बचता। और वह बीमेका आया हुआ धन क्या लक्ष्मी देवीने वर्ता? सच्चे ब्राह्मण लेखरामने अपनी धर्म-पत्नीको भी ब्राह्मणी ही बनाया था और उन्होंने बीमाका पूर्ण २०००) रुपया गुरुकुल-कोषमें जमा कराके सदाके लिये आर्य्य-पथिकके स्मारकमें एक विद्यार्थी पढ़नेकी बुनियाद रख दी। मुझे आशा है कि सच्चे ब्राह्मण-कुलके पवित्र दानसे पढ़े हुए ब्रह्मचारी भी त्यागी और सच्चे ब्राह्मण ही निकलेंगे।

पण्डित लेखराम प्राचीन ब्राह्मणोंकी तरह त्याग मूर्त्ति तो थे, परन्तु इससे यह न समझना चाहिये कि मध्य कालीन चरसिया वैराग्यके वह दास थे। नहीं, प्रत्युत गृहस्थ जीवनका आदर्श भोगनेकी उनके कर्मों में सदा, चेष्टा दिखाई देती है। थोड़े से धनसे ही पुत्रके पालन और गृहस्थकी रक्षाका बड़ा उत्तम प्रबन्ध किया करते थे। सुखदेवको गोदमें लेकर खिलाते देख कोई विचारशील पुरुष नहीं कह सकता था कि सच्चे प्रेमका उनमें अभाव है। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य वैरागी आर्य्यों की तरह वह अपने परिवारसे भी उदासीन न रहते थे। परन्तु परिवारके प्रेममें फंसकर अपने सिद्धान्तोंसे गिर कर आत्म-घाती कभी नहीं बनते थे। इसके प्रमाणमें आर्य्यपथिकका जालन्धरसे २४ जून, १८६६ को अपने चचाके नाम लिखा हुआ पत्र काफी है। इस पत्रमें पण्डित लेखराम लिखते हैं—"पिताजीके देहान्तका समाचार घरवालोंने मुझे नहीं भेजा था। आपके पत्रसे ही हमको पहले पहल सूचना मिली। मैं ११ वा १२ दिन घर रहकर लौट आया और लाला साहब (पिताजी-से तात्पर्य) तथा तोताराम—दोनोंके मृतक शरीरोंकी भस्म भी साथ लाया, जो मार्गमें शास्त्रकी आज्ञानुसार जेहलम नदीमें प्रवाह कर दी। मैं अब यहां चार महीने रहूंगा। एक मकान २) मासिक किरायेपर लिया हुआ है। स्वामीजीका जीवन-चरित्र यहां साफ करके, फिर छपवाया जावेगा। जब तक यह न छप जाय तब तक यहां ही रहूंगा.................घरमें (अर्थात

कहूटेमें) अब कोई आदमी नहीं है। सय्यदपुरके मकानका तो अब फैसला ही हो गया, कहूटेके लोगोंसे आप परिचित ही हैं; बतलाइये अब मकान कहां बनाऊं। आपने तो रावलपिण्डी-में बना लिया, और आप आयु भर वहीं रहेंगे···· कोई फूल और कोई कहूटेकी सलाह देता है। आर्य्य-सामाजिक भाई प्रत्येक अपने अपने शहरमें सम्मति देते हैं। मैं चाहता था कि यदि ऐसा स्थान होता जहां आप भी समीप होते तो उचित था। मुझे यद्यपि अब सारा जगत् ही कुटुम्बवत् दिखाई देता है और अपने सम्बन्धियोंके साथ भी जन-साधारणसे बढ़कर प्रेम नहीं रहा तथापि रक्तका सम्बन्ध भी कुछ प्रभाव रखता है। आप जो सम्मति उचित समझें अवश्य लिखें··········
चिरंजीव सुखदेवके दांत निकल रहे हैं; छः निकल चुके हैं, इसलिये कभी दस्त आ जाते हैं—वैसे वह स्वस्थ है, और उस-का माता भी स्वस्थ है।" इस सम्बन्धमें पण्डित लेखरामकी दिन-चर्य्याका समय विभाग, जो उन्होंने अप्रैल १८९६ ई० की समाप्ति पर लिखा था, बड़ा प्रकाश डालता है :—

(१) "चार घड़ी अर्थात् सवा घण्टा रात रहे उठ कर शौचके लिये जङ्गलमें जाना फिर दन्त धावन और स्नान तथा सन्ध्या; और अग्नि-होत्र सूर्य्यके उदय होने पर। अग्निहोत्र लक्ष्मीजी (आर्य्य-पथिककी धर्म्म-पत्नीजी) कर लिया करें और कभी कभी मैं स्वयं भी कर लिया करूंगा।

प्रत्येक दिन व्यायाम करना, ठीक ४० डण्ड।

(२) वेद पाठ एक घन्टा ; कुरान, तोरेत, इन्जीलका स्वाध्याय एक घण्टा वा अन्य मतों सम्बन्धी पुस्तकादि । ग्रन्थ निर्माणका कार्य्य ११ बजे तक ।

(३) ११ बजेसे २ बजे तक—भोजन, विश्राम गृहस्थके कार्य्यादि और प्यारी लक्ष्मीको पढ़ाना ।

(४) ३ से ५ बजे तक पुस्तकावलोकन तथा लेख, विशेषतः ऐतिहासिक विद्या सम्बन्धी ।

(५) मलत्याग, शौच, सन्ध्या, भ्रमण, व्याख्यान अर्थात् लोगोंको सद्धर्म्मका उपदेश देना । अग्निहोत्र, भोजन, घरका प्रबन्ध—६ से ९ बजे तक ।

(६) अपने संशोधनके सम्बन्धमें विचार । सोनेसे पहले मुंह हाथ पांव धोकर कुल्ला करना और परमेश्वरका ध्यान करना । रातके दस बजे सोना ; पूरे छः घण्टे सोना, कम बिल्कुल नहीं । एक चारपाई पर न सोना चाहिये; ऋतुगामी न होना चाहिये ।

(७) मल त्यागके लिये अधिक समय न बैठना चाहिये, इससे बवासीर हो जाती है ।

(८) खाना जहांतक हो सके चबा कर खाना, ३२ बार यदि प्रत्येक ग्रास चबाया जावे तो कोई बीमारी नहीं होती । खानेके पश्चात् तत्काल ही लघु शङ्काके लिये बैठना चाहिये क्योंकि इससे मसानेकी बीमारी नहीं होती ।

(९) प्रातःकाल उठकर पहले अनुमान आध पावके

बासी पानी नाक पकड़कर पीना, जिससे अजीर्ण कभी नहीं होता।

(१०) पाजामेके अन्दर लङ्गोट रखना चाहिये और लंगोट समेत नहाना चाहिये। लघुशङ्काके पश्चात् पानी वा मट्टीसे शुद्धि करनी चाहिये, जिससे शरीर अपवित्र न हो। व्यर्थ क्रोध न करना चाहिये, कटु वचन तथा झूठसे अलग रहना और "दीन-ए-इस्लाम" की विषयुक्त शिक्षाके बुरे प्रभावको दूर करनेका प्रयत्न; और इसी प्रकार दूसरे मतोंका भी; और वैदिक-धर्मका प्रचार। ईश्वर! मेरी इस इच्छाको आप पूर्ण कर दो।"

जालन्धरमें गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए भी जहां ऋषि जीवन-चरित्रकी तय्यारीका काम जारी था वहां स्थानीय प्रचार-के अतिरिक्त बाहर धर्मोपदेशोंके लिये जाना भी बन्द नहीं हुआ था। २९ से ३१ मई, १८९६ तक रोपड़ आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होकर अपने व्याख्यानोंसे सोये हुए कायर हिन्दुओंको वीर आर्य्य बननेकी प्रेरणा करते रहे। द्वारिकामठके शङ्कर स्वामी इसी वर्षकी ग्रीष्म ऋतुमें जालन्धर पधारे थे। उनके मुकाबिलेमें जो बड़े बड़े आर्य्य विद्वानोंके व्याख्यान हुए उनमेंसे पण्डित लेखरामका व्याख्यान बहुत ही हलचल मचाने वाला था। इन्हीं दिनों पण्डित लेखरामने कर्त्तारपुर (जिला जालन्धर) में आर्य्य-धर्मकी रक्षाके लिये दो बार जाकर धर्मोपदेश दिये और ऐसी जबरदस्त धार्मिक

हलचल मचाई कि वहां एक प्रबल आर्य्यसमाज स्थापित हो गया।

यह पहले लिखा जा चुका है कि विवाहके दिनसे ही पं० लेखरामजीने अपनी धर्म्म-पत्नीको पढ़ाना आरम्भ कर दिया था। जिस प्रकार अन्य विषयोंमें उनके उपदेश क्रियात्मक होते थे उसी प्रकार स्त्री शिक्षाका प्रचार भी जीवन द्वारा करते थे। जालन्धरमें रहते हुए लक्ष्मी देवीजीको स्त्री-समाजके अधिवेशन और अन्य सब धार्मिक उत्सवोंमें भी, सम्मिलित होने के लिये भेजते रहे। जिस प्रकार स्वयं सच्चे ब्राह्मण बने हुए पुरुष जातिके उद्धारके लिये काम करते थे, उसी प्रकार लक्ष्मी देवीजीको स्त्री जातिकी सेवाके लिये तय्यार करना चाहते थे। मुझसे धर्म वीरने देशान्तर प्रचारके लिये गोष्ठी करते हुए अपने जीवनका सारा समय विभाग कई वार बतलाया था। इस समय विभागमें प्रायः लक्ष्मी देवीका मुख्य भाग होता था। यदि वानप्रस्थका विचार आता तो उसमें भी लक्ष्मी देवीका ज़िक्र आता। धर्मवीर लेखराम लक्ष्मी देवीको क्या बनाना चाहते थे, वह उस समय विभागसे पता लगता है जो मैं ऊपर उद्धृत कर चुका हूं। लक्ष्मी देवीमें विनय और लज्जाका भाव बहुत ही विचित्र था; जिन दो देवियोंसे उनका हृदय मिला हुआ था, उनके सिवाय बहुत कम स्त्रियोंसे भी खुलकर बात करतीं। पण्डित लेखरामजी चाहते थे कि उनकी धर्म पत्नी धर्म प्रचार विषयक योजनामें उनसे सहायता लेकर

अपनी बहिनोंको वैदिक-धर्मकी ओर प्रेरित करें। उन्होंने लक्ष्मी देवीका हौसला बढ़ानेके लिये मुझसे साधन पूछे। मैंने सम्मति दी कि श्रीमती लक्ष्मी देवीजीको अपने साथ आर्य्य-समाजोंके वार्षिकोत्सवोंपर ले जाया करें। पंडित लेखरामने उसी पर अमल करना शुरू कर दिया। अम्बाला और मथुरा आर्य्य-समाजोंके वार्षिकोत्सवोंपर देवीजीको अपने साथ ले गये जहांसे उनका पुत्र बीमार होकर लौटा। मथुरा आर्य-समाजका वार्षिकोत्सव १६, १७ अगस्त, १८९६ को था। बीमार पुत्रको वहांसे जालन्धर छोड़कर पंडित लेखराम शिमला आर्य्यसमाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित हुए। वहां से जब २६ अगस्तको जालन्धर लौटे तो प्यारे सुखदेवकी बीमारी बढ़ी हुई देखी। हम सबने चिकित्सा तथा निदान करानेमें कुछ उठा नहीं रखा, परन्तु हम सबके देखते देखते पंडित लेखरामका प्यारा पुत्र २८ अगस्त, १८९६ के दिन सवा वर्षकी आयुमें, इस भौतिक शरीरको त्याग कर स्वर्गलोक का पथगामी बना। उस समय पं० लेखरामकी सहन शक्तिका मैंने चमत्कार हो देखा था। किसी प्रकारके भी शोकको समीप नहीं आने देते थे।

परन्तु बच्चेकी दुखिया माताके हृदय पर बड़ा भारी वज्रपात दिखाई देता था। जिस जालन्धरकी भूमिमें पुत्ररूपी रत्न प्राप्त किया था उसी भूमि पर उसकी राख करके फिर कोमल हृदय भारतरमणीसे कब वहां निवास किया जा सकता

था। धर्मपत्नीको लेकर पं० लेखराम घर पहुंचाने चले गये और दो दिनोंके पश्चात् पूर्ववत् ही धर्मप्रचारमें सन्नद्ध हो गये।



तेरहवां अध्याय

भ्रमण और प्रचार



जुलाईके आरम्भमें पसरूर (जिला सियालकोट) से पण्डित लेखरामके लिये मांग आई। आ० प्र० सभाके एक प्रचारकने महम्मदी जगत्को हिला दिया था। इस पर तीन महम्मदी प्रचारक बुलाये गये जिनसे शास्त्रार्थकी छेड़ छाड़ शुरू हुई, तब पण्डित लेखरामके लिये तार पहुंचा। १८ जुलाई, १८९६ को आर्य्य-पथिक जालन्धरसे चले और १९ को सायंकाल-पसरूरमें पहुंच गये। उसी समय बड़ा भारी नगरकीर्तन हुआ। २० जुलाईको पहला व्याख्यान "वैदिकधर्म्मकी श्रेष्ठता पर हुआ जिसमें ८०० हिन्दुओंके साथ २०० मुसलमान भी उपस्थित थे। व्याख्यानकी समाप्ति पर पसरूरमें उपस्थित पांच मौलवियोंको प्रश्न करनेका अवसर दिया गया परन्तु सिवाय एक मौलवीके और कोई न उठा और उसने भी केवल आर्य्य-पथिककी बातोंको दोहरा दिया। दूसरे व्याख्यानका विषय था "सच्चाईका मजबूत चट्टान" मौलवी लोगोंने पत्र-व्यवहारमें ही समय समाप्त किया और पण्डित लेखराम दो और व्याख्यान देकर जालन्धर लौट आये।

पसरूरके सम्बन्धमें एक घटना लाला गणेशदास सियाल-कोटीने लिखी है जो धर्मवीर लेखरामके निडर आत्माकी साक्षी है। तीसरे दिन पण्डित लेखराम व्याख्यानके लिये अभी खड़े होनेकी ही तय्यारी कर रहे थे कि एक बड़े प्रसिद्ध म्यूनि-सिपल-कमिश्नर आये और महाशय मथुरादास प्रचारकके पास बैठ कर कुछ कानाफूसी करने लगे। आर्य्य-पथिकने कहा—"घुसपुस क्या करते हो, क्या बात है?" प्रचारक मथुरादास जीने कहा कि यह महाशय थानेदार साहबका सन्देसा लाये हैं कि यदि बलवा हो गया तो पुलिस जिम्मेदार न होगी। आर्य्य पथिककी आंखें लाल हो गई और कड़क कर बोले—"क्या हम युद्ध करने आये हैं? हम तो धर्मोपदेशके लिये आये हैं सो जबतक चाहेंगे स्वतन्त्रतासे करेंगे। जिसका जी चाहे सुने, जिसका जी न चाहे न सुने। अगर यों ही बलवा हो तो पड़ा हो। हम देखेंगे कौन बलवा करता है। हम थानेदार साहब वा और किसी साहबकी रक्षाकी परवाह नहीं करते।"

जब व्याख्यानके लिये खड़े हुए तो देखा कि टाउन पुलिसके कुछ चौकीदार हाथ भरका लम्बा डन्डा लिये खड़े हैं। उनकी ओर देख कर अटक अटक कर कड़कते हुए बोले—"ओ काली पगड़ी वालो! अगर व्याख्यान सुनना है तो अपनी खुशीसे ठहरो नहीं तो तुम्हारी रक्षाकी हमें परवाह नहीं है; अभी चले जाओ। मैं देखूंगा कि कौन मुझे काट जाता है।"

फ़सरूरसे निवृत्त होकर परिडत लेखराम शिमला आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होनेके लिये चले गये। वहां पहलेसे मिर्जा गुलाम अहमदके चेले ख़्वाजा कमालुद्दीनने अपने मिशनका काम जारी कर रक्खा था। परिडत लेखराम ख़्वाजा साहेबके व्याख्यानोंको सुनने जाते रहे और फिर आर्य्य-मन्दिरमें तीन बड़े जबरदस्त व्याख्यान दिये। महम्मदियोंकी निमाज़के मुकाबिलेमें आर्योंकी सन्ध्या की श्रेष्ठता जतलाई और वैदिक-धर्मके सौन्दर्य्यको भली प्रकार प्रकाशित किया। मुसलमान तो परिडत लेखरामके आक्रमणोंसे मुद्दतसे तङ्ग आये हुये थे, परन्तु उन दिनों आर्य्य-पथिकने एक नई पुस्तक

'हुज्जतुल इसलाम'

का नोटिस दे रक्खा था। मुसलमान सुन चुके थे कि परिडत लेखराम इस पुस्तकमें महम्मदी मतके विरुद्ध अपना सारा जोर लगायेंगे। इससे पहले मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी, आर्य्य-पथिककी अकाट्य युक्तियोंसे तङ्ग आकर, जवाब देनेकी ताब न रखते हुए उन्हें मौतकी धमकी दे चुका था और लिख चुका था।

"इला-ए-दुश्मन् ना अन व बेरा,
बतर्स अज़ तेग़ बरां मुहस।"

कि महम्मदी तलवारसे डरे और इसलामके विरुद्ध लिखना छोड़ दे। इन सब अवस्थाओंके होते हुए जब मिर्जा कादियानीके चेलेने हिन्दुओंके अन्ध विश्वासोंको आर्य्य-समाज पर

मढ़ना शुरू किया तो अपने अन्तिम व्याख्यानमें पण्डित लेख-रामने यह सिद्ध करनेके लिये प्रमाण दिये कि इसलामके पैग-म्बरोंने खुदाईका दावा करके कुफ़ फैलाया है। जो प्रमाण आर्य्य-पथिकने उस समय दिये थे वे सब "हुज्जतुल इसलाम" में पीछे छप गये हैं। सारा सभामण्डप मनुष्योंसे भरा हुआ था, जिनमें आधे मुसलमान थे। जब पण्डित लेखरामने अन्योंके प्रमाण देते देते एक आयत पढ़ी जिसका अर्थ था— "मैं खुदा के नूरसे हूं।" और इस पर एक कविका बचन पढ़ा—

"ब ज़ाहिर नूर अन्दरसे जोआहे,
शमाए नूर बे कफ़ खोआहे।"

जिसका तात्पर्य यह है कि यद्यपि महम्मद ब्रह्मके प्रकाशसे जुदा प्रतीत होता है परन्तु वह है वही ब्रह्म। मुसलमानोंकी जमातमेंसे एक युवक मण्डलसे रहा न गया और उनमेंसे एक युवक बी० ए० ने चीख कर कहा—"काफिरोंको काटनेवाली महम्मदी शमशीरको मत भूल" पण्डित लेखराम एक पलके लिये रुक गये; फिर जिधरसे शब्द सुने थे उधर आंखें घुमा कर सिंहनाद गुंजा दिया—"मुझे बुजदिल महम्मदी तलवार की धमकी देता है। मैंने अधर्मी निर्बल मनुष्योंसे डरना नहीं सीखा। जानते नहीं हो मैं जान हथेली पर लिये फिरता हूं।"

सारे हालमें सन्नाटा छा गया और व्याख्यानके अन्ततक फिर किसीने चूं न की। जैसा कि मैं पहले बतला चुका हूं शिमलासे पण्डित लेखराम सीधे जालन्धर गये थे जहां अपने एकलौते पुत्रका उन्हें अन्त्येष्टि संस्कार करना पड़ा। जालन्धर से परिवारको घर छोड़ कर पण्डित लेखराम सीधे वजीराबाद के वार्षिकोत्सवमें सितम्बर, १८९६ के आरम्भमें ही पहुंच गये इसके विषयमें श्रीनारायण कृष्णजी प्रधान आर्य्य-समाज गुजरांवालाने लिखा है—

"आर्य्य-पथिक सब बातोंपर आर्य्य-समाजके कामको तर्जीह दिया करते थे। हम लोगोंको याद है कि एक बार जब हम लोग वजीराबादके उत्सव पर गये हुए थे तो वहां हमको समाचार मिला कि पण्डित लेखरामका एकलौता बेटा संसारसे चल बसा है। वजीराबादमें पहले उनके आनेकी खबर बड़ी गर्म थी परन्तु इस शोक-जनक समाचारको सुन कर समझा गया कि अब पण्डितजी नहीं आ सकेंगे। परन्तु बहुत थोड़ी देरके पश्चात् आश्चर्य्यसे देखा कि वह अपने घरसे सीधे उत्सवमें आ पहुंचे और ऐसी शोक-जनक घटनाके होते हुए भी अपने धार्मिक कर्तव्यको बड़ी गम्भीरतासे पालन करते रहे।"

वजीराबादके इस वार्षिकोत्सवमें मैं भी सम्मिलित था। पहले दिन पण्डित लेखरामजी का व्याख्यान प्रातःकालके समय विभागमें छपा हुआ था, परन्तु राजा सर अताउल्ला और उनके परिवारके सम्मिलित होनेके कारण उस समय मुझे

खड़ा किया गया। न जाने मुसलमान भाई पण्डित लेखराम से क्या आशा रखते थे कि मेरे व्याख्यानको सुन कर विस्मित हो गये। उनकी समझमें न आया कि आर्य्य-मुसाफिर क्यों ऐसा जन-प्रिय तथा शान्ति-वर्धक व्याख्यान देता है। मेरा बिषय ईश्वर-प्राप्ति था और मैंने उसमें महम्मदी बुत और पीर परस्तीकी भी खबर ली थी; इस लिये श्रोता-गणको निश्चय हो गया कि पण्डित लेखराम ही बोल रहे हैं।

सायंकालके व्याख्यानमें मेरा नाम था, इस लिये उस समय कादियानी मिर्ज़ा गुलाम अहमदके चेले हकीम नूर उद्दीन भी तशरीफ लाये। मुसलमानोंकी भी पर्याप्त उपस्थिति थी जब पण्डित लेखराम व्याख्यानके लिये खड़े हुए। उस व्याख्यान में पण्डित लेखरामने ईश्वरका स्वरूप ऐसा खींचा कि मुसलमानोंके सिर हिलने लग गये। फिर जब झूठे पैगम्बरोंकी पोल खोलनी शुरू की तो जहां मुसलमान सर्व साधारण करतालिका ध्वनीसे सभा मण्डपको गुंजाने लगे वहां मौलवी नूरउद्दीन बहुत खिज रहे थे, परन्तु उस समय क्या हो सकता था। आर्य-पथिकके व्याख्यानकी नगरमें धूम मच गई।

सायंकाल हम सब पलकूके किनारे किनारे स्रोतकी ओर दूर निकल गये और सन्ध्या-वन्दनसे निवृत्त होकर रातको लौट रहे थे कि नगरसे बाहर एक मस्जिदके खुले मैदानमें मौलवी नूरुद्दीन अपना धर्म-प्रचार कर रहे थे। रात अन्धेरी थी, हम सब सुनने खड़े हो गये। मौलवी साहब बोले—"अरे

बेवकूफो! तुम सब बकरोंकी तरह दाढ़ी हिला रहे थे और यह न समझे कि तुम्हारे ईमान पर कुल्हाड़ा चला रहा है।" इतना ही सुनकर मैंने पण्डित लेखरामजीको उनकी कृत कार्यता पर बधाई दी और हम सब भोजनशालाको चल दिये।

मुझे यह भी याद पड़ता है कि दूसरे दिन बाजारमें आर्य्य-पथिककी कुछ मुसलमानोंसे बातचीत होने लगी, जिस पर आर्य्य पुरुष घबरा गये थे; परन्तु उसका परिणाम अच्छा ही निकला।

हम सब बजीराबाद आर्य्य-समाजके उत्सवमें ही सम्मिलित थे कि मुकेरियांके एक भाई वहांके अधिकारियोंका पत्र लेकर पहुंचे जिससे पता लगा कि वहां एक विचित्र प्रकारका शास्त्रार्थ रचा गया है सनातन सभाके किसी पंडितने एक महाभारतके श्लोकको वेद मन्त्र कहकर पेश किया, जिसपर आर्य्यसमाज तथा सनातन सभाके प्रधानोंका विवाद हो गया और दोनोंके हस्ताक्षरसे एक स्वीकार पत्र स्टाम्प पर लिखा गया। इस स्वीकार पत्रका तात्पर्य्य यह था कि यदि सनातन सभाका पंडित अपने बोले श्लोकको वेदमें दिखा दे तो आर्य्य-समाजके प्रधान ५००) जुरमाना देंगे, परन्तु यदि सनातन सभाका पण्डित ऐसा न दिखा सके तो सनातन सभाका प्रधान ५०) जुरमाना देगा। मैंने इस जुआबाजीके [illegible] इन्कार करना चाहा, परन्तु आर्य्यपथिकने कहा कि जुआ-बाजीको अलग करके यह तो हमारा कर्त्तव्य है कि अपने

मतका समर्थन किया जावे। बस हम दोनों गुरुदासपुर पहुंच कर इक्के पर ६ सितम्बरको २ बजे दिनको मुकेरियां पहुंच गये। उस दिन मैंने और दूसरे दिन आर्य्य पथिकने व्याख्यान दिये। तीसरे दिन २०००की उपस्थितिमें सनातनी बड़े बड़े पण्डित भी श्लोकको वेद-मन्त्र सिद्ध न कर सके।

परन्तु इस स्थानकी एक घटना पण्डित लेखरामके हठ और उनके धर्म्म-प्रेम दोनोंका परिचय देती है। मैं यतः मन्त्रोंका उच्चारणादि शुद्ध कर सकता था इसलिये मुकेरियांके आर्य्यभाई चाहते थे कि शास्त्राथ मैं करूं। उनको यह भी डर था कि कहीं पण्डित लेखराम अपने अक्खड़पनसे उलटा असर न डाल देवें। जब वेदोंमें आन्दोलन करके देख लिया कि विवादास्पद छन्द वेद-मन्त्र नहीं प्रत्युत महाभारतका श्लोक है तो मैंने कहा कि हममें से एकको अब जाने दो क्योंकि हम दोनोंने जगराओं आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होना है। और वहां १२ सेप्तेम्बरके प्रातः पहुंचनेके लिये मुकेरियांसे ११ के प्रातःकाल चल देना चाहिये। जानेको मैं स्वयं तय्यार हुआ जिस पर तीन चार बार यही उत्तर मिला कि कोई इक्का नहीं मिलता, फिर यह निश्चय हुआ कि पण्डित लेखरामजी जांय। यह निश्चय होना ही था कि पांच मिनटोंमें बड़ा तेज़ इक्का लाकर खड़ा कर दिया गया। पंडित लेखरामजी असल बात ताड़ गये और बोले—"अब बड़ी जल्दी इक्का आ गया। जाओ, मैं नहीं जाता, मै तुम्हारी शरारत

समझ गया हूं ।" मैंने इक्का ले जानेको कहा और आर्य्य-भाई घबराये कि अब शास्त्रार्थमें पण्डित लेखरामजी खड़े होकर कहीं काम न बिगाड़ें । अब शास्त्रार्थके मैदानमें आये और मैंने पण्डित लेखरामको कुर्सी पर बैठनेको कहा तो उनमें विचित्र परिवर्तन दिखाई दिया । ऐसा ज्ञात होता था कि सारे शास्त्रार्थका उत्तरदातृत्व उन्हीं पर है और यह उनका ही कर्त्तव्य है कि सबसे योग्य आदमीको शास्त्रार्थके आसन पर बैठायें । मुझे कहा—"लालाजी ! बैठिये, शास्त्रार्थ आप करेंगे ।" मैंने कहा कि पण्डित लेखरामकी उपस्थितिमें मैं कैसे बैठ सकता हूं । उत्तर बड़े प्रेम और आग्रह पूर्वक था । मुसकराकर बोले—"यह बात अब जाने दीजिये, यह आपका ही काम है । यदि मैं बैठ गया तो शास्त्रार्थकी रिपोर्ट कौन लिखेगा ।" यह कहा और मुझे पकड़ कर कुर्सी पर बैठा दिया ।

यह आचरणका परस्पर विरोध शायद सबकी समझमें न आयेगा, परन्तु बुद्धिमान पाठक इसके रहस्यको समझ जायंगे ।

१२ सितम्बरको मुकेरियांसे चलकर दिन रात यात्रा करते हुए हम दोनों १३ को प्रातः जगराओंके वार्षिकोत्सवमें जाकर सम्मिलित हुए । जो रहतिये पीछेसे शुद्ध होकर आर्य्य-समाजमें सम्मिलित हुए थे वे पहले पहल इसी स्थानमें पण्डित लेखरामजीको मिले थे ।

जगराओंमें फिर नियत घटना आकर उपस्थित हुई । वहांके पौराणिकोंने स्वयं आर्य्य-समाजका सामना करनेकी शक्ति न

देखते हुए मुसलमानोंको मुबाहसेके लिये खड़ा किया। तह-सीलदार भी मुसलमान था, इस लिये उन्हें विजयकी बड़ी आशा थी। मैं जब उत्सव समाप्त करके लौटने लगा तो कुछ आर्य्य भाइयोंने वहां भी मेरी मिन्नत की कि मैं आर्य्य-पथिकको साथ ही ले जाऊं। मैंने मालेरकोटलेकी व्यथा याद करके ऐसा करनेसे इन्कार कर दिया। शहरमें धूम मच गई कि आर्य्योंको और विशेषतः लेखरामको, कष्ट दिया जायगा। परन्तु सिंहके समीप जाना बड़ा कठिन था। विरोधियोंकी पोल खोलनेसे पहले आर्य्य-पथिक लेखराम जगराओंसे न हिले।

२६, २७ सितम्बरको, पण्डित लेखराम झङ्ग आर्य्य-समाज के वार्षिकोत्सवमें व्याख्यान देते तथा शङ्का समाधान करते रहे।

नवम्बरके अन्तमें लाहौर आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सवमें सम्मिलित होकर व्याख्यान दिये और उसके पश्चात् फिर २७ दिसम्बर, १८६६ के दिन जालन्धर आर्य-समाजके वार्षि-कोत्सव पर पहुंचे। इन दोनों महीनों लाहौर रहकर जीवन चरित्रकी तय्यारी और छपाईका काम निर्विघ्नतासे होता रहा और अपनी माता तथा धर्म-पत्नीको भी आर्य-पथिकने लाहौरमें ही टिका दिया। जालन्धर आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सव पर व्याख्यान देकर पण्डित लेखराम मेरे साथ ही लुधियाना आर्य्य समाजके वार्षिकोत्सव पर गये। उस स्थानकी एक घटना वर्णनीय है जिससे पता लगता है कि प्रतिज्ञा-पालनका भाव आर्य्य-पथिकको कैसा दृढ़ संकल्प बनाये हुए था।

लुधियाना आर्य्य-समाजके वार्षिकोत्सव पर अन्तिम दिवस पण्डित लेखरामका व्याख्यान नियत था। उससे पहले मैं ने वेद-प्रचार-निधिके लिये अपील की थी और जब धन एकत्र हो चुका तो पण्डित लेखराम व्याख्यानके लिये खड़े हुए। ११ माघ, संवत् १९५३ के सद्धर्म प्रचारकमें लिखा है—"अभी व्याख्यान आरम्भ नहीं किया था कि पण्डितजीकी प्रकृति कुछ रुग्ण हो गई (पेटमें दर्द होने लगा था) जिस कारण वह अपना व्याख्यान न दे सके। उनके स्थानमें लाला मुन्शीरामजीने धर्म विषय पर........व्याख्यान दिया........उनके पश्चात् पण्डित जीकी प्रकृति कुछ ठीक हो गई और उनका व्याख्यान आरम्भ हुआ।............जनोपस्थिति १२०० के लगभग थी।" २९ दिसम्बरको रातको लुधियाना आर्य्य-समाजका उत्सव समाप्त हुआ और ३१ को शामको पण्डित लेखराम रेल और टट्टूकी यात्रा करते हुए शरकपुर आर्य-समाजमें पहुंचे और १ जनवरी, १८९७ के दिन धर्म-चर्चामें पूरा भाग लेनेके अतिरिक्त एक पतितको शुद्धि की और अपने प्रभावशाली व्याख्यानके साथ वार्षिकोत्सवको समाप्त किया। शरकपुरसे लौटकर फिर पण्डित लेखरामके भागोवाला (जिला गुरुदासपुर) आर्य्य-समाजके उत्सवमें ही सम्मिलित होनेका पता लगता है जो १७ और १८ जनवरीको हुआ। उत्सवमें पण्डित लेखरामजीने दो व्याख्यान दिये और उत्सवके पश्चात् तक ठहर कर चौधरी फतेहसिंहके लड़केका नामकरण संस्कार कराया तथा आर्य्य-समाजके कुछ

नये सभासद बनाये। यह सब कुछ तो किया परन्तु मुझे जिस दृश्यमें अधिक आनन्द आया वह उत्सवके समयका शास्त्रार्थ था।

सायंकाल अपना व्याख्यान समाप्त करके मैं सन्ध्यावन्दन के लिये चला गया। फिर भोजन करके बैठा था जब पता लगा कि एक मुसलमान ग्रेजुएटके साथ पण्डित लेखरामका शास्त्रार्थ हो रहा है। कम्बल ओढ़ कर मैं शास्त्रार्थका आनन्द लेने चल दिया। जनोपस्थिति अढ़ाई हजारसे कम न होगी। आस पासके ग्राम स्त्री पुरुषोंसे खाली हो गये थे। इनमें दो सहस्र तो जाट थे और शेष ब्राह्मण, खत्री, मुसलमानादि। एक तुर्की टोपीवाला एक ओर और आर्य्य-मुसाफिर दूसरी ओर बैठे हैं। प्रश्नकर्त्ता "तुर्की टोपी" थे और उत्तरदाता पण्डित लेखराम। पण्डित लेखराम मेरे आनेसे पहले यह प्रतिज्ञा स्थापन कर चुके थे कि उत्तरमें दुर्जन-तोष न्यायके अनुसार जो कुछ वह कहेंगे उसके लिये कुरान वा हदीस मूलका प्रमाण देंगे, और पूछा था कि क्या महम्मदी प्रश्नकर्त्ता भी ऐसी प्रतिज्ञा करनेको तय्यार है।" तुर्की टोपी उत्तर दे चुकी थी कि वह भी मूल वेदका ही प्रमाण देंगे। महम्मदी ग्रेजुएटने प्रश्न नियोग विषय पर कर छोड़ा था और जब मैं पहुंचा तो एक पुस्तक हाथमें लिये उसमें से कुछ पढ़ रहा था। मेरे सामने निम्न लिखित नाटक हुआ।

महम्मदी—"देखिये हवाला रगवेद, मन्दिल............ सोकत............"

आर्य्य पथिक—"शुद्ध उच्चारण तक नहीं कर सकते हो और वेद-दानीका दावा है। बस तुम निग्रह स्थानमें आ गये। या तो दावा छोड़ो या हार मानों।"

महम्मदी—"अजी हम वेद जानें या न जानें, एतराज तो ठीक है।"

आर्य्य पथिक—"पहले कहो—मैंने झूठ बोला कि मैं मूलवेद जानता हूं और झख-मारी—यह कहो तब मुबाहसा आगे चलेगा।"

मुहम्मदी प्रेजुएटने बहुत हेरा फेरीकी परन्तु अन्तमें उसको कहना ही पड़ा—"अच्छा मैंने गलत कहा था कि मैं मूल-वेदमें से हवाले दूंगा—अब मेरे सवालका जवाब दीजिये।"

आर्य्य-पथिक—"आये अब राह-ए-रास्त (सीधे मार्ग) पर हो, अब जवाब देता हूं।"

मेरे पास दस बास पढ़े लिखे मुसलमान और दो तीन मौलवी खड़े थे, सब बोल उठे—"सुबहानऽल्ला! क्या ताक़त मुनाजरा है! शेरके पंजेमें फंसा हुआ है।"

पण्डित लेखरामने न केवल वैदिक नियोगका ही भली प्रकार मण्डन किया प्रत्युत मुसलमानोंके मुताके मसलेको भी पेश किया। इस पर मुहम्मदी प्रेजुएटने कहा—"सिर्फ कुरान

की आयत पढ़ देनेसे काम न चलेगा। किसी मुस्तनिद तफ-सीर (प्रामाणिक भाष्य) का हवाला भी देना होगा।"

आर्य्य पथिक—"अच्छा बतलाओ तुम किस तफसीरको मुस्तनिद मानते हो ?"

महम्मदी अंजुमनने जिस तफसीरका नाम लिया वही पण्डित लेखरामके हाथमें थी, उन्होंने उसमेंसे पढ़कर सुना दिया। मालूम होता है कि तुर्की टोपीने कभी कोई तफसीर पढ़ी न थी, पण्डित लेखरामसे किताब खुद पढ़नेको मांगी। यहां पण्डित लेखरामकी हाजिर जवाबी काम आई। महम्मदी अंजुमन मुबाहसेमें एक स्थानमें कह चुका था कि "खुदाको बीचमें क्यों घसीटते हो, क्या लाज़मी है कि खुदाको मान कर ही मुबाहसा चले ?" इसीका सहारा लेकर और सामने खड़े एक वृद्ध मौलवी साहेबको सम्बोधन करके आर्यपथिकने कहा—

मौलवी साहेब ! आप तशरीफ लाकर हाजरीनको पढ़ सुनाइये कि कुरान शरीफको तफसीरमें क्या लिखा है। इस दहरिये (नास्तिक) के हाथमें मैं कुरान शरीफ न दूंगा।"

मौलवी साहेबको कोई आकर्षण शक्ति वेदी पर खींच ले गयी और उन्होंने तफ़सीरके शब्द ज्योंके त्यों पढ़ कर अपनी ओरसे यह भी कह दिया—"कौन कहता है कि कलाम मजीदमें मुताका हुक्म नहीं है !"

सभा मण्डप करतालिका ध्वनिसे गूंज उठा और सभा विसर्जन हुई।

इसके पश्चात् पण्डित लेखराम जमकर लाहौरमें ही जीवन चरित्रका काम करते रहे और उनके कहीं बाहर प्रचारके लिये जानेका पता नहीं लगता। मैंने भी उनका यह अन्तिम व्याख्यान सुना; इसके पश्चात् पण्डित लेखरामका सबसे अन्तिम प्रचार मुलतान नगरमें हुआ जिसका हल उनके पत्रसे ज्ञात होता है जो उन्होंने ४ मार्च को ११ बजे रात्रिके समय, मन्त्री आर्य-प्रतिनिधि सभाको लिखा था—"मेरे यहां ४ व्याख्यान हुए, खूब रौनक रही। मेरे सक्खर जानेके लिये यहांके समाजकी सम्मति नहीं है, क्योंकि वहां क्वारन्टीन बीमारीका लगा हुआ है। मुझे आग्रह पूर्वक उन्होंने रोक लिया है और आपको तार दे दी है। मुजफ्फर गढ़में दूसरा समाज होनेकी शङ्का है इस लिये आज रातको वहां जाता हूं।"

पाठक वृन्द! आपने आर्य्य-पथिकके जीवनके साथ साथ इतनी यात्रा की, आपका उत्साह बढ़ता गया और इस पवित्र जीवनके साथ प्रेमकी वृद्धि होती गई। क्या आप अकस्मात् इस जीवन श्रृङ्खलाको टूटते देखकर दुःखित न होंगे? मैं भी उसी प्रकार दुःखित हूं और चाहता नहीं कि उसका वर्णन शीघ्र समाप्त हो। परन्तु कालकी गतिके आगे किसका वश चला है। फिर भी मुलतानके अन्तिम प्रचारको विस्तृत करके शिर पर आई हुई आपत्तिको कुछ कालके लिये टालना चाहता हूं।

मुलतानमें कालिज दल वालोंकी ओरसे दूसरा आर्य्य-समाज खुला हुआ था। उन्होंने आर्य्य-प्रतिनिधि सभाके काम-

के विषयमें कुछ भ्रम फैलाये थे जिन्हें दूर करनेके लिये पण्डित लेखराम गये थे। पण्डित लेखरामजीके मुकाबिलेमें उन लोगोंने भी व्याख्यान कराये जिनमें पण्डित लेखरामको अपशब्द ही न कहे गये प्रत्युत सिक्खोंको भड़कानेके लिये उन्हें गुरुनिन्दक बतलाया गया। ऐसी अवस्था हो चुकी थी जब ४ मार्चको पं० लेखरामका इस जीवनमें अन्तिम व्याख्यान हुआ। इसका आंखों देखा हाल एक सभ्य पुरुषने, १४ वर्ष हुए, मुझे लिख कर भेजा था जिसे यहां उदधृत करता हूं :—

"पण्डित (लेखराम) जीके व्याख्यान कुप्पवङ्गरी-गीरां और समाज मन्दिरमें होते रहे। मैंने जाकर मुसलमानोंसे कहा कि उनसे मुबाहसा कर लो। वे कहने लगे कि यह बड़ा आलिम है हम उसकी बराबरी नहीं कर सकते। ....एक दिन पण्डितजीने लाला (क) काशीराय वकीलको जो उस समय कल्चर्ड समाजके प्रधान थे, और चेतनानन्दजी (वकील)को समाज मन्दिरमें बुलवाया और उनसे कहा—"देखो मिर्जाने कैसी सख्त किताब लिखी है जो कि अनजानोंको भ्रममें डाल सकती है। इसका उत्तर अवश्य देना चाहिये। आप लोग निरे लड़ाई झगड़ोंमें पड़े हुए हो।" बहुत सी बात चीत हुई परन्तु कुछ परिणाम न निकला, बल्कि उसी दिन उन लोगोंने भाई जगतसिंहका व्याख्यान कुप्पवङ्गरीगीरां" में कराया। वहां

क—(आर्य्यपथिककी मृत्युके पश्चात् यह फिर वेद-प्रचार-दल के समाजके प्रधान हो गये थे।)

खालसोंकी उपस्थिति खासी थी जिसमें लाला काशीराम और लाला चेतनानन्दने स्वयं कहा कि पण्डित लेखराम कहता है कि गुरु नानक मुसलमान था इसलिये उसका समाजसे कोई सम्बन्ध नहीं। मैं कुछ भाइयों समेत पण्डितजीके दर्शनको गया और व्याख्यानका सारा हाल उन्हें सुनाया। कुछ देर सोचनेके पश्चात् बातचीत करते हुए पण्डितजीके मुंहसे निकला—"कौन कहता है कि गुरु नानक मुसलमान थे?" चलो कल यही व्याख्यान होगा।"

"नोटिस रातको ही लिखे गये। दूसरे दिन ४ बजे मध्याह्नोत्तर मैं समाज-मन्दिरमें गया। कई भाइयोंके प्रश्नोंके उत्तर देते रहे। फिर अजवाइन मंगाई और साफ करके पानीके साथ खाली और कहा—रेलमें यही मेरा जीवन है, यह बड़ी उत्तम ओषधि है।" सात बजते ही पण्डितजी मैदानमें पहुंचे। हम लोग भजन गाते थे और पण्डितजी पेन्सिलसे व्याख्यानके लिये नोट लिख रहे थे। सिक्ख भड़काये हुए बड़े जोशसे लाठियां लिये जमा थे। व्याख्यान आरम्भ हुआ। आर्यावर्त्तकी अवनतिके आरम्भ कालसे वक्तृताको उठाकर परस्परके द्वेषके बीज का खोज लगाते हुए बतलाया कि थोड़े से स्वार्थ ने आर्य्य-वर्त्त का नाश कर दिया है। आपने बतलाया है कि महमूद और अलाउद्दीनके विजयका साधक तुच्छ जीवोंका स्वार्थ ही था। तसे दृष्टान्तोंके पश्चात् आपने विष्णु बावा, मुन्शी इन्द्रमणि और स्वामी दयानन्दकी हिम्मतका वर्णन

किया जिन्होंने विरोधी आक्रमणोंसे आर्य्यजातिको बचानेके प्रयत्न किया। इसके पश्चात् अपने विषयको लेकर मिर्जागुलाम अहमदकी "सत् वचन" पुस्तकमें से गुरु नानकके मुसलमान होनेके विषयमें लेख पढ़ कर चारों ओर देख पूछा—'यदि कोई खालसा बहादुर विद्यमान हैं तो इसका जवाब दें।" फिर लाला काशीरामादिके उत्तरमें "ग्रन्थी फोबिया" पुस्तक पेश करके पूछा कि जिन कल्चर्ड साहेबानने गुरु नानकके विरुद्ध ऐसी पुस्तक छपवाई, क्या वे अब गुरु नानकके पवित्र आचरण पर लगाये कलङ्कको दूर कर सकते हैं?" फिर बड़े प्रबल प्रमाणों और युक्तियोंसे सिद्ध किया कि गुरु नानक मुसलमान न थे।

व्याख्यानकी समाप्ति पर लाला चेतनानन्दजीके मुन्शीने विघ्न डालनेकी नीयतसे कहा—"पण्डित (लेखराम) जीने (अपने व्याख्यान में) गुरु नानकको हिन्दू तो कहीं नहीं कहा" इस कुटिल नीतिको भी पण्डित लेखरामकी हाजिर जवाबीने परास्त कर दिया। आर्य्य-पथिक बोले—

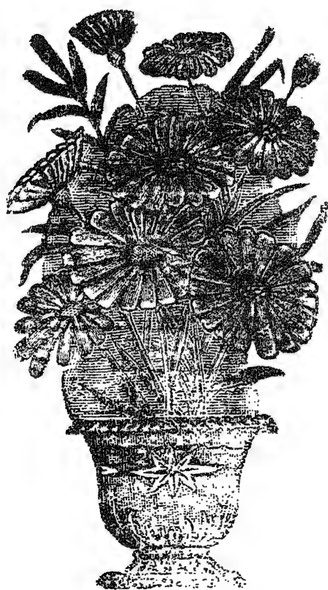
"देखो बाबा नानक देव स्वयं क्या कहते हैं,—

हिन्दू अन्हा (अन्धा) तुर्को काणा।
दोहां विच्चों ज्ञानी स्याणा।

बाबा नानकजी ज्ञानी अर्थात् आर्य्य थे, गुलाम हिन्दू न थे।"

हमारे चरित्र नायकके जीवनकी रङ्ग-भूमिमें अन्तिम जवनका उठने वाली है। वह अन्तिम दृश्य बड़ा ही मर्मभेदक,

गंभीर और पवित्र है जो अपने स्थिर संस्कार आर्य्य जनतापर छोड़ गया है। उसकी अन्तिम जवनिकाके गिरनेके पश्चात् कुछ लिखना पाठकोंके उच्च आदर्शकी ओर उठे हुए हृदयोंको फिर से भूमितल पर पटकनेके सदृश होगा, इसलिये आइये! इस जीवन पर एक व्यापक दृष्टि पहलेसे ही डाल जांय।



चौदहवां अध्याय

आर्य्यपथिकका चरित्र संगठन

गुण दोषोंपर एक दृष्टि



बचपनसे ही लेखरामपर ब्राह्मणत्वके संस्कार पड़ रहे थे। यद्यपि वर्ण विचारसे जन्म क्षत्रिय गृहमें हुआ था तथापि लेख-रामके पूर्व जन्मके प्रबल संस्कार, विरुद्ध वायु-मण्डलमें भी, उन्हें ब्राह्मणत्वके सांचेमें ढाल रहे थे। उनका

त्यागका सरल जीवन

निस्सन्देह साक्षी दे रहा था कि पुलिसके बदनाम महकमेके अन्दर भी सावधान रहकर वह एक दिन इन्द्रियोंके दासत्वकी बेड़ीको काट डालेंगे। तमाकूकी तो बचपनमें ही बैतुलबाजीसे जड़ काट डाली थी। मांस मद्य तथा अन्य मादक द्रव्योंके कभी समीप नहीं गये। पाप रूपी दूषण तो एक ओर रहे किसी व्यसनको भी जीते जी समीप नहीं आने दिया। और तो और, पान भी कभी नहीं खाया। कपड़ोंके बनाव चुनावको वह ज़नाना-पनके नामसे पुकारा करते थे। स्वास्थ्य अत्युत्तम रहता था, इसलिये पोशाकसे शोभा बढानेकी उन्हें आवश्यकता

न थी। कैसे भी कपड़े किसी ढङ्गसे पहन लें, उनके शरीर पर स्वयं शोभा पा जाते थे। जब तक अत्यन्त आवश्यकता न होती तब तक दरमियाने दरजेमें भी यात्रा न करते। और जो व्यय करते वही सभासे लेते। जहां अन्य उपदेशक पूरे इक्केका किराया १) लगाते वहां आर्य्य-पथिकके बिलोंमें उसी स्थानका किराया साढ़े तीन आने दर्ज होता। जहां कुलीसे असबाब उठवाकर ले जानेमें बचत होती वहां इक्का गाड़ी पर नहीं बैठते थे। और यदि यात्रामें कहीं उतरनेसे अपना काम भी होता तो वहांका किराया सभासे न लेते। दृष्टान्तके लिये केवल एक बारका पत्र पेश करना काफ़ी होगा। सभाके मन्त्री जीने १५ जनवरी १८९६ को लिखा—"मान्यवर पण्डितजी नमस्ते. आपके ९-१-९६ के बिलमें जो ७ दिसम्बरको लाहौर तकका किराया रेल और विविध लिखा है उसमें "विविध" से क्या तात्पर्य्य है तथा आपने २३ दिसम्बर, १८९५ सहालेसे लाहौर तकका किराया २॥=) लिखा है, परन्तु लाहौरसे सहाले तकका किराया आपने नहीं लिखा, इसका क्या कारण है? यदि भूल हो गई हो तो सूचित कीजिये कि बिलमें दर्ज कर दिया जावे"

इसके उत्तरमें पण्डित लेखरामने लिखा—"विविधसे तात्पर्य्य है, किराया, मज़दूरका जो स्टेशन तक दिया गया है। और लाहौरसे सहाले तकका किराया मैंने जानबूझ कर

नहीं लिखा क्योंकि वह आधा कुछ मेरा निजका काम था और ऐसा किराया मैं वसूल नहीं किया करता।"

सत्व-गुणी ब्राह्मण मैं लेखरामको इसीलिये कहता हूं।

सच्चाई और सदाचारकी मूर्त्ति।

ऊपर वर्णनकी हुई कहानीमें आर्य्य-पथिककी सत्य-परायणताके बहुतसे प्रमाण मिलते हैं। साधारण मामलोंमें तो मैंने प्रायः अच्छे उपदेशकोंको सत्यवादी पाया है, परन्तु आर्य्य सिद्धान्तोंके माननेमें ऐसे उच्च कोटिके उपदेशक भी गिर जाते हैं और स्वयं जिस सिद्धान्त पर सन्देह हो उसको भी सिद्ध करने खड़े हो जाते हैं। पण्डित लेखरामका व्यवहार इससे सर्वथा विरुद्ध था। जब तक नियोग समझमें नहीं आया था तब तक खुली सम्मति देते थे और जब द्विजोंके लिये नियोग की आज्ञा समझ ली तो उसकी पुष्टिमें पुस्तक लिख दी। कौन नहीं जानता कि पण्डित लेखरामका अन्दर बाहर एक सा था।

सत्य-परायणताके साथ सदाचारका तो गाढ़ा सम्बन्ध है ही न केवल यही कि पण्डित लेखराम ३५ वर्षकी आयु तक पूर्ण ब्रह्मचारी रहे प्रत्युत मैं जानता हूं कि गृहस्थाश्रममें भी ऋतु-गामी रहते हुए वह ब्रह्मचारी ही थे। सदाचारसे उनको बड़ा प्रेम था।

जिस प्रकार सदाचारके साथ उन्हें बड़ा प्रेम था उसी तीक्ष्णतासे वह दुराचारसे अत्यन्त घृणाका भाव प्रकट करनेसे नहीं रुकते थे। यद्यपि महात्माओंके लिये महामुनि पतञ्जलि

ने पापके लिये उपेक्षा की वृत्ति धारण करनेका उपदेश दिया है, परन्तु यह गुण पूर्ण योगी जनोंमें ही पूर्ण रूपसे स्थिर होता है। पण्डित लेखराम जैसे मध्यम श्रेणीके धार्मिक वीरोंमेंसे थे वैसे क्षात्र-धर्म्म-मिश्रित गुण भी उनमें प्रवेश किये हुए थे। धर्म्मकी आड़में अधर्म होता देख कर वह डांट बताये बिना रह नहीं सकते थे। और आर्य्य-समाजके सभासदोंको गिरे हुए देख कर तो उन्हें बहुत ही शोक हुआ करता था। इस सम्बन्ध में मैं उनकी नोट बुकसे कुछ लेख उद्धृत करता हुं।

सं० १८९१ ई० के जनवरी मासमें पण्डित लेखराम ऋषि दयानन्दके जीवन वृत्तान्तका मसाला इकट्ठा करते हुए दानापुर (बिहार प्रान्त) आर्य्य-समाजमें पहुंचे। यहांके विषयमें उनकी गुप्त नोट बुकमें दर्ज है—"दानापुर समाजका एक अफसोसनाक हाल—२७, २८ जनवरी १८९१ ई० (१) वहांके तमाम मेम्बर बिरादरीके डरके मारे श्राद्ध करते हैं। एक नामी मेम्बर आर्य्य समाजके घरमें उसके लड़केकी शादी है। उसने २७ जनवरीकी रातको एक कत्थकका नाच कराया जिसमें चन्द मुअज्जिज़ मेम्बर आर्य्यसमाज गये। भूतपूर्व मन्त्री,—उपप्रधान,—आदि। और आज २८ जनवरी बुद्धवारको उसके यहां रंडीका नाच है। मुझे अफसोससे मालूम हुआ कि एक मेम्बरने आर्य्य-समाजके मन्दिरमें आकर लोगोंको यह न्योता दिया कि आज भी तुम चलना।

"बिरादरीका जोर तोड़नेके वास्ते मेम्बर लोग बिलकुल

कोशिश नहीं करते। वैसे हालत समाजकी अच्छी है। मकान भी अपना जर-खरीद है, एक स्कूल भी जारी है, स्कूलके हेड-मास्टर समाजके प्रधान हैं, तादाद भी एक माकूल है, हाजिरी भी माकूल होती है, २५ मेम्बर सन्ध्या करनेवाले भी हैं, कुछ हवन करनेवाले भी हैं, लाइब्रेरी भी खासी—लेकिन बे सूद ! (व्यथ)"

इसमें सन्देह नहीं कि दुराचारसे आर्य्य-पथिकको बड़ी घृणा थी परन्तु इस लिये दुराचारी पुरुषको त्याग कर उसे उसके भाग्य पर छोड़ देना वह अनार्यपन समझते थे। जब किसी आर्य्य-समाजमें जाकर किसी काम करनेवालेको अनुपस्थित पाते और सामाजिक सभासदोंसे उस पर दुराचारका आक्षेप सुनते तो मैरको चलते हुए उसके यहां पहुंच जाते और उसे साथ ले समझा कर गिरते गिरते उसे बचा लेते। ऐसी कई आप बीती घटनायें लोगोंको याद होंगी। यही कारण था कि यद्यपि मुहम्मदी मतको सबसे बढ़कर दुराचारकी शिक्षा रूपी विषय फैलानेका साधन समझ कर उसकी जड़ उखाड़नेको उद्यत रहते थे परन्तु महम्मदी जिज्ञासुओंके साथ जो उनको प्रेम था वह उनके मित्र भली प्रकार जानते हैं और इसी प्रेमने अन्तको उन्हें एक महम्मदी राक्षसकी छुरीका शिकार बनाया।

यह प्रसिद्ध है कि साधारण सच्चे आदमी प्रायः क्रोधी अधिक होते हैं।

हठ और क्रोध

की मात्रा परिडत लेखराममें भी अधिक थी। यों तो थोड़े ही सच्चे आदमी ऐसे देखनेमें आते हैं जिनमें हठ और क्रोधका अभाव हो, किन्तु जिन धर्म सेवकोंको दिन रात मूढ़ता कुटिलता और अधर्मके साथ युद्ध करना पड़ता है उनकी हठ और क्रोधकी मात्रा रुद्र रूप धारण कर लेती है। यह सौभाग्य शताब्दियोंके पश्चात् किसी योगी संशोधकको प्राप्त होता है कि वह अधर्मके लिये रुद्र रूप धारण करते हुए भी क्रोध और हठ को वशमें रख सके। परिडत लेखराम योगी न थे और नहीं धर्मके प्रवर्तकोंमेंसे एक, इसी लिये उनमें हठ और क्रोध रूपी दोनों निर्बलतायें थीं। किन्तु हम उनके जीवन वृत्तान्तमें यह कहीं नहीं पाते कि उस हठ वा क्रोधसे किसीको कुछ हानि पहुंची हो।

एक बार अजमेरके आर्य्य-समाज मन्दिरमें डेरा लगानेके पश्चात् कुछ लिख रहे थे। बाबू राम विलास सार्डा जी (जो वैदिक यन्त्रालयके अजमेर पहुंचनेके दिनसे ही उसके संरक्षक रहे हैं) ने पूछा कि महाराज क्या लिख रहे हो।

उत्तर मिला—"वैदिक प्रबन्धकोंकी जरा सी बेपरवाईसे हमारे सिर पर आफत आजाती है और विरोधियोंको उत्तर देते देते थक जाते हैं। देखो इस पत्थर पूजकने एक पुस्तक लिखी है जिसने यन्त्रालयकी लापरवाईसे फायदा उठा कर बहुत

से ऊटपटाङ्ग एतराज किये हैं। हम किस किसका उत्तर दें ; आप लोग कुछ प्रबन्ध नहीं करते।" सार्डाजीने निवेदन किया कि गलतियां पुरानी उनके संशोधनका कुछ तो प्रयत्न हो ही रहा है। इसपर क्रोधमें भर कर बोले—"ख़ाक कर रहे हो" और जो ५० वा ६० पृष्ठ लिखे हुए थे सब फाड़ डाले। जब सार्डाजी फटे पत्र इकट्ठा करने लगे तो उन्हें भी छीन लिया। सार्डाजी उदास होकर घर चले आये और दूसरे दिन नियमानुसार पण्डितजीको मिलने भी न गये। तब तो हमारे वीर उनके घर जानेको तय्यार हो गये। लोगोंने चपरासी दौड़ाया ; सार्डाजी तत्काल हाजिर हुए। जब सार्डाजीने अपने न आनेका कारण बतलाया तो आप गुलाबकी तरह खिल गये और बोले —"ईश्वर जानता है सार्डाजी, आप आर्य्य-समाजके सच्चे प्रेमी हैं, मैं उस पत्थर-परस्तका जवाब जरूर लिखूंगा।" और फिर आपने "सांचको आंच नहीं" शीर्षक देकर शिवनारायण प्रसाद कायस्थकी पुस्तकका उत्तर लिखा जो "कुल्लियात आर्य्य-मुसाफिर"के १७४ पृष्ठ से आरम्भ होता है। हठ तो पण्डित लेखराम में बहुत था, जिसके दृष्टान्त बचपनसे ही मिलते हैं, परन्तु उस हठका ही परिणाम

प्रतिज्ञा पालनकी धुन

थी। आर्य्य-पथिकने एक बार जो मुंहसे निकला उसे हठ करके भी निभानेका सदैव प्रयत्न किया। इनके अन्दर जहां

धर्मके साथ प्रेमका भाव सर्व साधारणसे कहीं बढ़कर था वहां उसके निभानेके लिये आत्म-समर्पण तथा तपका भी बड़ा उच्च भाव था। इसके उदाहरण जहां बचपनसे मिलते हैं वहां युवावस्थामें यह भाव हम यौवन पर चढ़ा हुआ पाते हैं। रिसाला धर्मोपदेशके लिये एक दो बार कातिब (कापी नवीस) न मिला। स्वयं अभ्यास करके छापनेकी स्याहीसे कापियें लिखीं किन्तु रिसालेको बन्द न होने दिया।

हम देख चुके हैं कि १२ वर्षकी आयुमें ही अपनी चचीको एकादशी व्रत करते देखकर स्वयं उपवास करने लग गये थे और जब तक उस पर श्रद्धा रही दृढ़ता पूर्वक इस व्रतको निबाहा।

ज्वर हो, फोड़े निकले हों, चलनेके अयोग्य हों, पुत्रकी मृत्युका शोक हो; कोई भी आपत्ति वा विपत्ति उनको अपने कर्त्तव्य पालनसे नहीं रोक सकती। उनकी दो कालकी सन्ध्याके अटूट नियमकी साक्षीमें मेरे पास सैकड़ों पत्र पहुंचे हैं। जब मेरे साथ शिक्रमकी सवारीमें लुधियानेसे जगराओं जा रहे थे तो मार्गमें पानी लेकर शौचके लिये गये। लौटने पर पता लगा कि हाथ पैर धोने और कुल्ला करनेके लिये पानी नहीं है। मैं नीचे था और पण्डित लेखराम ऊपर की छत पर थे। मार्गमें कुछ पूछनेको आवाज दी, उत्तर कुछ न मिला। देखा तो आर्य्य-पथिक सन्ध्या कर रहे हैं। जब दूसरी चौकी पर शिक्रम पहुंची तो एक भाईने पूछा—"पण्डितजी! क्या

पेशावरी सन्ध्या हो चुकी।" पण्डित लेखरामने गम्भीर स्वरमें उत्तर दिया—तुम पोप हो जो विना पानी मिले ब्रह्मयज्ञ नहीं कर सकते। भोले भाई! स्नान कर्म्म है, हुआ वा न हुआ; परन्तु सन्ध्या धर्म है और उसका न करना पाप है।"

प्रतिज्ञा पालनमें ऐसी दृढ़ताका ही परिणाम था कि धर्मवीर लेखराम धर्ममें राजीनामा नहीं किया करते थे।

जहां लेखरामके चरित्रमें हम कुछ साधारण निर्बलतायें पाते हैं, वहां कई प्रकारकी दृढ़ताओंको पराकाष्ठा तक पहुंचा हुआ देखते हैं। आत्म-सम्मान और निर्भयताके लिये मान इनके मनमें वर्त्तमान सांसारिक सीमासे भी बढ़ा हुआ था। बचपनमें ही जब मदरसेमें प्यास लगी तो मदरसेका घड़ा भ्रष्ट देख कर मौलवीसे प्यास बुझानेके लिये घर जानेकी आज्ञा मांगी। मौलवी साहेबने फरमाया—"यहीं पीलो, छुट्टी नहीं मिल सकती हमारे आत्मसंमानी चरित्र नायकने न तो फिर मौलवीसे ही गिड़गिड़ा कर पूछा और नहीं भ्रष्ट घड़ेसे पानी पिया; सायंकाल तक प्यासे ही बिता दिया।

एक विश्वास पात्र महाशयसे पता लगा कि पण्डित लेखराम मिडिलकी परीक्षामें शामिल हुए थे। भारतवर्षके इतिहास सम्बन्धी प्रश्नके उत्तर सरकारी किताबोंके अनुसार देनेकी जगह आपने उनका खण्डन आरम्भ कर दिया। जहां अन्य विषयोंमें बहुत ऊंचे अङ्क प्राप्त किये वहां इतिहासमें शून्य प्राप्त किया। किन्तु उसी इतिहासमें अनुत्तीर्ण लेखरामको पांच

वर्षों के पश्चात् पेशावर प्रान्तके हाकिमोंने जिलेका इतिहास लिखनेके लिये ऐतिहासिक मसाला जमा करनेके काम पर लगाया था। उनके लिये धर्म्म धर्म्म था और अधर्म्म अधर्म्म। वह नहीं समझ सकते थे कि आग और पानीका कैसे मेल हो सकता है। यह भाव कभी कभी व्यर्थ छिद्रान्वेषणकी अवस्था तक पहुंच जाता था और उससे उपदेशके कामको (बाह्य दृष्टिसे) हानि भी पहुंच जाती थी, परन्तु लेखराम अपने स्वभावको इन छोटी हानियोंके लिये बदल नहीं सकते थे। बहुतसे धर्म्मात्माओंकी सम्मति है कि अपने मन्तव्यों तथा धर्मके नियमोंसे न गिर कर भी राजीनामा हो सकता है, परन्तु यदि यह हठका भाव एक निर्बलता है तो हम उसे लेखरामके आचरणमें छिपाना नहीं चाहते।

परन्तु इस निर्बलताका ही परिणाम था कि हम लेखराममें

अभय पदका आदर्श

अवलोकन करते हैं।

आर्य्य पुरुष प्रत्येक यज्ञकी समाप्ति पर प्रार्थना करते हैं—

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथ्वी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु॥ अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात्। अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु॥ अथर्व० का० १९ सू० १५। मं० ५। ६

पण्डित लेखराम न केवल इन मन्त्रोंका पाठ ही करते थे, वह इन मन्त्रोंमें बतलाई हुई अवस्थाको प्राप्त करनेका प्रयत्न भी करते थे। उनके जीवनमें ऐसी घटनाएं बहुत सी मिलती हैं जिनका वर्णन कायर हृदयोंके अन्दर वीरताका संचार कर देता है।

बन्नूमें जब १८६४ में पहुंचे तो सभासद आपससे इस विषय पर कानाफूसी करने लगे कि जाहिल मुसलमानोंके बेजा जोशसे रक्षाके लिये पुलिसका प्रबन्ध करना चाहिये। पं० जीने यह सुन कर मन्त्रीको कहा—"अगर मैं मुसलमानोंसे डरूं तो तो घर क्यों न बैठ रहूं प्रचारके लिये बाहर क्यों निकलूं। पुलिसकी कुछ जरूरत नहीं है।"

मालेरकोटला, जगराओं शिमला आदिकी घटनाएं अभी सैकड़ों आर्य्योंको नहीं भूली होंगी। धर्म्म-वीर सचमुच अपनी "जान हथेली पर लिये फिरते थे।" इसीलिये तो आर्य्य-जाति के कई भूषणोंने उनका नाम आर्य्य-समाजके अली रक्खा हुआ था और यह नाम सार्थक भी था क्योंकि मुसलमानों-का खण्डन करते करते उनमें स्वयं भी कुछ "जिहादी" भाव प्रवेश कर गये थे।

वेदमें लिखा है "ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्" कि मनुष्य सृष्टिमें ब्राह्मण शरीरके मुख भागकी तुल्य हैं। जैसे मुखमें पांचों ज्ञानेन्द्रिय हैं और कर्मेन्द्रिय केवल वाणी है, इसी प्रकार ब्राह्मणका लक्षण यह है कि दिन रात ज्ञानकी प्राप्तिमें लगा

रहे और जैसा ज्ञान प्राप्त हो उसका यथावत् प्रचार कर दे। मुखमें जो भोजन डाला जाय उसे पचनेके योग्य बना कर मुख शरीरके शेष भागमें बांट देता है; अपने लिये कुछ नहीं रखता। इसी प्रकार ब्राह्मणका धर्म है कि जहां अन्य वर्णोंको शुद्ध आजीविकाके साधन बतलायें वहां स्वयं अर्थ सञ्चयमें न फंसे। मैं दिखला चुका हूं कि ब्राह्मणके अन्तिम लक्षणका तो लेखराम स्वरूप ही थे परन्तु, अन्य लक्षण भी उनमें भली प्रकार घटते हैं। ज्ञान प्राप्तिके लिये उन्हें था।

तत्वान्दोलनमें अनुराग

पण्डित लेखराम यद्यपि इङ्गलिश भाषासे सर्वथा शून्य थे और संस्कृत भी साधारण ही जानते थे, तथापि उद्यमशीलता तथा धैर्य्यकी सहायतासे इन भाषाओंमें लिखे हुए ग्रन्थोंमेंसे भी ऐसी विचित्र (अपने मतलबकी) बात निकाल लाते थे जिनका उन भाषाओंके जानने वालोंको स्वप्न भी न था। यही कारण था कि आर्य्य-प्रतिनिधि सभा पञ्जाब तथा सजीव आर्य्य-समाजोंके अधिकारियों पर जब कभी वैदिक-धर्मके सिद्धान्तोंके विषयमें बाहिरसे प्रश्न होते तो वे उन प्रश्नोंका उत्तर प्राप्त करनेके लिये, पण्डित लेखरामके पास ही भेजा करते। मुझे इस प्रकारका बहुतसा पत्र व्यवहार मिला है जिसमें न केवल महम्मदी तथा ईसाई मतके अनुयायियोंके प्रश्नोंके उत्तरके लिये ही पण्डितजीको प्रेरित किया गया है प्रत्युत ऐसे प्रश्न भी उनके पास आन्दोलनार्थ भेजे गये हैं

जिनका सम्बन्ध संस्कृतके गूढ़ ग्रन्थों तथा अङ्गरेजोंके अना-त्मवाद (Materialism) के साथ था। ऐसे प्रश्न-पत्रोंमें मुझे दो पत्र बालमुकुन्द आर्य्यके, उर्दू भाषामें लिखे हुए मिले जो उक्त महाशयने रावलपिण्डीसे आषाढ़ तथा कार्त्तिक सं० १९४० में आर्य्य प्रतिनिधि सभा पञ्जाबके नाम भेजे थे। इन पत्रोंसे विदित होता है कि उन दिनों भी बहुतसे आर्य्यसमाजी बिरादरीके मुकाबिलेकी शक्ति न रखते हुए ऋषि दयानन्दके ग्रन्थोंसे ही जन्मको वर्ण व्यवस्थाका निर्णायक सिद्ध करनेके प्रयत्न किया करते थे और ऐसा करनेके लिये आजकलके थियासोफिस्टों (Theosophists) से भी बढ़कर दयानन्दके शब्दोंको खींच तान किया करते थे।

अङ्गरेजी ग्रन्थोंसे प्रमाण ढूंढ़नेकी इन्होंने विचित्र विधि निकाली। जब किसी ऐसे अङ्गरेजी पढ़े के यहां जाते जिन्हें ग्रन्थावलोकनमें अनुराग दिखाई देता तो पण्डितजीका पहिला प्रश्न उससे यह होता—"सुनाइये कोई नयी किताब पढ़ी।" यदि उसने किसी नयी किताबका नाम बतलाया तो जब तक उससे उस पुस्तकके सारे विषय न पूछ लें उसकी जान न छोड़ते, और जो बात उन्हें अपने मतलबकी मालूम होती उसी भद्र पुरुषसे अपनी नोट बुकमें लिखवा लेते। फिर वह लिखी हुई इबारत दूसरे ग्रैजुएटोंसे पढ़वा और एक दूसरेके किये अर्थोंको आपस मिलाकर निश्चय करते कि वह प्रमाण किस काममें आ सकेगा। किन्तु उस पहले नोटकी यहीं समाप्ति

न होती। जिस जिस नये अङ्गरेजोदांसे मिलते उसी विषय पर उसके विशेष पढ़े पढ़ाये हुएका स्मरण दिलाकर जितने नये प्रमाण उस विषय पर मिलते उन्हें इकट्ठा करते जाते।

इस सम्बन्धमें मुझे एक मनोरञ्जक वृत्तान्त याद आया है जो स्वर्गवासी धर्मात्मा विश्वासी लब्भूराम बी० ए० ने मुझे सुनाया था। "मौतके पश्चात्‌का दिन" (The day after death) नामी लूइसफिग्योर कृत पुस्तक उन्हीं दिनों अधिक प्रसिद्ध हुई थी और परिडतजी अपनी "मसल-ए-तनासुख" (पुनर्जन्म) नामी पुस्तकके लिये नोट तय्यार कर रहे थे। आपने 'फिग्योर' की पुस्तकमेंसे पुनर्जन्म सम्बन्धी एक उदाहरण किसीसे नक़ल कराया हुआ था जो लब्भूरामजीको दिखाया और अर्थ करनेको कहा। लब्भूरामजीने साफ़ अर्थ कर दिये जिससे परिडतजीका पूरा मतलब सिद्ध न हुआ; अर्थात् लुइस फिग्योर उच्चयोनिसे नीच योनिमें गिरना नह मानता था। परिडतजी बोले—"भाई जरा संभल कर अर्थ करो। यह अर्थ कैसे हो सकते हैं। मनुष्यसे जहां देव योनिमें जाना मानता है तो नीच पशु योनिमें जाना भी मानता होगा।" लाला लब्भूरामने फिर वही अर्थ किये जिस पर परिडतजी खिसियाने होकर बोले—"ख़ाक अंगरेज़ी पढ़े हो! आपने बी० ए० की ही मिट्टी खराब की। यह अर्थ भला कैसे हो सकते ।" लब्भूरामजी वक्ता थे रसीले, बोले—"परिडतजी! अर्थ तो वही हैं जो मैंने किये, मगर आपके डन्डेके डर

आपकी ही सी कह दें।" पण्डितजीका गुस्सा हिरन हो गया और मुसकरा कर बोले—ईश्वर जानता है! लब्भूरामजी आप बड़े होनहार हैं। इन योरोपियनोंको अभी पूरी समझ नहीं आई। रफ़्तः रफ़्तः (शनैः २) समझ जायंगे।"

इसमें सन्देह नहीं कि पण्डित लेखराम जिस लक्ष्य (अर्थात् वैदिक-धर्मके सिद्धान्तोंकी पुष्टि) को सामने रख कर आन्दोलन किया करते थे वह उन्हें किसी किसी समय अप्रामाणिक बातोंके लिये भी प्रमाणोंकी कमी नहीं छोड़ता था, परन्तु अपनी पुस्तकोंमें उन्होंने वही प्रमाण लिखे हैं जिनकी पुष्टि अकाट्य प्रमाणोंसे हुई। उदाहरणके लिये एक ही दृष्टान्त लीजिये जो पण्डित लेखरामको ऐतिहासिक खोज प्रणाली पर प्रकाश डालता है।

पण्डित लेखरामने दो भागोंमें "तारीख-ए-दुनिया" नामकी एक लघु पुस्तक लिखी थी। उसमें विविध संवतोंका वर्णन करते हुए उन्होंने आर्य्य-ग्रन्थोंके लिखे जानेके समय भी निश्चित किये हैं। पुस्तकका आधार उन नोटों पर प्रतीत होता है जो उक्त पण्डितजीकी नोट बुकमें मुझे मिले हैं। पण्डितजीकी आन्दोलन प्रणाली यह थी कि पहले प्रतिज्ञा रूपसे उस सिद्धान्तको लिख लेते थे जो उन्हें सिद्ध करना अभीष्ट होता। फिर जिन जिनके लिये प्रमाणाधार मिलता उसको रख कर शेषको काट देते। उनके नोटोंमें पहले वेदोंके निर्माणका समय १ अरब ९६ करोड़ ८ लाख ५२ हजार

९ सौ ८९ वर्ष देकर, उपनिषदोंका समय इस प्रकार लिखा है—

प्रथम मन्वन्तर—ईशोपनिषद ।

दूसरा मन्वन्तर—केन

तीसरा मन्वन्तर—कठ, प्रश्न ।

चौथा मन्वन्तर—मुंडक, माराडूक्य ।

पांचवां मन्वन्तर—ऐत्तरेय, ततिरीय ।

छठा मन्वन्तर—छान्दोग्य

सातवां मन्वन्तर—बृहदाररण्यक, तथा मनु-
स्मृतिका निर्माण समय
१, ८०, ०१००० वर्ष

ऊपरके लेखके लिये जब कोई आधार न मिला तो ऊपरके पांचों मन्वन्तरोंको लकीरमें घेर कर लिख दिया—"छठे मन्वन्तरकी तसनीफात" और शायद जब इसके लिये भी कोई ऐतिहासिक लेख-बद्ध प्रमाण न मिला तो "तारीख दुनिया" में उपनिषदोंके निर्माण काल पर कोई विस्तृत विचार ही न किया ।

पण्डित लेखरामने एक स्थानमें आर्य्यावर्त्त सम्बन्धी सब इतिहास ग्रन्थोंकी सूची लिखी थी और मेरे साथ मिलकर वह अङ्गरेजी, आर्य्य भाषा, उर्दू—तीनों भाषाओंमें एक प्रामाणिक भारतवर्षका इतिहास तय्यार कराना चाहते थे।

पं० लेखरामके छोड़े नोट विचित्र "चाउ चाउका मुरब्बा"

है। कहीं तोपोंके निर्माण कालका पता लगा कर उसका रामायणके कालसे मुकाबिला कहीं "खुदाकी हस्तीके सबूत" में नौ प्रबल युक्तियोंका खुलासा, कहीं दिल्लीके लाटके वर्णनसे आर्य्योंके शिल्पकारीकी प्रशंसा, कहीं कुरानकी आयतोंका पड़ताल, कहीं समयानुकूल प्रयोगके लिये उद्धृत कवितायें, कहीं फीरोजशाहके अत्याचारोंके प्रमाणकी फुलझड़ी कहीं महम्मदियोंके ७२ नहीं बल्कि ७८ फिरकोंकी सूची, कहीं सुकुलपन्थके फार्सी संस्कृत मिश्रित मूल मन्त्र, कहीं लाला साईं दास, लाला जीवन दास, लाला रघुनाथ साहाय, मुंशी दुर्गा प्रसाद, मुंशी केवल कृष्ण, थम्मनसिंह ठाकुर, लाला मुल्कराज भल्ला, हकीम बहाउद्दीन इत्यादिके बतलाये नुसखे साँपके काटेसे लेकर सन्तान उत्पत्ति तकके इलाजके लिये, और कहीं वेद शास्त्रोंके प्रमाणोंकी पञ्जिका—कहांतक लिखें, संसारमें ऐसा कोई विषय नहीं जिसका खोज करना लेखरामके कार्यको सीमासे बाहर समझा जा सकता।

तारीख-दुनियामें वर्तमान सृष्टिकी आयु (४, ३२, ००, ००, ०००) चार अर्ब बत्तीस करोड़ वर्ष लिखी है। इसके लिये प्रमाणमें अथर्ववेद, प्रपाठक ८, अनुवाक १, मन्त्र २१ पण्डित लेखरामने पेश किया है :—

शतं तेऽयुतं हायनान्द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृराम ॥

आर्य्य जनताका प्रायः यह निश्चय है कि पण्डित लेखराम वेद तथा अन्य शास्त्रोंके प्रमाण औरोंसे ढुंढ़वा कर लिखा करते

थे। यह बात कैसी निर्मूल है, इसको सिद्ध करनेके लिये मैं ऊपर लिखित अथर्ववेदके प्रमाण विषयमें श्रीपण्डित तुलसीराम स्वामी सामवेद भाष्यकारका पत्र देता हूं। उक्त पण्डितजी लिखते हैं :—

"सं० ३१०१, ता० २०-८-१९००

श्रीमन्महाशय! नमस्ते-आपके १८-८-१९०० के लेखानुसार यद्यपि पण्डित लेखराम बहुत बार मिले परन्तु केवल एक बारकी बात जीवन चरित्रमें लिखने योग्य है कि वे अपने विश्वासके ऐसे दृढ़ थे कि सन् ९० (कुम्भ १८९१ के अप्रैलमें था) कुम्भके मेले हरिद्वार पर आवश्यक होने पर मूल-वेदको प्रतिज्ञाके साथ खोजने लगे तो एक अथर्व (वेद) का मन्त्र तत्काल कल्प वर्ष संख्या परक ढूंढ़ लिया। यद्यपि संस्कृत नहीं जानते थे, (तथापि) वह मन्त्र पण्डितोंसे पूछा तो उसका वही तात्पर्य्य निकला।" उपनिषदोंको वेद-मूलक ही सिद्ध करनेके लिये उन्होंने बड़ा प्रयत्न किया था और उपनिषदोंमें जो मूल-वेदका भाग है उसे मोटे अक्षरोंमें छपवा कर यह दिखलानेका विचार था कि जैसे उपनिषद् वाक्योंको हटा लेनेसे गीताका कुछ नहीं बचता वैसे ही वेद मन्त्रोंकी प्रतीकें अलग करनेसे उपनिषद् समझमें नहीं आ सकतीं।

कहांतक लिखा जाय, सच्चे ब्राह्मणका यह लक्षण पण्डित लेखराममें कूट कूट कर भरा हुआ था। दूसरा लक्षण ब्राह्मण का यह है कि जिस धर्मका निर्णय स्वयं किया हो उसको

आदर्श धर्म प्रचारक थे।

संसारमें निष्कपट होकर फैलावे। इसी लिये आर्य्य-पथिककी मौखिक प्रचारमें धूम मची हुई थी। आर्य्य-समाजमें उन धर्म-प्रचारकोंकी संख्या अङ्गलियों पर गिनी जा सकती है जो लेखरामके समीप इस अंशमें पहुंच सकें। गृहस्थ होते हुए भी सन्यासकी तितिक्षा तथा धारणा हम उनके आचरणमें देखते हैं। विरोधी लोग प्रसिद्ध करते हैं कि पण्डित लेखराम बदजबान था। यद्यपि वह खण्डन सर्व मतोंका एक सा करते थे, परन्तु हिन्दुओं, जैनियों, सिक्खोंने उनकी कभी शिकायत नहीं की। इसका कारण तो यह हो सकता है कि यद्यपि इन मतोंके संशोधनके लिये इन मतावलम्बियोंको हिलाते थे तथापि आर्य्य-जातिके विरोधियोंके आक्रमणोंसे इनको भी बचानेका ठीका लेखरामने ही ले रक्खा था। एक बार मैं और पण्डित लेखराम इकट्ठे दिल्लीसे लौट रहे थे कि मार्ग में सनातन धर्म-सभाके पण्डित दीनदयालुजी मिल गये। बातचीत आरम्भ होने पर पण्डित लेखरामने कहा—"आप हमें कोसनेके लिये तो बड़े बहादुर हो लेकिन इसलाम आपके धर्मकी जड़ें खोद रहा है और आप चुप बैठे हो"। पण्डित दीनदयालुजीने उत्तर दिया—"यह काम तो हम सबने आपके सपुर्द कर छोड़ा है; जबतक आर्य्य-मुसाफिर जीवित हैं तबतक हमारे धर्मको जड़ कौन खोद सकता है।"

यह तो ठीक है कि हिन्दू, जैन, सिक्खादि तो उन्हें अपना समझ कर उनके कटु वचनोंका सहन कर लेते थे, परन्तु यदि वह कटु भाषी होते तो मुसलमान जनता भी क्यों उनके व्याख्यानों पर मोहित होती। असल बात यह थी कि मुहम्मदी मौलवियोंने उनके पतेको कहने और लिखने पर, उत्तर देनेको शक्ति न रखते हुए, उन्हें "बदजबान" प्रसिद्ध कर रक्खा था। परन्तु जब ऐसी बहकाई हुई भी मुसलमान जनता लेखरामसे अत्यन्त परिचय करती तो उनपर आर्य्य-पथिकका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता।

जहां दूसरे वक्ताओंके एक घन्टेके व्याख्यानके पश्चात् श्रोता घबरा जाते हैं वहां तीन घण्टोंतक आर्य्य-पथिककी वक्तृता सुननेके पश्चात् भी फिर एक घण्टा बैठनेको तय्यार रहते थे। इसका कारण उनका विस्तृत ऐतिहासिक ज्ञान तो था हो परन्तु उनकी वाणी में हास्य रस और हाजिर जवाबी ऐसी मनोहर थी कि सुननेवाला कभी उकता नहीं सकता था।

हाजिर जवाबीमें कमाल

जो पुरुष किसी बड़े काममें कृतकार्य होना चाहें उनके लिये "हाजिर जवाबी" एक अपूर्व सम्मिलित अस्त्र शस्त्र है। जिस बातको दलीलसे काटनेमें घण्टोंका नाश हो उस बातका "हाजिर जवाबी" मिनटोंमें सफाया बोल देती है।

लेखराम बचपनसे ही हाजिर जवाबीके लिये प्रसिद्ध थे।

मदरसेमें पहले साल ही परीक्षक इनकी हाजिर जबाबीसे प्रसन्न हुए थे। इनके पहले उस्ताद तुलसीरामजी इसी हाजिर जवाबी से तङ्ग थे, जिसके कारण इनकी अकलको शिकायत किया करते। इस कहानीमें भी कई स्थानोंपर मैंने उनकी हाजिर जवाबीके नमूने दिये हैं। परन्तु उनकी हाजिर जवाबीको पढ़कर ऐसा आनन्द आता है और हमारे चरित्र नायकके इतने गुणोंका पता लगता है कि उनमेंसे कुछ औरका उल्लेख करना मनोरञ्जक ही न होगा प्रत्युत शिक्षा दायक भी सिद्ध होगा।

हरद्वारमें संवत् १९४८ के कुम्भ पर स्वामी आत्मानन्दजीने संयुक्त प्रान्तके छूतछात वाले उपदेशकोंका चौका स्थिर रखनेके लिये यह प्रबन्ध किया कि पञ्जाबियोंसे पहले वह चौकेमें भोजन कर लिया करें। पण्डित लेखराम उनसे भी पहले भोजनके लिये जा बैठे। तब पञ्जाबियोंका अपवित्र किया हुआ चौका फिरसे लगाया गया। दूसरे दिन भी पण्डित लेखराम पाचक (रसोइए) के साथ वाली क्यारीमें जा बैठे, परन्तु जब रोटीको बिना अधिक सेके उसने चूल्हेमें से खींचा तो आपने उसकी पीठपर हाथ ठोंका और उसके हाथसे चिमटा लेकर उसे रोटी सेंकना बताने लगे। अब तो संयुक्त प्रान्तीय दलमें खलबली मच गई, परन्तु कुछ संयुक्त प्रान्ती उसी समय आर्य्य-पथिकके चेले बन गये और सखरी निखरीके भेद भावको उड़ा दिया।

दिल्लीके जलसे पर एक आदमी केशरका चन्दन सब

भाइयोंके माथे पर लगाता आता था। जब आर्य्य-पथिकके समीप आया तो उन्होंने डांट कर कहा—"मेरे सिरमें दर्द नहीं है।" उत्तर मिला—"महाराज! सुगन्धिके लिये लगाते हैं।" आर्य्य-पथिकने दाहिने हाथका पृष्ठ भाग सामने करके कहा—"तो यहां लगाओ" और जब वहां चन्दन लगाया गया तो नाकके पास ले जाकर सूंघने लगे; जिस पर सब उपस्थित सज्जन मुसकिरा दिये।

एक आर्य्य सज्जनने भोजनके पश्चात् सब आर्य्य भाइयों को ताम्बूल (पान) बांटे। जब आर्य्य-पथिकके सामने पान-दान पेश किया तो बोले—"देखते नहीं हो मैं मनुष्य हूं, बकरा नहीं हूं कि पत्ते खाऊं।" गुजरात आर्य्य समाजमें आर्य्य-पथिकका व्याख्यान हो रहा था। मुसलमानोंके "हराम, हलाल"के मसले पर बोल रहे थे। समाप्ति पर प्रश्नोत्तरका समय दिया गया। दो मौलवियोंको तो योंही झिञ्झोड़ दिया परन्तु अन्तमें मौलवी शाकरहुसैन उठे जिनकी ऋषि दयानन्दके साथ भी पुनर्जन्म पर बातचीत हो चुकी थी। मौलवी साहेब ने कहा—"पण्डित साहेब! आपने जो हमारे हराम हलालके मसलेपर एतराज (आक्षेप) किये हैं; क्या आपने यह भी सोचा है कि हमारे मजहबमें चुहिया हराम है। क्या वह भी इसी लिये हराम करार दी गई कि जबरदस्त थी?" आर्य्य-पथिकने पूछा कि मौलवी साहेब सुन्नी हैं वा शिया। यह उत्तर पाने पर कि मौलवी साहेब शिया हैं पण्डित लेखरामने

उत्तर दिया—"मौलवी साहब ! मुझे आपका कथन सुनकर हंसी आती है। आ शिया होकर चूहेकी बुजुर्गी और जबर-दस्तीसे इनकार करते हैं। यही नामुराद चूहा था जिसने मैदान कर्बलामें सब पानीकी मशकें काट दीं, और बेचारे इमामहुसैनको प्यासा मरवाया। अगर ऐसे दो तीन और जबरदस्त पैदा हो जायं तो अरब और ईरानमें कई कर्बलाकी सी घटनायें हो जायं।" श्रोतागण खिलखिला कर हंस पड़े और मौलवी साहेब चुप हो गये।

लेखनीका प्रवाह

धर्म-वीर आर्य्य-पथिकने अपने नामको सार्थक करनेके लिये विचित्र लेखनी चलाई। लेखराम सचमुच लेखकी लहर चला देता था। संवत् १९४१ में लेखरामने दासत्वसे मुक्ति लाभ की। सम्वत् १९५३ के अन्तमें उनका देहान्त हुआ। १२ बर्षोंमें उन्होंने जहां लाखों नरनारी तक वैदिक धर्मका सन्देशा पहुंचाया, और सैकड़ों छोटे बड़े लेख लिख कर आर्य्य गजट फीरोजपुर, सद्धर्म्मप्रचारक तथा अन्य समाचार पत्रोंमें छपवाये सैकड़ों शास्त्रार्थ किये और सहस्रोंको धर्मसे पतित होते होते बचाया, वहां ३३ छोटी बड़ी पुस्तकें तय्यार कीं जिनके छपे हुए, सत्यार्थ-प्रकाशके परिमाणके, पृष्ठ २९०० से कम न होंगे और इसके साथ ही ऋषि दयानन्दके जीवन चरित्रके लिये न केवल ८७९ बड़े पृष्ठोंके लिये लेख तय्यार करके ही छोड़ गये प्रत्युत

पुस्तकको पूर्त्ति के लिये भी इतने नोटोंका कोष जमा कर दिया कि उन सबसे पूरा काम लेना भी कठिन हो गया।

एक विशेष कापी मिली है जिसका शीर्षक है—"आर्य्य-समाजकी बीस साला रिपोर्ट।" इसके अन्दर १४ बड़े बड़े विषयोंको सूची है जिससे ज्ञात होता है कि जो कार्य्य "आर्य्य डाइरेक्टरी"का आज कुछ कुछ होने लगा है उसको आर्य्य-पथिक वर्षों पहले पूर्ण रीतिसे करनेका विचार कर रहे थे।

भविष्य पुराणकी पड़ताल मैंने उन्हींकी प्रेरणा पर आरम्भ की थी और विचार यह था कि हम दोनों १८ पुराणों तथा १८ ही उप पुराणोंकी पड़तालका परिणाम जन साधारण के आगे रक्खेंगे। ऋषि जीवनका चरित्र छपवानेके पश्चात् उनका विचार अरब आदि देशोंमें प्रचारके लिये जानेका था। इसके लिये उन्होंने आर्य्या-समाजके दस नियमोंका भाष्य अरबीमें लिख लिया था जो मेरे पास मौजूद है और १६ लघु पुस्तकोंकी सूची भी बना ली थी जिन्हें अरबीमें छपवा कर वह साथ ले जाना चाहते थे। यह लेखनीका प्रवाह बड़ा ही प्रबल है। परन्तु कहा यह जाता है कि धर्म्म-वीर पण्डित लेखरामकी "तहरीर सख़्त" थी। यदि इसका मतलब यह है कि उनकी लेखनी ओजस्विनी और बलवती थी तो मुझे भी माननेमें कोई सङ्कोच नहीं, क्योंकि जिस लेखका आधार सचाई पर हो और जो केवल अपने मन्तव्योंकी रक्षार्थ लिखे गये हों उनका शक्ति शाली होना आवश्यक ही है। परन्तु यदि आक्षेपकोंकी यह

प्रतिज्ञा है कि पण्डित लेखरामकी लेख शैली महम्मदी तथा अन्य आर्य्य-समाजके आक्षेपकोंकी न्याईं अश्लील और असभ्य होती थी तो यह कहनेमें कोई सङ्कोच नहीं कि ऐसी प्रतिज्ञा निर्मूल और झूठी है। मेरी तो यहांतक प्रतिज्ञा है कि पण्डित लेखराम अपने लेखोंमें कभी मर्यादाका भी उल्लङ्घन नहीं करते थे ; तभी तो जब जब न्यायालयोंमें उनकी पुस्तकें पेश हुईं तब तब ही उनके विरोधियोंको पराजित होना पड़ा। महम्मदी मौलवियोंको उन्होंने युक्ति, प्रमाण तथा सत्यान्दोलनसे ऐसा परास्त कर दिया था कि उन्होंने अमली तौर पर अपनी हार मान ली और जिस लेखनीको उनकी सम्मिलित शक्ति जवाबी लेखों तथा न्यायालयोंकी सहायतासे भी बन्द न करा सकी उसे कायर छरीके द्वारा बन्द करा दिया।



पन्द्रहवां अध्याय

महम्मदियोंके आरम्भिक

आक्रमण



(१) सबसे पहले १८८७ ई० में अमृतसरमें "तकजीब" और "नुसखा" के छपने पर मुसलमानोंने बड़ी हल चल मचाई परन्तु वकीलोंने नालिश की सम्मति न दी।

(२) सबसे पहला वास्तविक आक्रमण मिर्जापुरके मुसलमानोंने किया। शुक्रुल्ला नामी व्यक्तिको ओरसे "तकजीब बुराहीन अहमदिया" तथा "नुसखा-खब्त अहमदिया" को मुसलमानोंका दिल दुखानेवाली किताबें करार देकर मजिस्टेट जिलाके यहां अर्जी दी। यह अभियोग बिना पण्डित लेखरामको बुलाये खारिज हो गया।

(३) प्रयागमें भी ऐसी नालिश हुई जो विना अभियुक्त पुरुषोंको बुलाये खारिज हुई।

(४) फिर लाहौरके मुसलमानोंने सं० १८९३ ई० के आरम्भमें "जिहाद" तथा अन्य पुस्तकोंको लेकर, जो अरोड़वंश प्रेसमें छपी थीं, और उनमें अश्लील लेख बतला कर, नालिश

की। इस मुकद्दमेमें लाला लाजपतरायजीने बड़ी पैरवी की और मुकद्दमा खारिज हुआ।

(५) फिर मेरठके मौलवियोंने भी बड़े जलसे किये और महम्मदी जगत्को भड़काया, परन्तु वहां भी नालिश करनेको सम्मति वकीलोंने न दी।

(६) दिल्लीमें नालिश की गई। यह नालिश २८ अगस्त १८९६ को कप्तान डेविस साहब डिपुटी कमिश्नर देहलीकी अदालतमें पेश हुई। डेविस साहबने वे सब पुस्तकें मंगाकर सुनीं जिनके उत्तरमें पण्डित लेखरामने पुस्तकें लिखी थीं और बिना ग्रन्थ कर्ता तथा छापनेवालेको बुलाये नालिश खारिज कर दी।

तब मुसलमानोंके बड़े पुर जोश जलसे हुए, बहुत सा धन एकत्र हुआ और कप्तान डेविस साहेबके हुकुमकी निगरानी की गई। वह निगरानी फिर १० सितम्बर १८९६ को खारिज हुई। इस अन्तिम फैसलेमें साहब मजिस्ट्रेटने लिखा—"यह मुकद्दमा मजहबी बुनियाद पर उठाया गया है। सारे शहरमें जलसे किये गये और सब प्रान्तोंसे मुसलमान बुलाये गये हैं जिससे आज न्यायालयमें जमा होकर अपनी सहानुभूति प्रकट करें। ....

"इस स्थानमें यह बतलाना आवश्यक है कि पण्डित लेखराम आर्य्य अग्रणियोंमें से एक हैं............अब इस प्रश्नके विषयमें कि क्या यह पुस्तक अश्लील है वा नहीं, मैंने वे सब विशेष विशेष वाक्य अवलोकन किये जिन्हें अश्लील बतलाया

जाता है। यह बात विचारणीय है कि इनमें बहुत अधिक तो ऐसे वाक्य हैं जो कि अश्लील कहे ही नहीं जा सकते। दूसरोंमें प्रश्न यह है कि शब्दोंका किस प्रकारसे प्रयोग हुआ है......मेरी सम्मतिमें पुस्तकके शब्द इन (अश्लील वा असभ्य) अर्थोंमें नहीं लिये जा सकते......मैं निश्चय करता हूं कि कोई भी जुर्म (अपराध) लेखराम......के विरुद्ध प्रकट नहीं किया गया और इस लिये अभियोगको "जाबिता फौजदारी" की धारा २०३ के अनुसार खारिज करता हूं।"

(७) दिल्लीसे निराश होकर मुसलमानोंने बम्बईमें बड़ी हलचल मचाई और दिसम्बर, १८९६ में वहां नया अभियोग चलाया। जब वह अभियोग भी बिना पण्डित लेखरामको बुलाये खारिज हो गया तब—

(८) पेशावरमें धर्म वीर लेखराम रूपी ज्वलन्त शक्तिको जो इन अदूर दर्शी दृष्टियोंमें इसलामकी जड़ोंको खोखला कर रही थी, सदाके लिये शान्त करनेका यत्न सोचा गया। पेशावरमें दिल्लीका मुकदमा खारिज होते ही आग भड़की थी। यद्यपि पहले नालिशका ही विचार था, परन्तु जब बम्बईके अभियोग का भी समाप्तिका समाचार आया तो फिर पेशावर, बम्बई, अमृतसर, पटना इत्यादि सब नगरोंसे यह समाचार आने लगे कि मुसलमान पण्डित लेखरामको मरवा देनेके मन्सूबे बांध रहे हैं।

आर्य्य भाइयोंने विविध स्थानोंसे सचेत करनेके लिये

लाहौर आर्य्य-समाजको पत्र भेजे परन्तु, लेखरामकी रक्षा कौन कर सकता था। धर्म वीरने डरका शब्द ही अपने कोषसे निकाल छोड़ा था, वे मनुष्योंकी धमकियोंकी क्या परवा करते थे।



सोलहवां अध्याय

अन्तिम जवनिका

धर्म पर बलिदान



फेब्रुवरी, १८९७के मध्य भागमें एक काला, गंठे हुए बदन का भयानक, नाटा युवक दयानन्द कालिजमें पण्डित लेखराम को पूछता गया; वहांसे पता लेकर वह पण्डित लेखरामके निवास स्थान पर पहुंचा और पण्डितजीसे निवेदन किया कि वह असलमें हिन्दू था, दो वर्षों से मुसलमान हो गया है और अब शुद्धिके लिये आर्य्य-पथिककी शरणमें आ गया है। पण्डित लेखरामने प्रतिज्ञा की कि वह उस पतितको शुद्ध कर लेंगे।

पण्डित लेखरामको कई स्थानोंके आर्य्य-भाई सचेत कर चुके थे कि महम्मदी लोग उनके मरवा डालनेकी फिक्रमें लगे हुए हैं, परन्तु ऐसी चेतावनियोंका पण्डित लेखराम पर उलटा असर हुआ करता था; उन्होंने इस अनजाने व्यक्तिके विषयमें पता भी न लगाया कि वह कौन और कहांसे आया है, और न उस हीसे कुछ पूछा। कुछ आर्य्य भाइयोंने पता लगाना चाहा जिनसे उसने अपने आपको बङ्गाली बतलाया, परन्तु प्रत्येक

८ शब्दोंमें से केवल दो बङ्गाली शब्द समझ सकता था। जिसने उसकी शकल देखी, बिना सोचे कह दिया कि वह बूचड़ है। अनुमान होता था कि वह पटना प्रान्तका रहनेवाला है।

यह पटनवी बूचड़ छायावत् पण्डित लेखरामके साथ फिरता रहा। दो तीन वार पण्डितजीके घरमें रोटी खाता भी देखा गया। दिनको वह पण्डितजीके साथ रहता था, परन्तु यह किसीको पता न था कि रात कहां काटता है। धर्म-वीरके बलिदानके पश्चात् पुलिसके आन्दोलनके समय पता लगा था कि वह रातको उस स्थानमें सोता था जहां कि लेखरामके बधके मन्सूबे गांठे जाते थे।

१ मार्चको पण्डित लेखराम सभाकी आज्ञानुसार मुलतान पहुंचे जहां ४ मार्च तक ४ व्याख्यान दिये। सभाने सक्खर जानेके लिये तार भेजा परन्तु प्लेगके कारण मुलतान समाजके सभासदोंने वहां जानेसे रोक लिया; उनको क्या मालूम था कि वे सन्दिग्ध कष्टसे बचा कर अपने वीर धर्मोपदेशकको सीधा मौतके मुंहमें भेज रहे हैं। फिर पण्डित लेखराम मुजफ्फर-गढ़के लिये तय्यार हुए, परन्तु न जाने क्यों सीधे लाहौरको लाट पड़े जहां वह ६ मार्चकी दोपहरको पहुंच गये।

४ मार्चको ईदका दिन था। इससे बढ़कर, महम्मदी मत जड़ खोखली करनेवालेको, बध करनेका श्रेष्ठ दिन कब मिल सकता था। उस दिन बूचड़ घातकने आर्य्य-पथिकके निवास-स्थान, आर्य्य-प्रतिनिधि सभाके कार्यालय तथा रेलवे

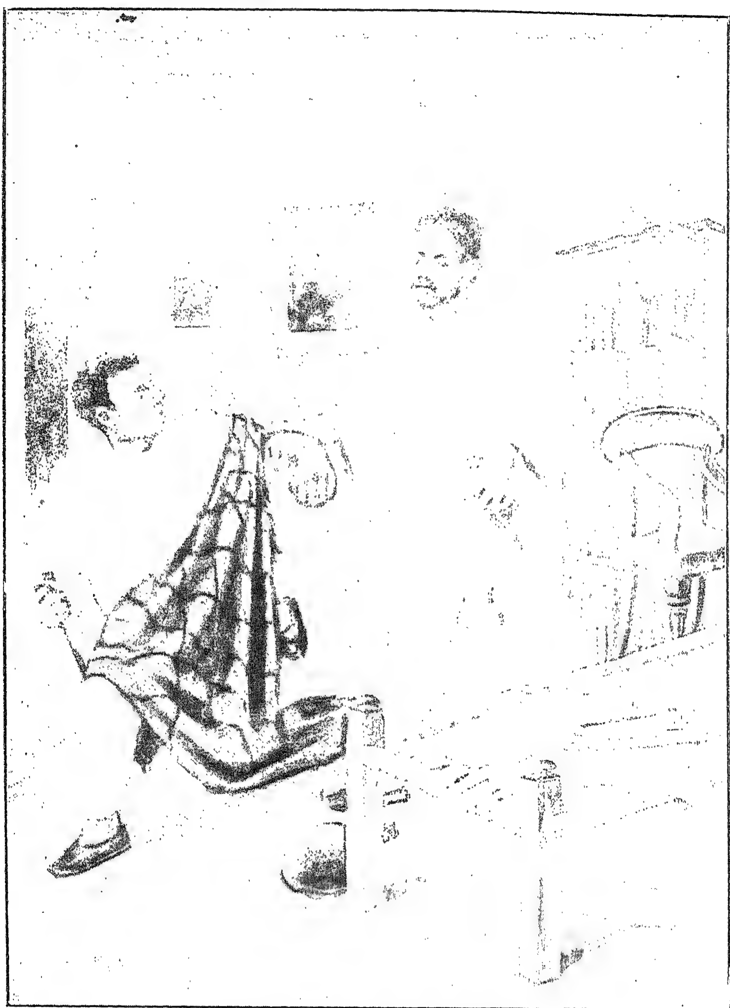
स्टेशन पर १८ वा १९ चक्कर काटे। ६ मार्च के प्रातः फिर पण्डितजाके घर पहुंचा, वह अभी लौटे न थे; फिर सभाके कार्यालयमें गया परन्तु वहांसे भी निराश लौटा।

२ बजे पण्डित लेखरामके साथ सभाके कार्यालयमें फिर पहुंचा। गलीकी ओर मुंह करके खिड़कीमें बैठ गया। वह उस दिन थूकता बहुत था। सभाके मुनीमने कहा—"पण्डितजी! यह स्थान खराब करता है।" भोले आर्य्य-पथिक बोले—"भाई! बैठा रहने दो; तुम्हारा क्या लेता है।"

उस दिन नियम विरुद्ध सारा शरीर कम्बलसे ढके हुए था। सभासे चलते समय कांपा। पण्डितजीने पूछा कि ज्वर तो नहीं है। धीरेसे बोला—"हां और कुछ दर्द भी है।" पण्डित लेखराम उसको इलाजके लिये डाक्टर विष्णुदासके पास ले गये। नाड़ी देखकर डाक्टरने कहा—"बुखार वुखार तो मालूम नहीं होता, इसका खून जोशमें है और थकान मालूम होती है, यदि दर्द है तो ब्लिस्टर लगा दिया जावे।" घातक ने कहा कि लगानेकी नहीं, कोई पीनेकी दवा दीजिये। यदि उस समय कम्बल उतार, उसके दवाई लगवानेका विचार होता तो कमरमें लगी छुरी पकड़ी जाती। परन्तु आर्य्य-पथिक तो स्वयं बलिदानकी तय्यारी कर रहे थे, सिफारिश की कि पीनेको दवाई ही दी जावे। डाक्टरने कहा कोई शरबत पी लेवे। न जाने कहांसे शरबत पिलवा कर बजाजकी दूकान पर गये और इसी घातकके हाथ एक थान माताजीको दिखाने

भेजा। बजाजने घातकके चले जानेपर कहा—"पण्डितजी ! क्या भयानक आदमी साथ लिये फिरते हो।" धर्म वीर, शुद्धिकी धुनमें मस्त, उत्तर देते हैं—"भाई। ऐसा मत कहो; यह धर्मात्मा आदमी है, शुद्ध होने आया है।" घर जाकर पण्डितजी जिस खुले बरामदेमें काम करते थे वहां चारपाई पर बैठकर जीवन चरित्र सम्बन्धी काम करने लगे। उनकी बाईं ओर कुर्सी पर घातक बैठ गया। ६ बजे लाला जीवनदास और लाला केदारनाथजी आये और अगले रविवारके लिये व्याख्यानकी प्रतिज्ञा कराके चले गये। घातक बैठा रहा। माताजी रसोईमें थीं, धर्म-पत्नीजी दूसरे कमरेमें अलग पढ़ रही थीं। तब पण्डित लेखरामने घातकको कहा :—अब देर हो गई है, भाई ! तुम भी आराम करो।" घातक न हिला। दस मिनटोंके पीछे माताजीने चौकेसे कहा—"पुत्र लेखराम, तेल नहीं आया।" पण्डित लेखराम उस समय ऋषि दयानन्दकी मृत्युका अन्तिम दृश्य खींच रहे थे; पत्र वह रख दिये और चारपाई परसे उस ओर उतर कर जिधर घातक बैठा था, अपने अभ्यासानुसार आंखें बन्द कर और दोनों बाहें ऊपर उठाकर जोरसे अङ्गड़ाई लेते हुए कहा—"ओफ्-फोह ! भूल गया।"

इस समय आर्य्य-पथिक ऐसे सीना तानके खड़े हुए कि जिस समयकी घातमें दुष्ट घातक प्रतीक्षा कर रहा था, वह आन पहुंचा। एक दमसे अभ्यस्त हाथने छुरी पेटके अन्दर सेड़यों



पण्डित लेखराम और घातक ।

कर इस प्रकार घुसा दी कि आठ, दस घाव अन्दर आये और अन्तड़ियां बाहर निकल पड़ीं।

परन्तु क्या आर्य्य-पथिक इस निष्ठुर, पिशाचके आक्रमणसे विवश होकर गिर पड़े और अपनी चिल्लाहटसे महल्ले को जगा दिया ? वहां न कोई हृदय वेधक आर्तनाद ही सुनाई दिया और न कोई चिल्लाहटकी आवाज माता और धर्म-पत्नीने सुनी। यदि धर्म्म वीरमें यह निर्बलता होती तो लोग दौड़ पड़ते और घातक उसी समय पकड़ा जाता। परन्तु वहां पतितों पर दयाका भाव अभीतक स्थिर था जिसने घातकको स्पष्ट बचा दिया।

अन्तड़ियोंका बाहर निकलना था कि बायें हाथसे बाहर निकली हुई अन्तड़ियोंको सम्भाल दाहने हाथको घातकके हाथ पर डाल दिया। साधारण पुरुष अपने रक्तके दर्शन मात्रसे होश गंवा बैठता है, परन्तु वीर लेखराम सिंह पुरुष था। सिंहके अन्दर चाहे रक्तकी नदी बह जाय उसकी सावधानतामें भेद नहीं आता। पहली झपटमें लड़ते भिड़ते सीढ़ीके पास जा पहुंचे और घातकके हाथसे छुरी छीन ली। घातकके दो हाथ और धर्म-वीरका केवल एक, और फिर रक्तकी धारा बह रही; सम्भव था कि घातक फिर छुरी छीन ले कि लक्ष्मी देवीने, झूठी लोक लज्जाको परे फेंक कर, हाथ जा मारा और छुरी धर्म-वीरके हाथमें रह गई। लक्ष्मी देवीने इस डरसे कि कहीं घातक फिर आक्रमण न करे धर्म-वीरको रसोईकी ओर खींचा

परन्तु घातकके दुष्ट हृदयको इसपर भी सन्तोष न हुआ और वह खूनी आंखोंसे डराता हुआ फिर पीछे दौड़ने लगा, कि माताजीने दोनों हाथोंसे उसे पकड़ लिया। इस समय घातक भी हांपने लग गया था और उसने पास पड़ा एक बेलना झपट कर उठा माताजीके दो तीन चोटें लगाईं। वह अचेत होकर भूमि पर गिर पड़ीं और घातक सीढ़ियोंसे उतर कर न जाने कहां लुप्त हो गया।

कुछ पलोंके पश्चात् लाला जावनदासजी बाहरसे लौटे तो बड़ा हृदय विदारक दृश्य देखा। चारपाई पर धर्म-वीर सांघ लेटे हुए है; अन्तड़ियां एक हाथसे दबाये हुए हैं और रक्तका स्रोत बह रहा है। वृद्ध जीवनदासजी घबरा गये। फिर और लोग आ गये। परन्तु आर्य्य सिंहके मुख पर कोई मलिनता न थी; पूछने पर उसी सरल परन्तु वीरता-पूर्ण-वाणीसे उत्तर दिया—"वहा दुष्ट, जो शुद्ध होने आया था, मार गया।" फिर बोले—"डाक्टरको बुलाओ, शीघ्र बुलाओ।" चारों ओर समाचार फैल गया, डाक्टर तथा डाक्टरीके विद्यार्थी जमा हो गये। चारपाई पर धर्म-वीरको लेटा कर हस्पतालकी ओर ले चले। मैं उस दिन अकस्मात् ४ बजे शामकी गाड़ीमें लाहौर पहुंचा था, समाचार पाते ही धर्म-वीरके निवास-स्थान को ओर चल दिया। आगे गलीके मुहाने पर "शहीदकी सवारी" आती हुई मिली और मैं कलेजा थाम साथ हो लिया।

हस्पताल पहुंचते ही आर्य्य वीरको मेज पर लिटाया गया। दुःखित मनको संभाल कर मैं आगे बढ़ा। उस समय अन्तड़ियां हाउससर्जनके हाथमें थीं। मुझे देखते ही दोनों हाथ, जो सिरके नीचे थे, उठा लिये और हाथ जोड़े। मेरी अश्रुधारा निकलनेको ही थी कि प्यारे लेखरामने अपनी साधारण वीर-वाणीसे कहा—"नमस्ते लालाजी, आप भी आ गये। इस साधारण दृश्यने मेरा दिल दहला दिया। अन्तड़ियोंकी ओर देखकर विश्वास नहीं आता था कि मैं अपने प्यारे मित्र लेखरामसे बात कर रहा हूं। ऐसा प्रतीत होता था कि मानों शिमलेके वार्षिकोत्सवसे लौट कर मुझे नमस्ते कर रहे हैं फिर बोले—"लालाजी बेअदबियां माफ़ करना" मैंने बल पूर्वक रोने धोनेको रोक कर कहा—"पण्डितजी! आप तो परमात्मा पर पक्का विश्वास रखनेवाले हैं, प्रत्येक संङ्कटमें उसीका आश्रय ढूंढ़ा करते है; उसका ध्यान कीजिये। वह वीर-वाणी उत्तर देती है—"अच्छा तो शायद मैं अच्छा हो जाऊंगा, परन्तु लालाजी! मेरे अपराध क्षमा करना।" यह कहा और वेदमन्त्रका पाठ करने लगे।

"ओ३म्। विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रन्तन्न आसुव।"

मरते दम तक इस मन्त्र तथा गायत्री मन्त्रका जप करते रहे। बीच बीचमें "परमेश्वर तुम महान् हो, परम पिता इत्यादि" शब्द बोलते रहे।

छुरी लगनेसे पूरे पौने दो घण्टोंके पश्चात् डाक्टर पेरी साहेब आये। फिर बराबर दो घण्टों तक डाक्टर महोदयकी कटी हुई आंतोंको सीते रहे। एक स्थानकी आंत कट कर दो टुकड़े हो गई थी, आठ बड़े २ घाव और बहुतसे छोटे २ घाव भी थे। डाक्टर पेरी हैरान थे कि दो घण्टों तक जिसके अन्दरसे रक्त खुला बहता रहा हो वह कैसे जीवित रह सकता है। इस लिये उन्होंने कहा कि साधारण अवस्थामें तो ऐसे घाव लगने पर कोई मनुष्य बच नहीं सकता, परन्तु जिसको अबतक यह चेतना शक्ति है वह शायद बच जावे। यदि यह बच गया तो Miracle (चमत्कार) ही समझना चाहिये।

१॥ बजे रात तक बराबर सचेत थे। केवल परमेश्वरके नामका जप था; न घर वालोंकी चिन्ता और न घातक पर अप्रसन्नता और न मौतका डर। यदि चिन्ता थी तो आर्य्य समाजकी ओर यदि ध्यान था तो उस महा-यज्ञकी ओर जो ऋषि दयानन्द रच गये थे। धर्मवीरने न तो माता और धर्म पत्नीकी चिन्ता की क्योंकि उनको विश्वास था कि परमेश्वर उनका सहायक है और नहीं घातकका पता लगानेको कहा क्योंकि जिस वैदिक धर्मके वह सच्चे सेवक थे वह बदला लेने को शिक्षा नहीं देता। अन्तिम आदेश अपने सहधर्मियोंको यह दिया कि—

"आर्य्य समाज से लेख का काम बन्द नहीं होना चाहिये।"

दो बजेके करीब लेखरामका तौर बदल गया। दो बार जोरसे हाथ हिलाये और ५ मिनटोंमें हाथ सीधे करके सदाकी नींद सो गये।

पौई फटते ही धर्मवीरकी मौतका समाचार विद्युतवत् सारे लाहौर नगरमें फैल गया। क्या हिन्दू, क्या जैनी, क्या ब्राह्मो, क्या सिक्ख सब दुःखी प्रतीत होते थे। अपने प्यारेसे प्यारे बच्चेकी मौत पर इतना कष्ट न हुआ होगा जो इस समय आर्य सन्तान मात्रको लेखरामसे बधका समाचार सुन कर हुआ। सबने छोटे छोटे विरोधोंको भुला दिया। दस बजेके अनुमान धर्मवीरके मृतक शरीर वाले कमरेके सामनेका मैदान आर्य सन्तानसे भर गया। वे लोग, जिन्होंने आर्य मन्दिरमें कभी पैर भी नहीं रखा था, इस जन-समूहमें दिखलाई देने लगे। सिविल-सर्जनने बड़ी सहानुभूतिकी दृष्टिसे किसी मुसलमानको मृतक शरीरके पास फटकने न दिया और दस मिनिटमें दो घण्टोंका काम करके लेखरामका जो कुछ बचा था हम लोगोंके हवाले करके चल दिये।

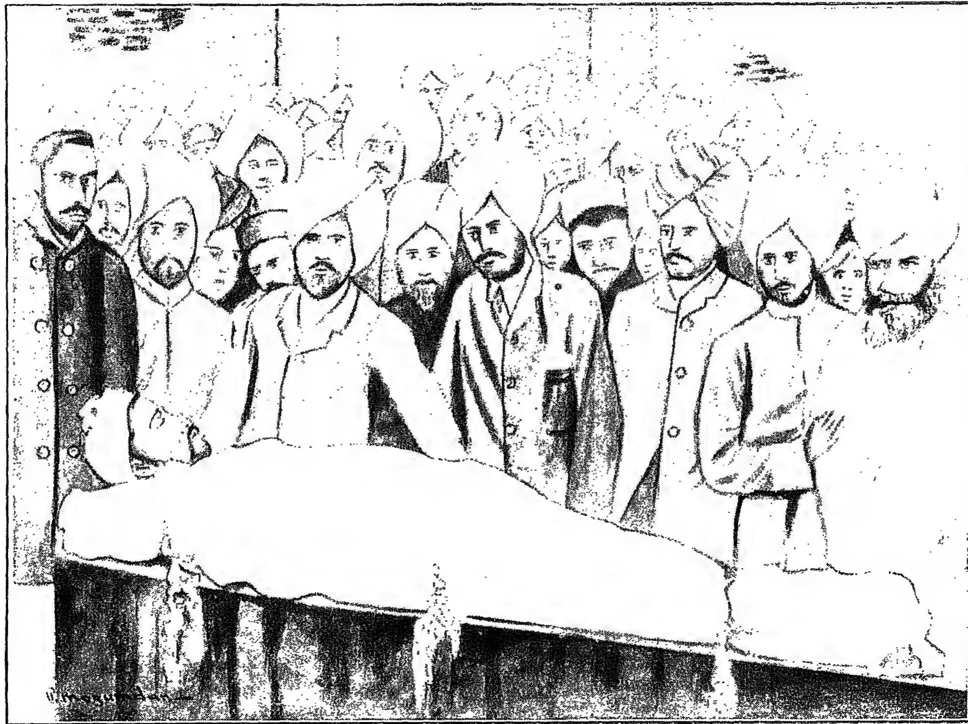
अन्दर जाकर देखा तो आर्य-पथिकको सदाका यात्री पाया, परन्तु फिर भी स्थिर विछोड़ेका निश्चय न हुआ। आंख मुंदी हुई परन्तु मुखमें कोई परिवर्तन नहीं; मानो लेटे हुए सन्ध्या कर रहे हैं। वही हृष्ट पुष्ट शरीर, वही विशाल छाती कुछ भी भेद न था। अश्रुधारा बहाते हुए सब भाइयोंने प्रेम पूर्वक वस्त्र पहनाये। बाहर अर्थी लाते ही सारा शरीर श्वेत

पुष्पावलीसे ढांपा गया। कैमरा (Camera) तय्यार था, मुंह खोलकर अन्तिम चित्र लिया गया। इस समय दो सहस्र पुरुष अन्तिम दर्शनके लिये खड़े थे।

अर्थी उठाई गई और शहीदकी सवारी सीधी अनारकलीमें पहुंची। थोड़ी ही देरमें २० सहस्रका तांता साथ था। यहां माता भी आ पहुंची जिसका विलाप सुन कर २० सहस्र आंखों-से नदियें बहने लगीं। एक युवक अचेत होकर गिर पड़ा।

अर्थीने शहरमें प्रवेश किया। प्रत्येक स्थानमें आर्य्यजातिकी देवियोंके नीचे छतें फटी पड़ती थीं। प्रत्येक देवीको ऐसा दुःख था जैसा उनका कोई प्यारा बच्चा सदाके लिये जुदा हो गया हो। वे लोग जो कभी अपनी दूकानसे हिलकर किसी सभा सुसाइटीमें नहीं गये, गुलाब जलके कन्टर अर्थी पर बहा रहे थे। किसी किसी स्थान पर तीस तीस हजारकी भीड़ हो जाती थी। फूल बेचने वालोंने मुंह मांगे दाम लिये, भूमि पुष्प वर्षासे रंगी पड़ी थी। अन्तको सवारी नगरसे बाहर निकली और वेद मन्त्रोंका उच्चारण करते तथा वैराग्यके भजन गाते सात सहस्रसे अधिक भाई श्मशान भूमि तक पहुंचे। ज्ञात होता था कि चिरकालसे सोई हुई आर्य जाति जाग उठी है और धर्म पर सर्वस्व न्यौछावर करने वालोंका सत्कार करना सीखने लगी है।

श्मशानमें अर्थीको रक्खा गया और फिर अन्तिम दर्शनकी अभिलाषी हुई। पढ़े लिखे और अनपढ़, राव और रङ्क सबने



पण्डित लेखरामजी मृत्युशय्यापर ।

दर्शन किये। एक भक्ति-रससे भरा भजन गाया गया और उपस्थित सज्जनोंकी शान्तिके लिये ईश्वर प्रार्थना हुई। मृतक शरीरका वेद मन्त्रोंकी आहुतियोंसे दाह किया गया और जब वह बहु मूल्य शरीर केवल एक भस्मकी ढेरी रह गया तो सब भाई घरोंको लौटे।

उस समय आर्य्य-धर्म रूपी देवीका आर्तनाद स्पष्ट सुनाई देता था—

"हा! वीर लेखराम, पुत्र! क्या तुम सदाके लिये मेरी सेवासे जुदे होते हो?"

इस प्रश्नका उत्तर मेरे अन्दरसे निकला। मैंने श्रद्धापूर्वक मन ही मनमें उत्तर दिया—"देवी! धर्म-वीरके रक्तके एक एक

उत्पन्न होगा और वे सब तुम्हारी सेवा करेंगे।" और सचमुच उन रक्त बिन्दुओंने वीर प्रचारक उत्पन्न किये और सोमनाथ, वजीर चन्द्र, मथुरादास, तुलसी-राम, सन्तराम, योगेन्द्रपाल, जगतसिंहादिने ओश्मका झण्डा

दिये और अन्य भी बीसियों वीर काम कर रहे हैं, परन्तु आज पौने अठारह वर्षोंके पश्चात् भी देवीका वही आर्तविलाप सुनाई देता है—

"हा, पुत्र लेखराम! वीर! क्या सदाकी यात्रामें ही चले गये? फिर दर्शन न दोगे?"

क्या देवीकी पवित्र पुकार बहरे कानोंपर ही पड़ता रहेगी और ब्राह्मण धर्मका पालन एक स्वप्न ही बना रहेगा!

समाप्त।

धर्मवीर लेखराम

गीतिका

लेखक :—श्रीसूर्यदेव शर्मा साहित्यालंकार काव्यमनीषी

(गीतिकात्मक मिलिन्दपाद)

१—वेद विद्याके विनोदी, बुद्धि-बुद्ध-विहार थे ।
मातृ भूके मानमोदी, धैर्य-धर्माधार थे ॥
तर्कके तिग्मांशु तारन, सत्य-सागर-सार थे ।
पूज्य-प्रभु-परदेश पालन, प्रेम पारावार थे ॥
यवन घन रावन निशाचर हेतु "सूर्य" समान थे ।
* धर्मवीर महान थे शर, लेखराम समान थे ॥१॥

२—ले दयानन्दर्षि गुरुकी, ज्ञान पुंजो पाथमें ।
कल्पतरुवत् धर्म तरुकी शास्त्र-श्रद्धा साथमें ॥
तर्कको तलवार लेकर, ओम् झंडा हाथमें ।
घोषणाकी घोर घर घर, निखनिर्वृत्ति नाथमें ॥
वेद धर्म प्रचार व्रत कर, पालते, पण प्राण थे ।
धर्मवीर महान थे शर, लेखराम समान थे ॥२॥

---

* श्लेषालङ्कारसे दो अर्थ हैं (१) रामके समान लेख ही जिनके बाण थे (२) पं० लेखराम धर्मवीर थे लेकिन बाण न रखते थे। समान = सदृश तथा स × मान = मान सहित ।

३—म्लेच्छ मतको मारना ही, मुख्य मुनिका काम था।
शास्त्र-शस्त्र सुधारना ही, श्रेय था, संग्राम था॥
पाप-पुञ्ज पछारना ही, "पथिक"का, प्रोग्राम था।
धर्म धीरज धारना ही, रामको अभिराम था॥
'आवें, अड़ें; अगुआ इधर", यह आर्यके आह्वान थे।
धर्मवीर महान थे शर, लेखराम समान थे॥ ३॥

४—शास्त्रार्थके संग्राममें, रिपुहार कर रोने लगे।
अभियोग आदि अकाममें, खंडित "खुदी" खोने लगे।
"बस कत्ल काफिरको करो" निस, निन्द्यहिय होने लगे।
अज़मते मज़हब भरो" बिष बल्लरी बोने लगे॥
शुद्धि-हित आ दुष्ट छल कर, बस गया, वह त्राण थे।
धर्मवीर महान थे शर, लेखराम समान थे।

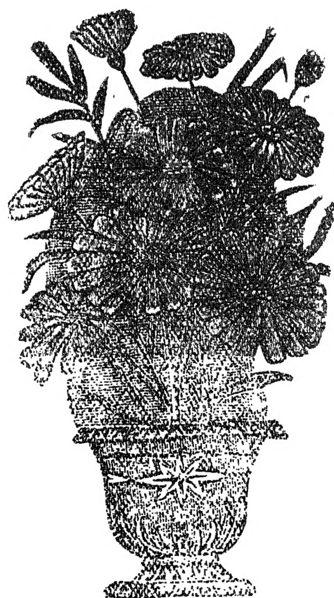
५—विश्वाससे बन कर सगा, वैरी वहीं रहने लगा।
पर पाप पंकधिमें पगा, दुशमन बना देकर दग़ा॥
खूंख्वार खञ्जर मार डट कर, भीरुता भयसे भगा।
बोधवेलि बिगार कर, हर ज्योति-जीवन जगमगा॥
मरते समय तक धैर्य धर, करते रहे श्रुति गान थे।
धर्मवीर महान थे शर, लेखराम समान थे॥ ५॥

६—धर्मवीर! सदा तुम्हारा धर्म पर ही ध्यान था।
वेद हित सर्वस्व वारा, वेद पर बलिदान था॥
आर्यकुल आदर्श प्यारा, मोद था, अभिमान था।
"सत्यका सब लें सहारा" लक्ष्य मुख्य महान था॥

"वेदपर बलिदानका बर, ल" विशेष विधान थे।
धर्मवीर महान थे शूर लेखराम समान थे ॥ ६ ॥

७—आर्य मिल सब आपके गुण, ज्ञान गौरव गायेंगे।
ऋषि-मिशन पुरा करें पुनि, आपके पद पायंगे ॥
"वीरके बलिदानका दिन, मोद मान मनायंगे।
आज यदि व्रत लें मनस्विन !, "विश्व आर्य बनायंगे" ॥
धैर्य्यधर थे वीरवर नर, आप आर्य महान थे ॥
धर्मवीर महान थे शूर, लेखराम समान थे ॥ ७ ॥

"सूय"



हिन्दुओ चेतो ।

(गजल)

हिन्दुओ ! अब धर्म रक्षाके लिये तैयार हो ।
लाल लुटते हैं तुम्हारे ख्वाबसे बेदार हो ॥
दुश्मनोंने ठान रक्खी है मिटानेको तुम्हें ।
तुम न जाने किस नशेमें मस्त हो सरशार हो ॥
जांबलब है कौम इसके दर्दका सोचो इलाज ।
जिन्दगीसे आखरश क्यों इस कदर बेजार हो ॥
रूह प्यारे "रामचन्द्र"की सुनो कहती है क्या ।
मेरी ख्वाहिश थी कि वैदिक धर्मका प्रचार हो ॥
कोई गऊ रक्षक यवन, ईसाई, हरगिज बन न पाय ।
हो गरम बाजार शुद्धी और अछूत उद्धार हो ॥
जाओ जम्मूके इलाकेमें मचा दो तहिलका ।
बेद मन्त्रोंसे मुनव्वर हर दरो दीवार हो ॥
शेर मर्दो आगरेमें जाके पहुंचो जल्दतर ।
ताकि बिछुड़े भाइयोंका फिरसे अब उद्धार हो ॥
गर्दिशे अफ़लाक जिसके सामने हो सर निगूं ।
फिर तुम्हारे पाओंमें वह गरमिये रफ़तार हो ॥
वक्त आने पर पियो जामे शहादत शौक़से ।
और ज़रूरत हो तो रुपयोंका लगा अम्बार हो ॥

थोड़ा २ दो सहारा मुत्तफ़िक़ होकर अगर ।
क़ौम दरयाये तलातुम खे़ जसे झट पार हो ॥
इसके चौतरफ़ा लगा दो बाढ़ ऐसी ख़ारदार ।
ताकि फिर गुलशनमें गुलचींका गुज़र दुश्वार हो ॥
दिल तड़प उठता है सुन २ कर "मुसाफ़िर"का मगर ।
क्या करे यह जेलमें जब बेबस और लाचार हो ॥

